जन ज्ञान [मासिक]

मार्गशीष २०४१ १६ नवम्बर से १५ दिसम्बर १९८४

स्वस्ति [illegible] अस्मिन् पथि देवयाने भूयात्
(दे[illegible]यान [illegible] मार्ग में आपका कल्याण हो।)

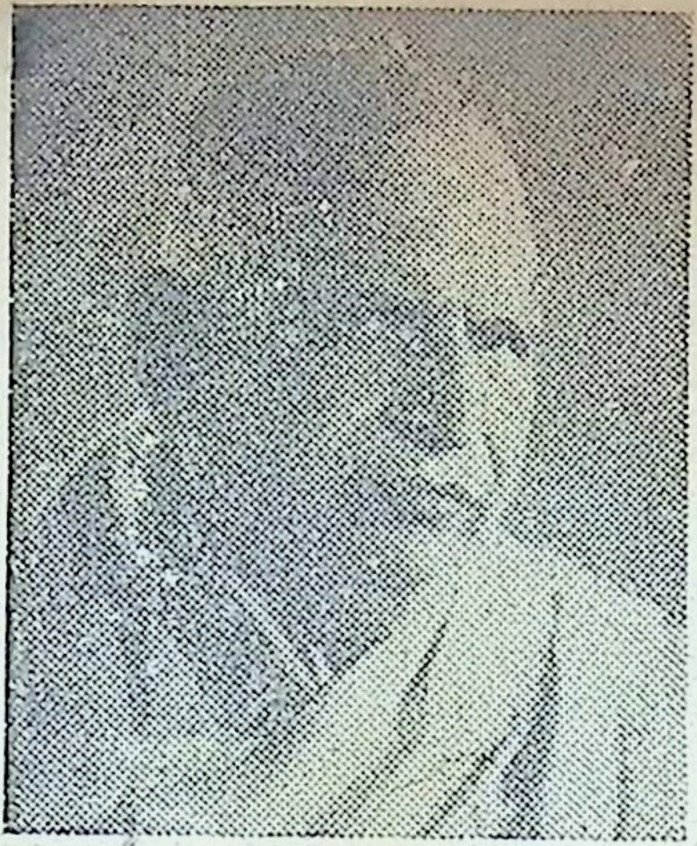

महात्मा वेदभिक्षुः

एक व्यक्ति नहीं संस्था थे जिन्होंने आजीवन सतत संघर्ष कर वेदप्रचार और हिंदू रक्षा यज्ञ में स्वयं को होम कर दिया।

जो लोग इस सफर में उनके साथ रहे, क्षण भर भी साथ चले उनके मानस पटल पर अतीत की वे स्मृतियां सदैव अंकित रहेंगी।

पर उनकी स्मृतियों-संस्मरणों को निजी कोष में ही न रखें उन्हें सार्वजनिक सम्पति बनायें

ताकि समग्र समाज उस संघर्ष यात्रा को देख-जानकर प्रेरणा ले, उनके कार्य को आगे बढ़ाये।

कृपया महात्मा वेदभिक्षुः से सम्बन्धित घटनाओं, स्मृतियों, संस्मरणों को हमें लिख भेजें ताकि उनका एक ऐतिहासिक दस्तावेज आपके समक्ष प्रस्तुत किया जा सके

हिन्दू राज्य स्थापना हेतु संघर्ष करो।

संस्थापक—स्वर्गीय महात्मा वेदभिक्षुः

सम्पादक—राकेशरानी

१५९७, हरध्यानसिंह मार्ग,
करौलबाग, नई दिल्ली-५

दूरभाष : ५६२६३९
५६४७४१
८०१२११

वार्षिक मूल्य : ३० रुपये

विदेश में : विमान से ४२ पौंड
६० डालर

समुद्री डाक से ४ पौंड, ६ डालर

आजीवन : ५०१ रुपये

विदेश में : १५०१ रु.

यह प्रति : तीन रुपये

मार्गशीर्ष संवत् २०४१

नवम्बर १९८४, वर्ष १७, अंक ७

वेदोपदेश

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तं शरीरम् ।
ओ३म् क्रतोस्मर क्लिबे स्मर कृतं स्मर॥

हमारी प्रवृत्ति भौतिक न हो इसके लिए शरीर के स्वरूप का चिन्तन कितना सहायक हो जाता है। सो मंत्र में कहते हैं। अर्थ—आत्मा अमर है तो दूसरी ओर इदं शरीरं यह शरीर भास्मान्तं—भस्मरूप परिणाम वाला है। इस मिट्टी में मिल जाने वाले शरीर के भोगों के लिए ऐसा लालायित क्यों होना? जिस ने साथ ही नहीं देना उसके लिए इतना भी क्या हाथ-पैर मारना। कितना व्यर्थ है इस नश्वर शरीर के व्यर्थ के भोगों के लिए छलछिद्र करना।

ऐ क्रतो! यज्ञादि कर्मों के द्वारा शक्ति का संचय करने वाले जीव ओं स्मर तू उस प्रभु का स्मरण कर। इसका स्मरण ही तुझे भोगों में फंसने से बचने की शक्ति देगा। क्लिबे स्मर तू इसलिए स्मरण कर कि तुझे शक्ति प्राप्त हो। प्रभु स्मरण से शक्ति प्राप्त होती है। आचार्य दयानन्द प्रातः सायं प्रभु से अपना सम्पर्क स्थापित करके अपने जीवन की बैटरी को फिर से भर लेते थे। इसी प्रकार सब मनुष्य अपने में शक्ति भरने का यत्न करते हैं, वस्तुतः इसीलिए वे महापुरुष बन पाते हैं।

इस अंक में पढ़िए ।

सम्पादकीय	४
पिता का पत्र पुत्री के नाम—	
(महात्मा वेदभिक्षु: की अमरवाणी)	११
विश्वास की हत्या	१४
आर्य सभ्यता	१७
एक और भारत देखा, भारत के उस पार —अनिल लोढ़ा	२७
नारी जाति के उत्थान में स्वामी दयानन्द का योगदान —डा० रामनाथ वेदालंकार	३३
जीवन का चरम लक्ष्य : मोक्ष —महात्मा प्रेमप्रकाश वानप्रस्थी	४०
घर लुट रहा है प्यारे ! (कविता) —डा० राजेश्वर	४३
तनावों के अनचाहे बोझ को उतार फेंकिये एम० पी० वार्ष्णेय	४४
तेरी अब खाली गागर है (कविता) पं० उदयशंकर भट्ट	४७
भारत के उत्तर-पूर्वी राज्य और आर्यसमाज —डा० प्रशान्त वेदालंकार	४९
"मुस्लिम इंडिया" की बहकी-बहकी बातें —मदनगोपाल अग्रवाल	५९
सतीत्व की रक्षा के लिए (ऐतिहासिक कहानी) —रजनीकान्त वर्मा	६५
संवर्ग विद्या (लघु कहानी) —चन्द्रदेव नारायण	७६
एक चेतावनी है उन्हें (वीर सावरकर के विचार)	८०
मानव शरीर : धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र —डा० रामप्रसाद सिंह आर्य	८१
यह धर्मनिरपेक्षता है या हठ धर्मी ? —के० पी० के उन्नी	८६
वचन की आन : वह बलिदान (कहानी) —राकेशरानी	९७
महान देशभक्त लाला लाजपतराय —अशोक प्रेमी	१०२
हिन्दुत्व : मानव कल्याण विज्ञान —आनन्द शंकर पंड्या	१०८
साम्प्रदायिकता का सही अर्थ —प्रदीप तिवारी	१११
हत्यारों का इतिहास	११७

सम्पादकीय

इन्दिरा जी का पुण्य स्मरण: शत-शत नमन

31 अक्टूबर का सूरज उगा तो प्रतिदिन की तरह किन्तु गगन में ज्यों-ज्यों अंशुमाली का रथ चढ़ता गया अंधकार की परतें गहराती गईं—भारत के गगनांचल पर। दिन ढला तो हिन्दुस्थान के लिए था मानो एक युग ढल गया और सूर्यास्त से पूर्व ही सारा देश शोक के गहन अंधकार में डूब गया। कोटि-कोटि नेत्रों में अश्रु कण छलक उठे। अनेक नयनों से गंगा-जमना की धारा प्रवाहित हो उठी। यह शोक का सागर उमड़ा उसके निधन पर जो व्यक्तित्व देश में एकता और अखण्डता का पर्याय बन गया था। वह व्यक्तित्व था श्रीमति इन्दिरा गांधी का हिन्दुत्व का सर्व पंथ समभाव उसके रक्त में समाहित था। "सर्वे भवन्तु सुखिनः" का उद्घोष उसने सुना नहीं था, बल्कि विश्व मंच पर उसके कंठ से निनादित भी हुआ था।

प्रयागराज में जहां गंगा-जमना और सरस्वती की धाराओं का संगम है, उसने 'आनन्द भवन' में बिताया था अपना बालपन। गंगा की शुचिता ने उसे मोहा था तो यमुना की रवानी भी उसे भाई थी। सरस्वती का भूमिगत शांत प्रवाह भी उसे प्रेरित करता था। इस तरह आर्यत्व की शुचिता युग की चुनौती का सामना करने के लिए यमुना की रवानी सा साहस भी था उसमें और सरस्वती सी शान्ति भी थी वह सामान्य स्थितियों में।

हिंसा के रूप में क्रूर काल ने इन्दिरा जी को हमसे छीन लिया। चेतावनी मिलने के बाद भी वे सर्वपंथ समभाव की भावना से ओत-प्रोत स्वभाव के कारण जिन सुरक्षा कर्मचारियों पर भरोसा करती रहीं, उन्होंने ही विश्वासघात कर अपनी २२ गोलियों से उनकी निर्मम हत्या कर अपने मन के जहर को सारे राष्ट्र पर उड़ेल दिया।

ऐसा नहीं कि वे हालात से बेखबर थीं। वे समझ रही थीं हालात को। शायद इसीलिए राष्ट्र पर हुए वज्रपात से एक दिन पूर्व ही तो उन्होंने एक आम सभा में अपने भाषण में, उस भाषण में जो उनके जीवन अन्तिम

भाषण था कहा था—"यदि देश की खातिर मुझे मरना भी पड़ा। तो उसके लिए मुझे गर्व होगा। मेरे खून की प्रत्येक बूंद इस देश के विकास को एक नई शक्ति देगी तथा देश सुदृढ़ और ऊर्जवान् बनेगा।"

राष्ट्र की सतत सेवा में संलग्न श्रीमती इन्दिरा गांधी पिछले अनेक वर्षों से अपने भाषण में कह भी रही थीं कि व्यक्ति का महत्व नहीं, राष्ट्र की स्वतन्त्रता एकता और अखंडता का (सर्वाधिक) महत्त्व है। देश के समक्ष उत्पन्न राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय खतरों से श्री मती गांधी पुण्य भूमि भारत—आर्यावर्त हिन्दुस्थान की जनता को सतत सावधान करती रही थीं।

इन्दिरा गांधी की नश्वर काया तो क्रूर हत्यारे ने हमारी आंखों से ओझल करदी, किन्तु उनका जीवन दर्शन अनश्वर वीरत्व का प्रतीक बन गया है। शान्ति काल में जिसका सौम्य स्वरूप सरस्वती का प्रतिमान था, वह संकट और संघर्ष की घड़ियों में दुर्गा का रूप धारण करने में भी सक्षम थी।

उसकी हत्या का यह निर्मम कांड राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय उग्रवाद का ही परिणाम प्रतीत होता है। देश में आंतकवाद और विघटन की लहर को जिन तत्त्वों ने बढ़ावा दिया था, वे आज भी घृणा के प्रचार की जगा पर चलने में बहादुरी समझ रहे हैं।

इन्दिरा जी नहां रहीं, किन्तु निर्भीकता और दृढ़ता से देशद्रोही और विघटनकारी तत्त्वों के दमन का उनका दर्शन देश के नये प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी को संकट की इस घड़ी में राह दिखायेगा। चुनौतियों का सामना करने की प्रेरणा देगा। स्वराष्ट्र के प्रति सर्व स्वसमर्पण की उनकी उत्कट अभिलाषा फिर आंकादय, जिसे उन्होंने अपना जीवत समर्पित कर साकार किया है, राष्ट्र में जन-जन के अन्तमंन को इस अधियारे में भी राह दिखायेगी।

हमारा पक्का विश्वास है कि इन्दिरा जी का यह वलिदान हमें स्व० राष्ट्र के लिए अपने रक्त की हर बूंद समर्पित करने की प्रेरणा देगा। यह देश के लिए संकट की—परीक्षा की घड़ी है। राष्ट्र के लिखे संकट का समय है इस तथ्य से कोई भी राष्ट्रभक्त इन्कार नहीं कर सकता। अब वे नहीं रहीं, उनकी वट-वृक्ष छाया सदा के लिए विलुप्त हो गई। अब उनकी प्रेरक मुस्कान और युग के अनुरूप आह्वान से राष्ट्र वंचित हो गया।

उनसे किसी के लाख मतभेद रहे हों, किन्तु कोई भी इस तरफ से नेत्र नहीं मुंद सकता कि उन्होंने भव्य और महान् भारत का जो सपना अपने नेत्रों में संजोया था, उसके लिए अपना हर दिन ही नहीं हर क्षण समर्पित किया था।

अलविदा प्रियदर्शनी इन्दिरा गांधी अलविदा भारत की अनोखी पुत्री—अलविदा संकल्प के लिए सर्वस्व समर्पण की महान् प्रतिमा—अलविदा भारत की अद्वितीय राजनेत्री जी अलविदा! विदा भारत की सुजला सुफला वरदा छवि के लिए सतत संघर्षशील साधिका अलविदा। कृतज्ञ हिन्दू राष्ट्र का अश्रु पूरित विनम्र प्रणाम।

आओ आज हम संकल्प ग्रहण करें—उसकी शहादत उसके बलिदान को समरण करें कि हम राष्ट्र रक्षा के लिए सन्नद्ध होंगे। प्रगति के रथ को रुकने नहीं देंगे।

आगे बढ़ो जोर से बोलो—
जन्मभूमि का ताला खोलो।

बीत गया दीपावली का प्रकाश पर्व। निर्बल की कुटिया में माटी के दीप जले तो साधन सम्पन्न जनों ने विद्युत् दीपों की छटा से अमावस की कालिमा को डटकर चुनौती दी। लक्ष्मी के आगमन की प्रतीक्षा में देश-विदेश में अनेक हिन्दूजनों ने अपने घर के द्वार रात—भर खुले रखे। गणपति और लक्ष्मी की मूर्तियों के समक्ष घी के दीपक जलाये। किन्तु प्रति वर्ष की भांति यह प्रकाश पर्व भी आया और उन सभी के समक्ष एक प्रश्न चिन्ह छोड़ गया, जो हिन्दू जीवन पद्धति को अंगीकार कर स्वयं को इस महान हिन्दू राष्ट्र के एक अंग के रूप में अंगीकार करते हैं चाहे वे विघ्न हर्त्ता गणेश के पुजारी हैं अथवा समृद्धि दायिनी देवी के रूप में लक्ष्मी का गुणगान करते हैं। श्री अहिंसा के अग्रदूत भगवान महावीर या गौतम बुद्ध का जयनाद करते हैं या गुरु नानकदेव की शिष्य परम्परा और 'देहि शिवा वर ऐहि मोहि शुभकर्मनते कबहूं न टरो,' के उद्घोषक गुरु गोविन्द सिंह के सिख होने के दावेदार हैं अथवा ब्रिटिश राजसत्ता के विरुद्ध हुई प्रथम सशस्त्र क्रान्ति (१८५७ का स्वतन्त्रता संग्राम) से भी एक वर्ष पहले १८५६ में ही स्वराज्य की महत्ता का उद्घोष करने वाले देव दयानन्द के अनुगामी होने का दम भरते हैं।

वह प्रश्न चिह्न यह है कि क्या ये कोटि-कोटि दीपवर्तिकाएं हिन्दू-जन के अन्तर्मन को ज्ञानालोक प्रदान कर सकी हैं? अन्तर्मन का यह दीप यदि प्रकाशित नहीं हो सका तो राष्ट्र आज अंधकार के जिस दौर से गुजर रहा है, वह अधिकाधिक लम्बा होता चला जायेगा।

स्थिति तो विषम ही है, किन्तु हम निराश नहीं हैं। आशा की एक किरण उभरी है। आपको स्मरण होगा कि हिन्दू राष्ट्र के प्रति पूर्ण समर्पण भावना से अपने जीवन का हर पल और रक्त का कण-कण समर्पित कर देने वाले महानमनीषी महात्मा वेदभिक्षु ने भारत भूमि, आर्यावर्त्त इस हिन्दुस्थान में हिन्दू राज्य अर्थात् सच्चे सम्प्रदाय निरपेक्ष राज्य का स्वप्न देखा था। मर्यादा पुरुषोत्तम राम, योगेश्वर श्रीकृष्ण की जन्मभूमियों की मुक्ति और काशी में विश्वनाथ के मन्दिर के स्थान पर विदेशी आक्रान्तासा ने जो तामीर करायी थी, उसको हटाने के लिए उन्होंने १५ जनवरी १९८४ तिथि की निश्चित घोषणा करके राष्ट्र व्यापी आन्दोलन की योजना बनाई थी। वे तो अपनी नश्वर काया को अनश्वर वीरत्व में परिणित कर चिर विदाई ले गये। किन्तु आज उन्हीं की आवाज कोटि-कोटि कंठों से इन शब्दों में गूंज उठी है। "आगे बढ़ो जोर से बोलो—जन्म भूमि का ताला खोला।" वे आज यदि हमारे बीच होते तो इस आन्दोलन की अग्रिम पंक्ति में ही चल रहे होते।

यह भी सच है कि उनका यह आह्वान नया नहीं था—किन्तु इस तथ्य को तो स्वीकार सभी करेंगे कि जब सेक्युलरिज़्म के नाम पर अल्पसंख्यक तुष्टिकरण को ही देश के अधिकतर दल अपना ईमान मानकर इस देश की प्राण वायु हिन्दुत्व को ही साम्प्रदायिकता का पर्यायवाची जताने में एक-दूसरे से होड़ ले रहे थे तो स्थिति नितांत ही विषम हो रही थी। दो राष्ट्रों के सिद्धान्त को व्यावहारिक तौर पर मान्यता प्रदान कर भारत भूमि का विभाजन मानकर पाकिस्तान की स्थापना पर सहमत होने वाले नेता अपनी पराजय पर शब्द जाल की चादर डालकर सचाई को छिपाने के लिये सारी स्थिति का दोष हिन्दुत्ववादियों के मत्थे मढ़ने का कौशल दिखा रहे थे। स्वातन्त्र्यवीर सावरकर! देवतास्वरूप भाई परमानन्द, अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द सरीखे हिन्दुत्व के सजग प्रचरियों की ही नहीं अपितु इस आर्य भूमि के गत गौरव के उद्‌गाता महर्षि दयानन्द द्वारा "संसार के उपकार" के लक्ष्य को सामने रखकर सक्रिय आर्य समाज तक पर साम्प्रदायिक विद्वेष का प्रचार करने का दोषारोपण फैशन बन गया था।

इस तथ्य से मुंह मोड़ा जा रहा था कि रिलीजन (मजहब) को हिन्दू ने सदैव व्यक्तिगत मामला माना है । इसी कारण हिन्दुत्व कोई साम्प्रदायिक विचारधारा नहीं है अपितु वह सदैव ही सेक्युलर (पंथ निरपेक्ष) रहा है। इसीलिए हिन्दू स्टेट (हिन्दू राज्य) की कल्पना मजहबी हकूमत की कल्पना से सर्वथा परे है। हिन्दू स्टेट का अर्थ ही सैक्यूलर स्टेट है और जो हिन्दू स्टेट नहीं होगी वह अधिक समय तक सैक्युलर स्टेट रह ही नहीं सकती। किन्तु अपनी पराजय का दोष दूसरों के मत्थे मढ़ने वाले सूरमाओं ने अलगाव और मजहबी भेदभाव के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर कर स्वय को पाक दामन जताने और बताने के लिए भारत के विभाजन का अंतिम क्षण तक प्राण-पण से विरोध करने वाले हिन्दू महासभा के वीर सावरकर सरीखे स्वातन्त्र्य समर के अजेय सेनानी योद्धा की छवि भी एक साम्प्रदायिक नेता के रूप में अंकित करनी शुरू कर दी थी।

हिन्दू और मुसलमान के आधार पर देश का विभाजन स्वीकार करने वालों ने इस तथ्य की उपेक्षा कर दी कि ईमानदारी का तकाजा यह था कि जिन लोगों ने पाकिस्तान मांगा था वे विभाजन के बाद अपने मांगे हुए भमर में चले जायें और यदि नहीं जाते तो देश की मुख्य धारा में सम्मलित हो जायें। मुस्लिम लीग ने पाकिस्तान प्राप्त कर लिया तो भारत हिन्दू राज्य स्थापित होना ही चाहिए था। परन्तु फिर भी हिन्दू होने के कारण हमारे नेताओं ने अपनी उदारता की भावना का प्रदर्शन करते हुए ऐसा नहीं किया और कहा कि "रिलीजन" को राजनीति से अलग रखा जाए।

जो कुछ भी हुआ था उसके बाद भी इस देश में साम्प्रदायिकता की आग सुलगती ही रही। ऐसा क्यों हुआ : इस प्रश्न का उत्तर भी स्वतः ही स्पष्ट है। वह यह कि भारत विभाजन की मांग करने वाले तत्त्वों में से जो तत्त्व पाकिस्तान बन जाने के बाद भी भारत में ही रह गये उन्हें अच्छा हिन्दुस्थानी बनाने का प्रयास किया जाता। किन्तु धर्मनिरपेक्ष मार्का नेताओं ने ऐसे प्रयास करने की बजाय उनके तुष्टी करण को अपना ईमान बना लिया। इस मोर्चे पर कांग्रेस ही नहीं अपितु गैर कांग्रेसी हिन्दू नेता भी समान रूप से सक्रिय रहे हैं। उनमें से कुछ ने जो स्वंय को भारतीयता का प्रबल पक्षधर जताते और बताते रहे, शाब्दिक तौर पर तो यह यह उद्घोषित किया कि जो मुसलमान स्वयं को भारत निष्ठा यहां की भूमि को मातृ भूमि और पितृ भूमि मानेगा वह हिन्दू ही माना जायेगा। किन्तु उनका यह उद्घोष शब्दों तक ही सीमित रहा। अमल में इसे नहीं लाया जा

सका। हिन्दू और मुसलमान के बीच की दूरी कम करने के लिए सामाजिक स्तर पर प्रयास तो हुए लेकिन अलगाव बढ़ता ही गया। चुनाव में वोटों की प्राप्ति को ही एक मात्र लक्ष्य बनाकर अल्प संख्यकक्षों को हर उचित-अनुचित मांगे मानने में कांग्रेस और गैर कांग्रेसी नेताओं में होड़-सी ही लगा रही है। परिणामत: मजहबी आधार पर बहुसंख्यक और अल्प-संख्यक का भेद मजबूत होता गया। अल्पसंख्यकों को अलगाव में ही कोड) प्रतीत होने लगा।

इस जटिल परिस्थिति से राष्ट्र को उबारने के लिए अमर हुतात्मा स्वामी श्रद्धानन्द के "हिन्दू संगठन" और स्वातन्त्र्य वीर सावरकर के सबल हिन्दू राष्ट्र के गठन के नाद को ही महात्मा वेदभिक्षु ने पुन: गुंजाया था। उन्होंने अपने लेखों और भाषणों द्वारा इस तथ्य को स्पष्ट किया था। कि साम्प्रदायिकता क्या है? उन्होंने बताया था कि जब हम राष्ट्र हित को सर्वोच्च और सर्वप्रथम न रखते हुए किसी एक पंथ या जाति अथवा दल जो राष्ट्र का ही अंग है, के हित को प्रमुखता प्रदान करते हैं तो हम साम्प्रदायिक हो जाते हैं।"

इसी लिए उन्होंने "हिन्दू रक्षा समिति" के उद्देश्य में से एक उद्देश्य सभी देशवासियों के लिए एक समान नागरिक संहिता (कामन सिविल लोटी लागू करना घोषित किया है।

सन् १९५४ में गांधी जयन्ती (दो अक्टूबर) के समाचार-पत्रों में भारत के तत्कालीन गृहमन्त्री डॉक्टर कैलाशनाथ काटजू का एक लेख प्रकाशित हुआ था, जिसमें उन्होंने मुसलमानों को यह सलाह दी थी कि वे स्वयं ही हिन्दुओं के उन धर्म स्थानों को हिन्दुओं के हवाले कर दें, जिन पर मुग़ल काल में मस्जिदें खड़ी कर दी गई थीं। मुसलमानों में भी ऐसे लोग हैं, जो यह मानते हैं कि यह सलाह व्यावहारिक और ग्राह्य है। इन दिनों इस सुझाव का विरोध करने वालों का तर्क यह है कि यह मांग चुनाव में राजनैतिक लाभ उठाने के लिए की जा रही है और सम्बन्धित आन्दोलन काल भी (उनके विचार में) यही है। यदि इस दलील को सही मान लिया जाये, तो भी ये धर्म स्थान हिन्दुओं को लौटा दिये जाने चाहिए, ताकि कोई दल इस प्रश्न को चुनाव के दौरान उठाने की स्थिति मे ही न रहें।

यह प्रश्न चिरकाल से लटकता चला आ रहा है। लोक सभा में इसे उठाया जा चुका है। इसे लटकने देना किसी भी समुदाय के हित में नहीं। मुसलमानों को स्वयं ही चाहिए कि वे हिन्दुओं की इस मांग का समर्थन

करें। विभाजन के बाद जब हिन्दू शरणार्थियों ने खाली मस्जिदों में शरण ली थी, तब महात्मा गांधी ने उन मस्जिदों को खाली कराने के लिए अनशन प्रारम्भ कर दिया था और मौलाना अबुलकलाम आजाद ने मांग की थी किसभी मस्जिदें खाली कर दी जायें। इस पर तत्कालीन प्रधानमन्त्री जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि "किसी को यह कहने की आवश्यकता ही न पड़नी चाहिए कि ये मस्जिदें खाली करदी जाये। जिन्होंने मस्जिदों में शरण ले रखी है, उन्हें किसी के कहे बिना स्वयं में मस्जिदें छोड़कर चले जाना चाहिए।

अब मुसलमानों को भी चाहिए कि वे बिना किसा आन्दोलन के स्वयमेव इन धर्म स्थानों को इनके वास्तविक अधिकारी हिन्दू समाज लौटा दें।

मेरी गोरखपुर यात्रा

सताईस अक्टूबर से ३१ अक्टूबर तक आर्य समाज साहब गंज, गोरखपुर का ४१वाँ वार्षिकोत्सव था। आर्य समाज के मंत्री श्री रमेश प्रसाद गुप्त ने मुझसे एकाधिक बार अनुरोध किया कि मैं, दो दिन के लिए ही सही, इस उत्सव पर अवश्य आऊं। मैं इस अनुरोध को टाल न सकी, और २६अक्टूबर सांय ७॥ बजे दिल्ली से गोरख पुर रवाना हुई और अगले दिन प्रातः ६बजे वहां पहुंची।

आर्य समाज मंदिर रेलवे स्टेशन से मुझे जीप में जलूस के साथ जय जयजय के नारों के बीच ले जाया गया। जमाते इस्लाम की स्थानीय शाखा ने नगर में जगह-जगह पोस्टर लगाए थे कि "राकेशरानी को गिरफ्तार करो और उसे मौत की सजा दो।,,

जलूस में भाग लेने वालों ने इस मांग का यह सटीक उत्तर दिया कि—„राकेशरानी आ गई! हिम्मत हो तो उसे गिरफ्तार कराओ और मौत की सजा दो।"—उत्साह इतना अधिक था कि नारे थमने का नाम नहीं लेते थे। रात की सभा में मैंने सामयिक परिस्थितियों पर अपने विचार प्रकट किए।

जुलुस में करीब ४० बहनें और इतने ही भाई नारे लगाते चल रहे थे। अगले दिन प्रातः पाणिनी कन्या महाविद्यालय, वाराणसी, की आचार्या बहन प्रज्ञा देवी शास्त्री के ब्रह्मत्व में हवन यज्ञ हो था। कन्याओं द्वारा मंत्र पाठ का दृश्य देखते ही बनता था। पंड़ित शांति प्रकाश शास्त्रार्थ महारथी

ने ओ३म् ध्वज फहराया और ओ३म् शब्द की बहुत सुन्दर व्याख्या की। मैंने ईश्वर और वेद विषय पर अपने विचार प्रकट किये, तथा प्रेरणा दी कि प्रत्येक हिन्दु के घर में अपना धर्म ग्रन्थ वेद अवश्य होना चाहिए।

मध्यान्ह भोजन के बाद हिन्दु रक्षा समिती के कार्य-कर्ताओं के साथ विचार-विमर्श हुआ।

तिसरे पहर दो बजे महिला सम्मेलन हुआ। बहन प्रादेवी ने बहनों को पारिवारिक जोवन के सम्बन्ध में बहुत सुन्दर शिक्षा दी। मैंने भी अपने विचार प्रकट करते हुए कहा—कि "स्वामी दयानन्द ने नारी जाती अर अपने उपकार किये। यह उन्ही की कृपा का फल है कि एक नारी इन्दिरा गांधी भारत की प्रधान मंत्री बनो। और मैं आपके समक्ष मंच पर उपस्थित हूं।

रात को मुझे दिल्ली लौटना था उसी मनोदशा में मैंने एक सा वंजनिक सभा को सम्बोधित किया, जिसमें मैंने हिन्दु समाजकी वर्तमान दशा पर प्रकाश डाला और कहा कि "देश की सभी समस्याओं का सभाधान हिन्दू राष्ट्र की स्थापना मेंसन्निहित है।,,

गोरख पुर यात्रा के दौरान मुझे सर्वश्री द्विजेराज शर्मा, यसोनन्द केशर वानी, अशोक कुमार लोहीया और हरद्वार प्रसाद "भंवर" सदृश्य कार्यकर्ताओं का उत्साह देखकर प्रसन्नता हुई। यदि हिन्दु समाज को श्री द्विजराज श.ा जैसे उत्तसाही और समर्पितय कार्यकर्ता मील जाएँ तो देश की काया ही पलट सकती है

धर्म प्रचार मेंभक्ती संगीतका अपना महत्व है। गोरख पुर में सर्वं श्री ओम प्रकाश वर्मा और सोहन लाल आर्य पथिक का मधुर संगीत सुनने को मिला

इस प्रकार मेरी गोरख पुर यात्रा संपन्न हुद और मैं अगले दिन दो पहर केसमय वापस दिल्ली लौट आइ जहाँ भारी कार्य भार मेरी प्रतीक्षा कर रहा था।

ईश्वर परिभाषा

जो अविद्यादि क्लेश, कुशल अकुशल, इष्ट अनिष्ट और मिश्र फलदायक कर्मो की वासना से रहित है, वह सब जीवों से विशेष ईश्वर कहलाता है— —महर्षि दयानंद

स्व० महात्मा वेदभिक्षु की अमर वाणी

पिता का पत्र, पुत्री के नाम

प्रिय आभा।

अनेक झंझावतों के साथ १९८० भी जा रहा है, और इस समय तुम हमसे इतनी ही दूर हो, जितनी भारत के भाग्य से आशा। आशा और आभा में थोड़ा ही अन्तर है न। आज ६० करोड़ भारतवासी जिस आशा के सहारे जीवित हैं उसकी पूर्ति के लिए त्याग, बलिदान और सर्वस्व समर्पण की जिस भावना की आवश्यकता है वह कहां है? वह दीप्तिजो निर्धन को धन दे सके? ठुकराए हुओं को गले लगा सके।

एक अंधेरादेखता हूं तो देखता ही रह जाता हूं। शायद तुम सोचो कि मेरा मस्तिष्क ही अब अंधेरा देखने का स्वभाव बना बैठा है, किन्तु बात ऐसी नहीं है। मैंने जीवन को बहुत पास से देखा है। उसकी कटुता भी देखी है और मिठास भी, किन्तु आज तो ऐसा लगता है कि आजादी के ३३ वर्षों ने मिठास को पूरी तरह खो दिया है, जीवन एक चक्की—मशीन बन गया है, केवल पैसा कमाने का यंत्र।

यह सब क्यों हो रहा है, कैसे हो रहा है? इसका विश्लेषण तुम भली भांति कर सकोगी, क्योंकि तुम नयी पीढ़ी की प्रतिनिधि हो।

आज स्थिति यह है कि यदि त्रिपुरा में नर संहार होता है तो राजधानी का शासन या नागरिक उसे अनदेखा कर देते हैं। उनकी रंगरेलियां जारी रहती हैं। जिन्दा जलते मनुष्य, भूख से तड़पते बच्चे, पैसे के लिए तन बेचती और सिसकती नारी, एक दूसरे का खून पीने के लिए तैयार इन्सान क्या आजाद भारत के हर नागरिक के लिए एक थप्पड़ नहीं हैं।

कोई मुसलमान है, तो कोई ईसाई, कोई सिख है तो कोई तमिल, कोई बंगाली, कोई आसामी है तो कोई गुजराती। सोचता हूं भारत में कोई भारतवासी भी है या नहीं। इस देश में देवताओं के वेश में राक्षस तो बहुत दीख रहे हैं पर कोई देवता खोजने पर भी तो नहीं मिलता।

मैं सारे भारत में एक आग जलती देख रहा हूं। यह आग स्वार्थ की,

गद्दी की, भूख ज्वाला बनकर देश के भविष्य को निगलने के लिए बढ़ रही है। नयी पीढ़ी……हा-हा-हू-हू-ही-ही के सरगम पर अपने को भुलाने का या ध्वंस के सृजन का उपक्रम कर रही है। गंगा का पानी आज विष घोल रहा है। स्वतंत्रता, समानता, एकता, प्यार शब्द केवल कोश की शोभा बढ़ा रहे हैं। अच्छा तुम ही सोचो, क्या तुम्हें कोई दीखता है जो भारत के लिए अपने को मिटाने को तैयार हो।

मैंने कई बार तुम्हें और तुम्हारे जैसे अनेक नयी पीढ़ी के लोगों को बलिदान की प्रेरणा दी है। पर सिवाए हंस देने-भर के किसी गम्भीरता से सोचा है। क्यों उठाएं कष्ट? क्यों न हम भी मौज करें? इस चिन्तन ने देश को जर्जर बना दिया है, और मुझे भी, क्योंकि मैं अपने को कभी अपने रूप में देख ही नहीं पाया।

तुम अपने मन की गहराई में जीवन के सत्य को देखो तो सही, यह जीवन और वर्तमान का सब कुछ क्या हमारे साथ जाएगा? क्या धरती का विकास व्यक्ति के ठहराव से बधा है? व्यक्ति उठता है तो धरती पूजा के गीत गाती है। चरित्र-सत्य-प्यार-सबको अपना समझने की भावना और सच्चाई के लिए प्राण अर्पित करने के भाव ही क्या धरती का शृंगार नहीं करते?

मैंने सब को सदा समान समझा है। तुममें और एक अनजानी बिटिया में मैं भेद करने की स्थिति में अपने को नहीं पाता। सब एक हैं, इसलिए तो आज मन की पीड़ा के गीत तुम्हें सुना रहा हूं—आभा जी!

एक दिन मैं नहीं रहूंगा, और तुम रहोगी, फिर एक दिन तुम भी नहीं रहोगी कोई और रहेगा, और यह प्रवाह करोड़ों वर्षों तक अवाध गति से चलता रहेगा। किन्तु वे संवेदनाएं, चिन्तन-धाराएं सदा रहेंगी उन्हें रहना भी चाहिए, क्योंकि वे नहीं रही तो फिर मनुष्य नहीं रहेगा। वह कुछ और बन जाएगा।

मेरा प्रयत्न रहा है कि हम उन चिन्तन मूल्यों को जीवित रखने के लिए जिएं। हम देश के ६० करोड़ नागरिकों के जीवन में आशा की आभा तरंगित करने के लिए जिए। हमारा प्रत्येक पल पुलक से प्रभावित हो। हमारी गरिमा धन में नहीं, संग्रह में नहीं, त्याग में है, और वह त्याग मरता जा रहा है। क्या तुम सोचोगी कि वह कैसे जी सकेगा? कैसे उभर सकेगा?

प्राणों की वीणा तुमने कभी देखी है। कभी उसके संगीत की लहरों की झंकृतियां तुमने सुनी हैं? बोलो और बताओ तो कि क्या कभी निशा की

गहन मध्य रात्रि में तुमने आशा के तारों पर थिरकते भावों का नृत्य देखा है। यदि नहीं तो मैं चाहूँगा कि तुम उसे देखने का प्रयत्न करो।

तुम कल का आशा हो, तुम्हारे साथ की पीढ़ी बहुत भटक रही है। मैं चाहता हूं कि १९८१ में तुम इस भटकन को रोकने की शक्ति मानस में संचित करो। तुम अजेय बनो और कुछ ऐसा करो कि मैं ही नहीं, सारा देश तुम पर अभिमान कर सके। यह आशा मैं तुम से और तुम्हारे द्वारा सारी नयी पीढ़ी से करने की सोचता हूँ। एक बुझते दीपक को कौन नमस्कार करता है उसकी ओर कौन आता है?

मैं १९८० हूँ और तुम १९८१। मैं बीता हुआ कल और तुम आने वाला आने वाला कल जो सौभाग्य उदित करने के लिए उभरे और अपने साथ उन सबको बिठाए-उठाए जो भटके राही हैं।

वैसे तो आभा जी! मुझे जितनी निराशा नयी पीढ़ी ने दी हैं उतनी किसी ने नहीं। नयी पीढ़ी नारे देती है, बातें करती है और काम के नाम पर दम तोड़ती है। वह घोषणाओं में विश्वास रखती है, उन्हें पूरा करने में नहीं।

तुम इतना लम्बा पत्र पढ़कर ऊब गई होगी, क्योंकि तुममें मन की भाषा पढ़ने की विद्या का चाव नहीं जागा है। किन्तु मैं तुम्हें नहीं १९८१ को यह पत्र लिख रहा हूँ। तुम केवल प्रतीक हो। अगला वर्ष भारत को किधर ले जाएगा? स्वार्थी और लोलुप राजनीति के दलाल, कुर्सियों से चिपके मंत्री नामधारी, बगुला भगत, धर्म के नाम पर दुकान चलाने वाले गिरगिट और भोगवाद की सर्वनाशकारी तरंगों में झूलती नई पीढ़ी—इन सबसे टकराने की सलाह देने वाला मैं—हो सकता है तुम्हारी दृष्टि में पागल होऊं, किन्तु समय आयेगा जब मेरी वाणी ऐतिहासिक दस्तावेज की भांति सत्य को उजागर करेगी।

मुरादाबाद से लेकर त्रिपुरा तक, बागपत से लेकर कन्याकुमारी तक की पिसती नारी पर दृष्टि डालो। और प्रिय आभा! भविष्य को बदलने के लिए अपने को जला दो—जिन्दा जला दो। तिल-तिल कर जलो। संघर्ष करते हुए जलो। मेरी नई पीढ़ी की प्रतिनिधि तुम क्रांति की मशाल थामकर १९८१ का स्वागत करो, स्वयं जलने और सबको प्रकाश देने के लिए।

आगामी चुनावों में उन्हीं उम्मीदवारों को वोट दें जो हिन्दू राष्ट्र बनाने का संकलप लें

विश्वास की हत्या !

"आज दो हत्या हुई हैं एक इन्दरा जी; की और दूसरा आदमी पर आदमी के विश्वाश की।"

ऑल इन्डिया ईन्स्टीट्यूट ऑफ मेडीकल साइन्सेज छात्रा का यह कथन हमें झकझोर जाता है

अब तक तो सुनते थे कि गिरने की कोई सीमा नहीं होती पर अब देखा भी कि रक्षक कैसे भक्षक बनकर इतने निचे गीर गये कि आदमी का आदमी पर से विश्वास ही जाता रहा। विश्वाश कि इस हत्या ने सारे देश को अविश्वास और संदेह के अधेरे में डुबो दिया। एक स्याह अन्धेरा जो आत्म-घाती भी हैं और परा को घाती भी।

अन्धेरे की अपनी चाल होती है। और जब समय अन्धेरे की चाल चलने लगता है तो उजाले पक्षधर ऐसे ही छलनी हो जाते हैं जैसे श्रीमती इन्दिरा गांधी हो गई।

उन्हें आतन्कवाद की उसी आग ने लील लिया जो उनसे पहले लाला जगत नारायण उनके पुत्र रमेश चन्द्र जैसे सैंकड़ो लोगों को जला चुकी थी। और यह आग अभी बुझी नहीं है। इस देश की सबसे बड़ी नेता को काल कवलित करने के बाद भी आग की हविस अभी बाकी है। इसका सबूत है ब्रिटेन में बैठ कर खुशी मना रहे खालिस्तानी नेता जगजीत सिंह चौहान का बयान जिसमें उन्होंने कहा है कि "यह तो अभी शुरुआत है।" अगर यह शुरुआत है तो इसका अन्त कहां होगा ?

विदेश में बैठे ये खालिस्तानी नेता विदेशी शक्तियों की मदद लेकर किस तरह भारत को टुकडे-टुकडे करने पर आमादा हैं; यह जग-जाहिर हो गया है। और यह भी कि भारत के सिक्खों का नेतृत्व इस विदेशी सिक्ख नेतृत्व के आगे या तो लाचार है या फिर उसके साथ है। वरना क्या भारत की प्रधान मंत्री की हत्या की पंजप्यारों द्वरा निंदा नहीं की जाती ? क्या अकाली दल इन्दिरा गांधी को धर्मनिरपेक्षता के लिए शहीद होने का तमगा नहीं देता ?

पिछले चार वर्ष में जो हुआ और किया गया उस सबने अन्दर हि अन्दर जिस सम्प्रदायिक विद्वेष को जन्म, दिया उस विषधर ने किस तरह इस देश की शांति और सहभागिता को डस लिया, यह सब श्रीमती गांधी की हत्या

और उसके बाद की घटनाओं से सामने आया है।

एक मां के दो बेटे आमने-सामने खडे हो गए, एक दूसरे के खून के प्यासे बन गए। पन्जाब में उनका बस चला तो बसों से उतार कर गैर सिक्खो को भून दिया और देश भर में सिक्खों ने इन मौतों पर कोइ दुःख या खेद प्रकट नहीं किया पर जब सैनिक कोर्रवाई में राष्ट्रद्रोही मारे गए तो शोक मनाना शुरू कर दिया और शोक तब तक चला जब तक देश की प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी कीहत्या नहीं हो गयी। भिन्डरांवाले के निधन को लेकर तो सिक्खों ने दिवाली नहीं मनाइ पर श्रीमती गांधी की हत्या होने पर मिठाइ बांटते, दीये जलाने देखे गए। बस यहीं ज्वालामुखी फूट पड़ा और उसने अन्हिसा की प्रतिक्रिया में भयानक हिन्सा जन्म को दे दिया।

हिंसा चाहे हिन्दु करे या कोइ और करे, वह सर्वथा अमानवीय होती है निन्दनीय होती है किन्तु संगठित योजनाबद्द हिन्सा की प्रतिक्रिया स्वरुप जन भा असंगठित आक्रोश युक्त हिन्सा को मरता क्या न करता वाली लाचारी भी कहा जा सकता है।

और अब इस प्रतिक्रिया की फिर प्रतिक्रिया होगी पंजाब में, फिर उसकी प्रतिक्रिया कही और............। हिन्सा क्रिया -प्रतिक्रिया का एक दुश्चक्र होती है जो किसी को कुछ नहीं देती, हरेक से बली लेती चली जाती है। धर्मान्धता, मदान्धता और शक्ती के स्वामी इस सत्य को तब तक नहीं समझते जब तक वे स्वयम इस दुश्चक्र की लपेट में नहीं आ जाते खून का रंग कैसा होता है ? खून बहना कितना कष्ट दायक होता है ? प्रियजनों का बलि चढ़ जाना कैसा होता है ? ये सब अहसास अपने पर पड़े बिना नहीं हो पाते।

और अब जब हर पक्ष हताहत है, हर समुदाय आहत है, तब इस बात की ज्यादा जरुरत है कि हिंसा के दावानल की वास्तविकता को देख और जान लेने के बाद हर पक्ष समझदारी का परिचय दें, शांति और सह-अस्तित्व के मानविय मूल्य को मान्यता दे, जिवन में उतरें। कोई भी पक्ष बंदुक-तमचों की भाषा में बात न करे। अपना पक्ष शक्तिशाली बनाने के लिए शब्द से बड़ा कारगर हथियार अगर तोप-तमन्चे होते तो क्यों हर युद्ध के बाद समझौते होते ? क्यों हिंसा के बाद शांति समितियां बनती, शांति मार्च होते ?

श्री मती इन्दिरा गांधी की हत्या के बाद देश जिस खतरनाक मोड़ पर आ खड़ा हुआ है वहां खड़े होकर किसी से भा साफ-साफ बेलाग बात कहना दुष्कर है पर इतिहास के उदाहरण से सबक सीखने का आग्रह किया

ही जाना चाहिये। चाहे सहजधारी हिंदू हों या केशधारी हिंदू (हम तो सिक्खों को हिंदू ही मानते हैं, वे न माने तो क्या करें? सभी को अलगाव वाद हिंसा, विघटन और भेदभाव मिटाने के लिए कहना होगा। हरेक को अपने किये का तार्किक विश्लेषण और आत्मावलोकन करना ही चाहिये।

सिक्खों को यह सोचना ही चाहिये कि क्या अकाली आन्दोलन देश की अखन्ड़ता की कीमत पर की जा रही राजनीती नही है? क्या पंजाब का आतन्कवाद जायज था? क्या श्रीमती गाँधी की हत्या पर उनके कुछ लोगों का खुशी मनाना उचित था? क्या ग्रन्थियों द्वारा श्रीमती गांधी की हत्या की निंदा से इन्कार करना तार्किक है, नैतिक है?

दूसरी ओर हिंदूओं को भी आगे आकर साम्प्रदायिक विद्वेष मिटाकर केशधारी हिंदूओं के पुनर्वास में सहयोग देना चाहिये। उन्हे देश की सत्ता में अविश्वाश करने का कोई मौका नही देना चाहिये और यह समझना चाहिये कि खून किसी का भी बहे, वह आदमी का ही खून होता है।

इन सारे हादसों को भुगतने के बाद यदि अब पजाब में सहजधारी हिंदु सुरक्षित हो जायें और सारे देश में केशधारी हिंदु सुख शांति से रहें तो श्रीमती इन्दिरा गांधी का यह बलिदान सार्थक होगा।

आशा की जानी चाहिये की समय सभी को यह सबक सिखायेगा।

क्या आप जानते हैं ?

१—कि लन्दन के सहकारी राडार प्रतिष्ठान ने सिलाई के समय अंगुली के पहने वाले अंगुश्ताने के बराबर राडार सैट बनाया है। इसका महत्त्व इसी से परिलक्षित हो जाता है कि इसके द्वारा अंधे, पुलिसवाले तथा मोटरचालक भी अंधेरे में देख सकेंगे। इससे भी अधिक आश्चर्य यह है कि इसका एक छोटा नमूना प्रयोग में लाने से (रोगी द्वारा इसे निगल लेने से) डाक्टर रोगी के शरीर की प्रक्रियाओं के विषय में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर सकता है।

२—कि कारखानों, गली, कूचों और औद्योगिक क्षेत्रों कि निवासियों के लिए वैज्ञानिकों ने एक ऐसा 'एन्जाइम' निकाला है जो अपने तीव्र उत्प्रेरक किया द्वारा पैट्रोलियम चलने से उत्पन्न सल्फ़यूरस एसिड और सल्फयूरिक एसिड गैसों के विकार को नष्ट कर देता है।

आर्य सभ्यता : कितनी भारतीय, कितनी सार्वभौमिक ?

—राधेश्याम यादव

आर्य सभ्यता के प्रति प्रत्येक वैदिक धर्मी गौरव की भावना रखता है। इस सभ्यता की महत्ता और गरिमा से तो किसी को भी इन्कार नहीं है किन्तु इस सम्बन्ध में अनेक मत भी विचारक व्यक्त करते रहे हैं। यहां भी प्रस्तुत है एक मत।

आवश्यक नहीं कि हम लेखक के सब विचारों से सहमत हों।

—सम्पादक

आर्य सभ्यता का बहुत सारा इतिहास उसके ज्ञान, विज्ञान, दर्शन और कर्मकाण्ड के रूप में हमारे सामने है। लेकिन कई पहलू हमारे सामने उजागर नहीं हैं। कुछ हमारी मानसिक जड़ता के कारण, कुछ पश्चिमी सभ्यता द्वारा आरोपित पूर्वग्रहों के कारण। इन्हीं दो कारणों से आर्य सभ्यता के प्रत्यक्ष या अज्ञात पहलुओं की सही खोज भी नहीं की जा सकती। विश्व में अनेक स्थानों और स्तरों पर आर्य सभ्यता के काफी कुछ प्रमाण हैं। यदि हम उन्हें उनके संदर्भ में देखें तो वे सही संदर्भ भीहमारे पास मौजूद हैं यदि हम उनकी उपेक्षा न करें तो। पर हम अपने दृष्टिकोण से इतिहास की दिशा में आगे बढ़ना ही नहीं चाहते अपितु पश्चिमी दृष्टिकोण से अपनी ओर बढ़ना चाहते हैं (जिसका अर्थ है पहले विस्थापित होना, फिर स्थापित होना।) उदाहरण के लिए काल-गणना ही ले लीजिए। हमारे पास अपनी पुरानी काल गणना है। सबसे पुराने, राम-संवत्, कृष्ण-संवत्, युधिष्ठिर संवत तथा बुद्ध सवत् हमारे पास धरोहर के रूप में है

जिनका हमारे इतिहास से सीधा सम्बन्ध है। लेकिन हम आज आजादी के ३७ वर्ष बाद भी अपने नये और पुराने इतिहास को ईसा की पैदाइश से जोड़े रखना चाहते हैं, जैसे बुद्ध का काल लगभग ५०० ईसवी पूर्व (यही

हमारी इतिहास पुस्तकों और शोध-पत्रों में लिखा जाता है।) हमारी यह विस्थापित व्यक्ति की सी और लम्बी मात्रा, कि गलत सिरे से चलकर हम सही सिरे पर आएं, नितान्त उपहासास्पद और अविवेक पूर्ण है, जबकि सही दिशा में कहीं ज्यादा सरल है।

(फिर पश्चिमी दृष्टिकोण से आगे बढ़ने पर हमें जुड़ी हुई शृखंला के बजाय टूटी बिखरी हुई शृखलाएं ही अधिक मिलती हैं जो पाश्चात्य सभ्यता के अज्ञान का ही परिणाम है। वे अपने अतीत की खोज में (क्योंकि उन्होंने अपना वर्तमान सुदृढ़ कर लिया है और अब उन्हें अपना अतीत चाहिए) इधर-उधर भटक रहे हैं। लेकिन हम जो भटके हुए नहीं थे। उनकी शक्ति और-गरिमा के रौब में आकर, फिर से उनके साथ भटकने की अविवेकपूर्ण भूल कर रहे हैं। यहां भी एक उदाहरण लीजिए—पश्चिम के लिए ईसाई सभ्यता ही सर्वोच्च सभ्यता है और लातीनी तथा यूनानी सभ्यताएं उसकी अंतिम पृष्ठ भूमि हैं। लेकिन वे अब जाकर धीरे-धीरे यह स्वीकार करने पर आ रहे हैं (क्योंकि इसके अलावा और कोई चारा नहीं है) कि ये सभ्यताएं भी मिस्र और पश्चिमी एशिया की आसुरी संस्कृति की उपज हैं। लेकिन मिस्र और पश्चिम एशिया से आगे, भारत तक वे अब भी अपने में हिचकते हैं हालांकि जान चुके हैं कि भाषा से लेकर वर्तन-भाण्डों तक वे पुरानी आर्य सभ्यता के ऋणी हैं।

लेकिन आर्य सभ्यता के सही इतिहास की दिशा में आगे बढ़ने से पहले हमें अपनी कुछ आधार भूत धारणाओं को साफ करना पड़ेगा; जिनमें पहली यह धारणा है कि आर्य सभ्यता केवल भारतवर्ष की ही उपज है और यह कि हमी ने उसे पूरे संसार को दिया (हालांकि देने वाले हमारे पूर्वज थे हम नहीं।) और इसके बदलने का मुख्य कारण यह है कि यह बात पूर्णतया सत्य नहीं है। क्योंकि आर्य सभ्यता का इतिहास पूरे आर्यावर्त्त का इतिहास है, केवल भरत खंड (भारत) का नहीं। वह जम्बुद्वीप (एशिया जिसका भारत एक खंड मात्र है) का भी इतिहास नहीं है। वह उस वर्त्तूलाकार (गोलाकार) आर्य भूमि का इतिहास है जिसे भूगर्भशास्त्री अब गोंडवाना लैण्ड कहने लगे हैं और जिसके किसी समय एक, पूरा, गोल भूमि-खंड होने की बात अब प्रामाणिक रूप से सिद्ध हो चुकी है। इसीलिए हमारे धर्मग्रन्थों में जहां कहीं भी केवल भारत या भरत खंड का इतिहास आया है वहां "आर्यवर्त्ते जम्बुद्वीपे भरत खण्डे" कहकर ही उसे इसलिए विवेक यह नहीं कहता कि आर्यावर्त्त का इतिहास केवल भरत खंड

का इतिहास है या आर्य सभ्यता केवल भरत खंड तक ही सीमित थी या कि भरत खंड की ही सभ्यता चारों ओर फैली हुई थी। फिर मनुष्य और जातियों की घुमक्कड़ आदत को देखते हुए भी यह नहीं कहा जा सकता कि हमारे यहां किसी स्थायी जाति ने बसकर यह सभ्यता और उसका इतिहास निर्मित किया, या यह कि आर्य सभ्यता पूरी तरह यहां निर्मित होने के बाद ही यहां से बाहर गई। इसके विपरीत, सभ्यताओं के इतिहास को देखते हुए यह निश्चित हो जाता है कि हर उन्नती सभ्यता में घर-वालों ने भी उतना ही योगदान दिया जितना बाहर वालों ने क्योंकि आदान-प्रदान ही सभ्यताओं की जननी है।

दूसरी गलत धारणा हमें यह त्यागनी पड़ेगी कि आर्य नाम की कोई विशेष जाति थी। खेती का व्यवसाय करने वाले लोगों को 'आर्य' कहा जाता था। उसका व्यावहारिक अर्थ 'श्रेष्ठ' भी था। क्योंकि कृषि उस समय, जब पृथ्वी पर जंगली लोग ही ज्यादा थे, सबसे श्रेष्ठ और सुरक्षित व्यवसाय था। खेती के व्यवसाय का नियमन करने वाले सूर्य को इसी लिए 'अर्य्यमा' कहा जाता है। आर्य नाम की कोई विशेष जाति होने की गलत फहमी पालने का अर्थ होगा कि आज की तकनोलोजीय सभ्यता को कालान्तर में 'तक्नोलाजी' नाम की जाति मान लेना। दरअसल हमारे यहां हुआ भी यह है—लेकिन पाश्चात्य इतिहासकारों की भूल के कारण। उन्होंने आर्यों को एक जाति माना, और वह भी बाहर से आई हुई, जबकि आर्य केवल खेतिहर थे जो कृषाण, कृषक, कृपाण, कज्जाक, शक आदि नामों से मशहूर हुए। हमारे यहां आर्य नाम की किसी भी जाति का उल्लेख नहीं है। केवल कृषि कार्य करने लोगों, और बाद में उनके शासक वर्ग के लोगों, को ही आर्य कहा गया है। कृषि के अलावा शारीरिक कार्य करने वाले लोगों को 'दास' (जिसका संस्कृत नाम 'दस्यु' है) कहा गया है। कृषि उत्पाद—जौ और चावल तथा गाय उन होने के नाते, धनी व्यक्ति को आर्य तथा बाद में श्रेष्ठता के आधार पर श्रेष्ठी (सेठ) कहा गया।

वास्तव में कृषि-कर्म ही आर्य सभ्यता की शुरुआत कृषि-उत्पाद जौ, चावल आदि को भूनने-पकाने का कार्य ही यज्ञ, जिसे बड़ी सावधानी और गम्भीरता से किया जाता था। अग्नि को चूंकि अश्व भी कहते थे, इसलिए चन्ने भूनने के कार्य को 'अश्वमेध यज्ञ' कहना अविवेकपूर्ण नहीं था। 'अश्वमेध यज्ञ' राजाओं के विजय अभियान का प्रतीक बन गया। लेकिन कृषि कर्म पुरोहित कर्म के उदय होने तथा व्यवस्था चलाने वाले (राजा के

पूर्णकालिक पेशा होने, तक सर्वोच्च व्यवसाय रहा और कृषक सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति। कृषि कर्म अनेक देशों और अनेक जातियों ने अपनाया और इस प्रकार आर्य सभ्यता सार्वभौमिक हुई। इस सभ्यता की भाषा, उसके कार्य के अनुरूप ही, मूल रूप से एक-सी बनी—सूर्य से लेकर धान्य आदि के नाम तक ऋतुओं से लेकर वस्त्रों के नाम तक, कृषि उत्पादनों से लेकर बर्तन भाण्डों के नाम तक जैसे—पात्र, पात्रक-अंग्रेजी के पाट—पोटर हैं। हल अंग्रेजी में जाकर (प्लाऊ) हो जाता है (ह के प में बदल जाने के कारण) खेतिहर का मित्र सूर्य, जो मित्र' के ही नाम से जाना गया सभी खेतिहार जातियों और देशों में मित्र ही कहलाया। लेकिन स्थानीय उच्चारण दोषों से वह यूनानी भाषा में मीटर, जर्मन में श्मित, अंग्रेजी में स्मिथ फ्रेंच में मेत्रों–मित्रां पंजाबी में मित्तर, बंगाली में मित्रा आदि से जाना गया। इसी प्रकार आप शब्द' जिसका अर्थ जल है, ईरान की आर्य भाषा में 'आब', यूनानी में एक्वा सी में वद तथा अंग्रेजी में वाटर कहा गया। गति के अर्थ में अग्नि सूचक शब्द वृष (बैल) आर्य सभ्यता में सभी जगह वृष ही कहलाया। जैसे अंग्रेजी आक्प, रश दौड़ना, ब्रश जिसका अर्थ रगड़ना, ब्रीज, (बहती हुई हवा) आदि। अंग्रेजी के अनेक नाम जैसे आक्सफोर्ड—यार्कशायर क्रमशः वृशश्वर्त्त और अर्क (सू) शहर है। ब्रिस्टल संस्कृत का वृषाल (घोड़ा) है। उसी तरह बेल्जियम की राजधानी ब्रस्सेल्स भी वृषाल ही है। पोलैण्ड अर्थात् पशुपालने वाले पालों का खंड की राजधानी वारसा जिसका सही उच्चारण 'वर्षवा' होता है, अग्नि का गति सूचक पर्याय वषक (बैल) ही है। रूमानिया का वासोव शहर भी वृषभ ही।

जिन देशों में कृषिकर्म तथा सवारी में बैल की बजाय घोड़ा अधिक प्रयुक्त होता था वहां अग्नि गति देने के गुण को अश्व कहा गया। स्कन्दनाभीय देशों में अग्नि का बड़ा महत्त्व है इसलिए नाभीय देश नार्वे की राजधानी ओस्लो है जो अश्व (अग्नि) शब्द का ही अपभ्रंश है। स्कन्दनाभीय देशों को स्कन्द (अग्नि अथवा सूर्य) की नाभि वाला देश इसलिए कहते हैं कि उनकी नाभि, यानी उत्तरी ध्रुव से तेज रोशनी आसमान की ओर जाती है। जिससे इन देशों में सदा हल्का प्रभाव रहता है। दूसरे सूर्य भी वह छः महीने क्षितिज पर ही बना रहता है और आसमान में ऊपर चढ़कर पश्चिम में अस्त होने की बजाय क्षितिज पर ही गोलाकार पथ में चलता है और दृश्य में ज्योति की नाभि की तरह बना रहता है। गोलाकार या वृत्ताकार पथ में चलने के ही कारण इसे अर्क कहते है और उसी से उत्तरी

ध्रुव के सागर को आर्कटिक सागर नाम दिया गया था।

खेतिहर सभ्यता में गाय और अश्व को धन कहा गया है। धन का पर्याय वित्त भी है। यह वित्त शब्द अंग्रेजी में गेहूँ के लिए व्हीट के रूप में प्रयोग किया जाता हैं। उर्वर शब्द अच्छी उपजाऊ जमीन के लिए प्रयुक्त होता है। अंग्रेजी में यही फर्टाइल हो जाता है। फारसी में 'जरखेज' शब्द भी यही है। कृषि शब्द भी ईरानी आर्य भाषा में 'काश्त' हो जाता है। इस प्रकार कृषि (आर्य) सभ्यता की सार्वभौमिकता न सिर्फ सिद्ध होती हैं बल्कि इस भ्रम का भी निराकरण हो जाता है कि आर्य नाम की कोई जातिविशेष इस पृथ्वी पर थी। हां, आर्य सभ्यता को अपनाने वाले अनेक देश और अनेक जातियां थीं जिन्होंने उस सभ्यता के अन्दर देश और काल के हिसाब से अनेक प्रकार का ज्ञान, विज्ञान तथा उपादान हमें दिए।

कृषि कर्म में जब स्थायित्व आया, जिसे प्रगति के दृष्टिकोण से ठहराव कहना चाहिए, तब मनुष्य का ध्यान उन छोटे-छोटे उद्योग-धंधों की ओर गया जिनका आधार हालांकि कृषि ही था, लेकिन जो अपने आप में स्वतंत्र व्यवसाय थे जैसे सोना, तांबा, लोहा, आदि गलाना और उनके हथियार, बर्तन औजार आदि बनाना। बैलगाड़ियां (रथ) तथा घोड़े की काठी आदि बनाना, वस्त्र बनाना, खिलौने, मिट्टी के बर्तन, घर-मकान, मूर्तियां हाथीदांत तथा चमड़े की चीजें आदि। इन उद्योगों के लोगों ने एक नयी सभ्यता व्यापारी सभ्यता या द्रविड़ सभ्यता को जन्म दिया। द्रविड़ सभ्यता भी आर्य सभ्यता ही थी लेकिन व्यापार प्रधान थी। इसमें शुरू में शिल्पकार की भी उतनी ही श्रेष्ठता थी जितनी कि व्यापारी की (बाद में शिल्पियों की संख्या बढ़ जाने और उनका आर्थिक स्तर गिर जाने के कारण व्यापारी वर्ग ही श्रेष्ठ और धनी रह गया)। लेकिन यह द्रविड़ भी कोई जाति नहीं थी केवल वर्ग था और काफी ज्ञानी और बुद्धिमान। कला और ज्ञान-विज्ञान की इसे अच्छी परख थी, क्योंकि यह देश देशान्तर की यात्रा करता था और वहां बस्तियां बसाकर स्थायी रूप से रहता था। भारतीय अरब, यूनानी व्यापारियों की बस्तियां काफी काल तक देश-देशान्तर में रहीं। इन्हीं द्रविड़ों ने इंग्लैंड में भी बस्तियां बनाई और वहां रहे। वहां इन्हें ड्रुइड कहा जाता था। आंग्ल (अङ्ग देश के) लोग भी व्यापार करने के लिए वहां रहे। ये भी व्यवसाय से द्रविड़ थे। शुरू में द्रविड़ों का मुख्य काम सोने को गलाकर धातु रूप में लाना और उसके जेवर तथा बर्तन आदि बनाकर देश-देशान्तर में बेचना था। बाद में हाथीदांत, मसाले, सिल्क आदि अन्य वस्तुएं भी

भी उसमें शामिल हो गई। द्रविड अक्सर बन्दरगाहों से वास्ता रखते थे और इसीलिए इन्हें नौका चालन तथा भूगोल का अच्छा ज्ञान था। हमारे यहां गंगा और सरस्वती के किनारे की सभ्यताएं जहां मूलतया खेतिहर आर्य थीं वहां हड़प्पा आदि बन्दरगाहों से लगी सभ्यताएं द्रविड़-आर्य। यह विभाजन हमें भूल नहीं जाना चाहिए। लेकिन द्रविड़ सभ्यता को अनार्य कहना नितान्त भूल होगी जैसा कि हमारे मस्तिष्क में भरने का प्रयास किया जा रहा है और न ही द्रविड़ केवल तमिष (तमिल) भाषा बोलने वाले थे। हां सागर तट के किनारे के होने के कारण तमिष भाषा भाषी लोगों का उसमें बाहुल्य हो सकता है। अगर देखा जाये तो सभी सागर तटवासी समुद्री व्यापार में लगे रहे हैं। लेकिन ऐसे क्षेत्रों और लोगों की भूमिका उसमें ज्यादा रही है जहां कुछ विदेशों में बेचने लायक चीजें या उनके कर्मी उपलब्ध थे, जैसे मसाले पैदा करने वाले क्षेत्र, सोना, तांबा, हाथीदांत, चंदन आदि उत्पादन करने वाले क्षेत्र तथा उन क्षेत्रों के दस्तकार। द्वारका, कोचीन, हड़प्पा, ओखा, मुम्बई आदि प्रमुख बंदरगाह पश्चिम में रहे तो मद्रास, कुलशेखर पटनम्; देवीपट्टनम्, नाग पट्टनम् कारीकल, अल्लूरु, मसूली पट्टनम्, काकीनाडा, विशाखापट्टनम् विम लीपट्टणम्, कलिङ्गपट्टनम्, नन्दीग्राम, कालीघाट आदि बन्दरगाह पूर्वी तट पर रहे जिसमें 'पट्टनम्' शब्द व्यापारिक केन्द्रों तथा बन्दरगाहों के लिए ही जुड़ता था। इसलिए पूरे के पूरे सागर तटीय प्रदेशों में व्यापारी सभ्यता पनपी और कृषि सभ्यता से पहले पनपी, इसमें कोई सन्देह नहीं। क्योंकि धातु एवं दस्तकारी तथा व्यापार और आदान-प्रदान से इसे आगे बढ़ाया।

यह एक ऐतिहासिक और सामाजिक तथ्य है कि जो सभ्यता औरों से लेने की क्षमता नहीं रखती वह औरों को कुछ नया देने की क्षमता भी नहीं रखती। आदान-प्रदान के अभाव में कूपमण्डूकता और अकर्मण्यता आ जाती है। अकर्मण्यता से द्वेष, आडम्बर, झूठ आदि प्रवृत्तियां और शोष की प्रवृत्ति पनपती है। भारतीय समाज के दरवाजे बाहर के ज्ञान-विज्ञान के लिए बंद हो जाने पर ऐसी ही स्थिति हमारे यहां आई और तब फलती-फूलती आर्य सभ्यता अपनी भाषा एवं कुछ संस्कार हमें देकर काल के गर्त में विलीन हो गई। इसके बाद ऋषि और विद्वान् की जगह पुजारी ने ले ली और ज्ञान की जगह उपासना और थोथे कर्मकाण्ड ने (जैसे सामूहिक अन्न भूनने की बजाय केवल उसकी प्रतीकात्मक होली जलाना)। कालान्तर में यही उपजीवी वर्ग अपनी सत्ता को बनाए रखने के लिए हर देश की तरह भारत में भी देश और समाज को पिछड़ा रखने में अपनी भूमिका निभाने लगा।

यहां भारतीय मनीषी के लिए भी कुछ कहना आवश्यक है। भारतीय मनीषी आर्य परम्परा में ही ज्ञान के संग्रह, परिशोधन तथा विस्तार के लिए प्रयत्नशील रहा। उसने भाषा से लेकर वैज्ञानिक विषयों तक का संस्कार-शोधन किया और उसे आचार्य, गुरु और और शिष्य की परम्परा द्वारा फैलाया। आर्य सभ्यता में 'देवता' प्राकृतिक शक्ति और ज्ञान अथवा शोध का विषय होता था और ऋषि उस विषय पर प्रकाश डालने वाला—जैसे अग्नि देवता, यानी उस विषय पर प्रकाश डालने वाला। ऋषियों से चलकर ज्ञान आचार्यों या उसके व्यवहारिक प्रयोग करने वालों तक आता था। ये आचार्य बाकायदा आश्रम यानी वर्कशाप ('आश्रम' का अर्थ है जहां आकर श्रम किया जाये) चलाते थे और धनु विद्या से लेकर रथ और नावें, हल और खेती के औजार बनाने तक की शिक्षा देते थे। धनुर्वेद के ऐसे ही आचार्य गुरु द्रोण थे जिन्होंने कौरवों-पाण्डवों को शस्त्रास्त्र की शिक्षा दी थी।

ज्ञान का संग्रह और प्रचार 'व्यास' किया करते थे। व्यास का अर्थ होता है परिधि। ये किसी भी विषय के ज्ञान का शोधन-परिशोधन कर, उसकी प्रामाणिकता स्थापित कर, उसे ज्ञान की पुस्तक—वेद—में सग्रहीत कर देते थे। इसी तरह वेद की परम्परा आगे बढ़ती थी। वैदिकज्ञान के प्रचार के लिए सूत्र या सूत लोग होते थे जो व्यासों से ज्ञान प्राप्त कर उसका प्रचार जगह-जगह करते थे। इसीलिए हमारे यहां रचनाकारों में व्यासों के नाम, जैसे व्यास, कृष्ण द्वैपायन आए हैं और वैदिक ज्ञान राजाओं आदि के समक्ष व्याख्या करने में सूतों के जैसे "सूतजी बोले"——आदि संदर्भ। कहीं-कहीं दिए हुए ज्ञान को तोते की तरह दुहराने के कारण उन्हें (सूतों को) शुकदेव भी कहा गया है। अतः पुराणों में आने वाली व्याहृति—"तब भी शुक देव बोले——"

अग्नि

अग्नि अपने अनेक नामों के साथ, जैसे अश्व, वृष, वृषभ्, ऋषभ्, अप् इन्द्र, लिङ्ग (देखें स्फुलि०) देव आदि, आर्य संस्कृति की एकता की सूचक है। घोड़े की खेती वाले क्षेत्रों में यह निश्चित रूप से 'अश्व' कहलाई, और बैल की खेती वाले क्षेत्रों में वृष (बैल)। सभी अग्निपूजक आर्य इसे सृष्टि का मूल तत्त्व, अतः सृष्टि का कारण और कर्त्ता मानते थे। व्यवहार में भी अग्नि सर्दी में तापने से लेकर अन्न भूनने तक के महत्त्वपूर्ण कार्यों में आती थी। आदि आर्य संस्कृति में इसीलिए अग्नि को व्यवहारिक महत्ता

थी और अग्नि जलाने-तापने के कार्यों को उन्होंने एक आकर्षक कार्यक्रम बना दिया था। मन्त्रोच्चार तथा सहज रूप से उसे प्रज्वलित करने की विधि द्वारा बाद में अन्न भूनने तथा पकाने के कार्य सम्मिलित हो जाने के कारण वह क्रिया (यज्ञ) परिवार से निकलकर कबीले के सामूहिक कृत्य के रूप में आ गई। सामूहिक कृत्य का महत्त्व समाप्त हो जाने के बाद केवल यदा-कदा होने वाले कर्मकाण्ड के रूप में ही शेष रह गई। (बाद के कर्मकाण्ड व्यवहारिक न होकर केवल अलंकारिक थे।) अग्नि का इतना महत्त्व (भोजन पकाने की क्रिया शुरू होने से पहले के काल में) ठण्डे देशों के आर्यों के लिए ही था और इसीलिए शुरू की यज्ञ परम्परा में ऊन के आसन और वस्त्रों आदि का जिक्र आया है। खेतिहर सभ्यता में और विशेष तौर पर उष्ण देशों में, उसका महत्त्व जाड़े की ऋतु तक तापने के सदर्भ में और बसंत ऋतु में अन्न भूनने के अर्थ में (जैसे होली का अन्न भूनने का त्योहार) अधिक रहा। वहाँ शिकारियों वाली जंगली सभ्यता के सन्दर्भों से वह निकल आई।

अग्नि के गुण-प्रभावों को जानने के बाद आर्यों ने सूर्य के महत्त्व को फिर से समझा कि सूर्य में भी वही तत्व हैं जो अग्नि में हैं यानी ताप और प्रकाश। इसीलिए अग्नि के बाद उन्होंने सूर्य को प्रजापति माना और उसे इन्द्र, शिव, विष्णु आदि की अग्नि की व्यापकता (ब्रह्माण्ड में) देखकर उसे 'ब्रह्म' संज्ञा दी। 'ऋग्वेद' में इस आशय का एक सुन्दर मन्त्र है (पहला ही मन्त्र)—

अग्नि मीड़ पुरोहितम् यज्ञस्य देवं जो त्विजम ।। होता रह रत्नयात्मम् ।।

उस अग्नि को खोजो (या उसकी इच्छा करो) वह यह एक ब्रह्माण्ड में हमारे हित के लिए पहले से ही स्थित है और जो यज्ञ (तापन, भूनने आदि के मङ्गल कार्य) का देवता यानी उसे सम्पन्न करने वाला, प्रकाश एवं ऋतुओं का करने वाला, तथा सभी प्राणियों, तत्त्वों तथा रत्न आदि (अच्छी) वस्तुओं का धारण करने वाला है।

खेतिहर सभ्यता के उदय के साथ-साथ अग्नि का नार्भीय (बर्फीले) देशों जैसा महत्त्व समाप्त हो गया, क्योंकि खेती शीतोष्ण देशों में होती थी। अतः अग्नि देव की सर्वोच्च देवता के रूप में उपासना भी खत्म हो गई। शीतोष्ण और समशीतोष्ण प्रदेशों में सीधे सूर्य की उपासना शुरू हुई क्योंकि जौ की एक मात्र जाड़े की फसल सूर्य की कृपा पर निर्भर करती थी; और वह भी पकावट हो जाने पर। इसलिए सूर्य को 'आर्यमा' और विष्णु के

रूप में आराधा—पूजा गया। विष्णु विशेष रूप से भारत जैसे ग्रीष्म कालीन वर्षा क्षेत्र में अधिक लोकप्रिय हुए क्योंकि यहां पर वर्षा सूर्य के विशेष रूप से तपने पर ही संभव हो पाती थी। इस विशेष रूप से तपने को सूर्य की विशेष इच्छा या तप (विष्णु) कहा गया और चुंकि वर्षा मई––जून का भयंकर गर्मी के बाद सुखदायी होकर आती थी, इसलिए उसे हर्षोउल्लास, राग-रङ्ग का प्रतीक माना तथा नये जीवन का भी, क्योंकि यहां वर्षा से ही वनस्पति तथा प्राणी नद-नदियां ताल-तलैया जीवन पाती थीं। वर्षा का कारण बाद में काले मेघ को भी मान लिया गया जो समुद्र से खींचकर लाया जाता है। इसलिए मेघ खींचकर लाया गया अर्थात् 'कृष्ण' हुआ (और चूंकि वर्षा का मेघ काला होता है इसलिए कृष्ण का अर्थ काला भी हुआ), और उसे खींचकर लाने वाला सूर्य, जो उससे पहले से ही वर्तमान है, तथा उससे अधिक शक्तिशाली है, 'कृष्ण का बड़ा भाई 'हलधर' हुआ (वर्षा को हल से खींचकर लाने की कल्पना भी कृषि संस्कृति का प्रतीक है।) हलधर को बलदेव या 'बलदाऊ' भी कहा गया। क्योंकि वर्षा को या खींचने की क्रिया को बल देने वाला सूर्य ही है। बलदेव (सूर्य) का कर्षण (खींचने) की क्रिया से जुड़े होने के कारण उनका एक नाम 'संकर्षण' भी है। स्पष्ट है कि खेतिहर सभ्यता में सूर्य के साथ–साथ कृषि के अन्य सहायक तत्वों-जल वरुण, मेघ (कृष्ण); बिजली (इन्द्र) वायु (मरुत), बाहर रहे महीनों के अलग-अलग प्रभाव वाले सूर्य. (१२ आदित्यों) पहाड़ (शिव), नदी, तालाब (तीर्थ) आदि का महत्त्व बढ़ गया और ब्रह्मा तथा अग्नि विस्मृति के गर्त में चले गए, लेकिन पूर्णतया नहीं। अन्न के साथ साथ 'शब्द' आदि तत्त्वों को ब्रह्म की संज्ञा दी गई। इसके पीछे तर्क यह था कि ब्रह्म अपनी सृष्टि का पालन करता है। अतः पालक होने के नाते अन्न भी ब्रह्म है और पालने की क्रिया में सहायक होने के कारण शब्द (मेघ का नाद, जिसके कारण वर्षा होती है और इस प्रकार अन्न की उत्पत्ति और सृष्टि के चलने का कारण बनता है।) भी ब्रह्म हुआ। यह उसी प्रकार का तर्क था जिसके आधार पर सभी देने वाली चीजें या लोग देव कहलाएं। जैसे कि जल भी देव है और सूर्य भी देव तथा पिता भी देव और गुरु भी देव।

आर्य सभ्यता

खेतिहर संस्कृति को भारत, मिस्र, यूनान, दक्षिण तथा मध्य रूस, पश्चिम एशिया, रोम (इटली) इथियोपिया, चीन तथा (लातीनी) अमरीका

की मय, अजतेक आदि) की अनेक जातियों ने बनाया और भोगा। इसलिवी इन सभी देशों की आर्य संस्कृति में सूर्य, अग्नि, वरुण, मरुत्, नदी तथा पृथ्वन और शक्ति (प्रकृति) की पूजा होती मिलती है। 'देव' शब्द सभी में समए रूप से प्रयुक्त हुआ है। यूनानी भाषा में दायुस लातीनी में दियूस दानवी अथवा रूसी भाषा में लेव, जर्मन में दीयश आदि आदि। गाय, बैल, घाड़ा का महत्त्व भी इस पूरे आर्य क्षेत्र (आर्य वर्त्त) से बराबर रहा। अन्न को भून कर अथवा पकाकर खाने की प्रथा समान रहा, खाने और चीजें रखने के पात्र सभी जगह बरते गये और सूर्य-अग्नि-जल जीवन के सुदर्शन चक्र की महत्ता और अनिवार्यता बराबर समझी गईं।

दयानन्द संस्थांन में अकाउन्टेंट का कार्य कर रहे हरि किशन गुप्ता ने हिसाव में गोलमाल कर संस्थान के साथ धोखाधड़ी की और कुछ धनराशि का गबन भीं किया।

जांच करने पर सारा मामला सामने आया तो हरिकिशन गुप्ता को पुलिस को सौंग दिया गया। पुलिस मामले की जांच कर रही है। हरि किशन गुप्ता को दयानन्द संस्थान की सेवा से मूक्त कर दिया गया है।

इधर गड़बड़ी के कारण पिछले दो माह से संस्थान कि गतिविधियां अस्त-व्यस्त हुई तथा हम जन-ज्ञान की नियत समय पर आप तक नही पहुंचा सके। कुछ साहित्य आदेश भी समय पर पूरे नहीं किये जा सके, इसका हमें खेद है

हमें आशा है अगले माह से जनज्ञान केप्रकाशन की स्थिति सामन्यहो जायेगी।

व्यवस्थापक

डा० प्रहलाद कुमार स्मारक जयन्ती

दिल्ली विश्वविद्यालय में ११ सितम्बर को डा० प्रह्लादकुमार स्मारक समिति ने प्रह्लादजी ३९वीं जयन्ती मनाई। डा० प्रशात वेदालकार ने प्रमुख अतिथियों तथा अन्य अभ्यागतों का स्वागत किया। समारोह में अध्ययन-अध्यापन करने वाले प्रवृद्ध वर्ग के श्रोता उपस्थित थे।

मारीशस में आप्रवासी भारतीयों के पहुंचने की १५० वीं वर्ष गांठ के सिलसिले में वहां अनेक आयोजन हो रहे हैं, जो अगले मार्च तक चलेंगे। इसी सिलसिले में वहां २३ से ३० अक्तूबर तक एक अन्तर्राष्ट्रीय गोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने भी भाग लिया। भारत से १४५ प्रतिनिधियों का एक प्रतिनिधि मंडल वहां गया। दयानन्द संस्थान के प्रतिनिधि के रूप में अनिल लोढ़ा भी उस प्रतिनिधि मंडल में सम्मिलित थे।

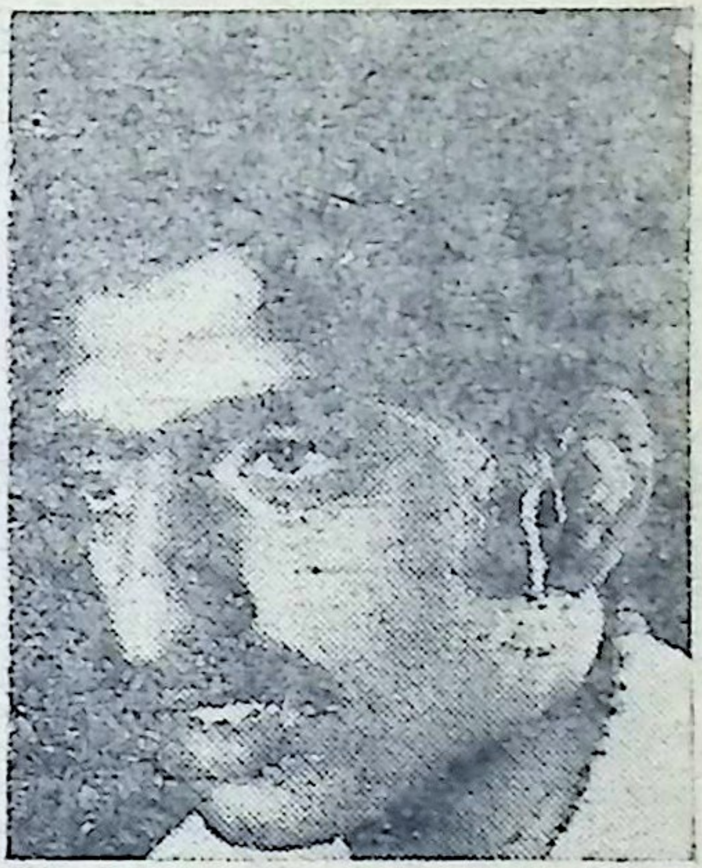

प्रस्तुत है उनका यात्रा वृत्तान्त।

मारीशस यात्रा वृत्तांत

एक और भारत देखा, सागर के उस पार

—अनिल लोढ़ा

"मारीशस में प्रवासी भारतीयों के प्रवेश की १५०वीं वर्षगांठ मनाई जा रही है और इसमें भाग लेने १५० सदस्यीय भारतीय प्रतिनिधि मण्डल जा रहा है, आपको किसी को भेजना है।" राजधानी के प्रसिद्ध पत्रकार श्री बालेश्वर अग्रवाल ने जब आदरणीय अम्माजी (राकेश रानी जी) से यह पूछा तो उन्होंने मेरी ओर मुखातिब होकर यही सवाल दोहरा दिया और कहा कि तुम अपना कार्यक्रम बना लो। वहां हमारा 'जन-ज्ञान' भी

काफी जाता है, अनेक लोगों में दयानन्द संस्थान की गतिविधियों के बारे में जिज्ञासा व उत्साह है ।

मैंने कार्यक्रम बना लिया और आवश्यक कार्रवाई प्रारम्भ कर दी। हमें २१ अक्टूबर की रात दिल्ली से बम्बई जाना था। और फिर वहां से सुबह ७ बजे चार्टर प्लेन लेकर मारीशस जाना था पर ठीक है। राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह के कार्यक्रम को देखते हुए हमारा कार्यक्रम बदला गया और हम २२ अक्टूबर की सुबह १० बजे दिल्ली से बम्बई के लिए रवाना हुए तथा वहां से २ बजे एयर इण्डिया के चार्टर हवाई जहाज में मारीशस के लिए उड़े ।

हमें बताया गया कि हम ५ घन्टे बीस मिनट में मारीशस पहुंचेंगे, भारतीय समय के अनुसार साढ़े सात बजे और मारीशस समयानुसार ६ बजे । वहां का समय भारतीय समय से डेढ़ घंटा पीछे था ।

हमारे दल की नेता केन्द्रीय गृह राज्य मंत्री श्रीमती राम दुलारी सिन्हा थीं। एक खुश मिजाज और मजाकिया महिला। फिर क्या था, हवाई जहाज में ही सांस्कृतिक कार्यक्रम का दौर दौरा शुरू हो गया। श्री बालेश्वर अग्रवाल ने यान के केबिन में माइक सम्भाला और डॉ० कुंवर बेचैन को कविता सुनाने के लिए बुलाया। कुंवर बेचैन ने हवाई जहाज में बनाई कविता सुनाई—

नीचे बादल, ऊपर हम हैं।
हम क्या नील गगन से कम हैं।

फिर डा० रमा सिंह, कृष्ण मित्र जी व कई अन्य लोगों ने कवितायें सुनाईं। मैंने भी सुनाई कविता —'आग का पेड़' और एक गजल ! जयपुर की भारती पाराशर ने राजस्थानी गीत और डा० रमा सिंह ने ब्रज भाषा में गीत सुनाया। दल की नेता राम दुलारी सिन्हा ने भी मूड में आकर भोजपुरी गीत सुनाये। हंसते-गाते हम मारीशस पहुंच गये।

मारीशस की धरती पर

मारीशस के समयानुसार छह बजे हम वहां पहुंचें। हवाई अड्डे की छत पर सैकड़ों लोग हमारे स्वागत में खड़े हाथ हिला रहे थे। वहीं हमें समूचे समारोह की विस्तृत जानकारी, सभी निमंत्रण पत्र देते हुए सभी को अपने-अपने मेजबान भारतीय परिवार से मिलवाया गया। मेरे मेजबान श्री बद्रूर स्वयं इस व्यवस्था में व्यस्त थे उन्होंने मुझे त्रियोली जाने वाली अपनी बस में बैठाया। पांच ही मिनट बाद एक अधेड़ उम्र के सज्जन काली

टोपी व धोती-शेरवानी पहने हुए आये और बस में बैठे यात्रियों से पूछा यहां कोई अनिल जी हैं। मैं चौंका और बोला—हां ! मैं हूं। उन सज्जन ने अपना परिचय दिया कि मैं पण्डित राम सहाय हूं। दिल्ली से आदरणीय बहन राकेश रानी जी का पत्र आया था। कि आप आ रहे हैं सो आप का सब व्यवस्था हमने कर रखी है। बाहर गाड़ी खड़ी हैं, आप पधारें।

दूर देश में अपना ऐसा परिचित मिला तो एक सुखानुभूति हुई पर अपने पुन: निर्धारित मेजबान के दिल में मैं ठेस नहीं पहुंचाना चाहता था सो मैंने यह निर्णय उन्हें आपस में करने को कहा कि मैं कहां जाऊं ? श्री बदूर के यहां हम कुल चार मेहमान थे सो उन्होंने पं० राम सहाय जी को मुझे ले जाने की इजाजत दे दीं। और यहां से शुरू हुआ एक सप्ताह का मारीशस का सफर। एक सुहाना सफर जिसका स्मरण मुझे यह सब लिखते समय भी रोमांचित कर रहा हैं।

पं० राम सहाय जी अपने दामाद श्री सुरेश रामदीन को लेकर आये थे व उन्हीं के घर मेरे रहने की व्यवस्था भी की थी। सुरेश रामदीन एक हंसमुख मिलनसार, आर्यसमाजी नौजवान थे। उनके घर पहुंचने पर उनकी पत्नी और दो बच्चों से परिचय हुआ। सारी बातचीत हिन्दी में, सारा व्यवहार भारतीय। सभी कुछ अपने देश जैसा। जल्दी मैं एक पारिवारिक आत्मीयता के बंधन में बंध गया।

समारोहों में

अगले दिन २३ अक्टूबर को प्रात: ग्यारह बजे महात्मा गांधी संस्थान, मोका में प्रवासी भारतीय प्रवेश पर अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार का उद्घाटन होना था। भारत के राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह द्वारा। रामदीन परिवार में प्रतिदिन हवन होता था। बच्चे संध्या करते हैं। हम इन कार्यों से निवृत्त होकर खाना खाकर महात्मा गांधी संस्थान गये। भारत सरकार के आर्थिक सहयोग से बना यह संस्थान मारीशस की सांस्कृतिक साहित्यिक गतिविधियों की जान है। यहीं से 'वसन्त' नामक साहित्यिक पत्रिका निकलती है। यहां भारतीय संगीत व हिन्दी भाषा की भी शिक्षा दी जाती है।

प्रवासी भारतीयों के मारीशस में प्रवेश में १५०वीं जयन्ती के अवसर पर यहां एक प्रदर्शनी लगाई गई जिसमें चित्रों के माध्यम से १५० वर्ष का इतिहास बताने की कोशिश की गई। वह इतिहास जो स्वीकृत है, मान्य है और वह इतिहास भी जो गोरी चमड़ी के इतिहासकारों ने छुपाया

और जिसे अनिरूद्ध अनन्त 'गूंगा इतिहास कहते हैं।

प्रवासियों के पूर्वज कैसी झोंपड़ी में रहे, कैसे बर्तनों में खाना पकाते व खाते रहे, सब कुछ तो वहां देखने को मिला। एक रजिस्टर था जिसमें उन्नीस वीं सदी में आये भारतीयों के नाम पते दर्ज थे। एक अन्य रजिस्टर में १८५५-५६ के समय से वहां हुए विवाह दर्ज थे।

प्रदर्शनी देखकर हम सभा भवन की बालकनी में जो भारतीय प्रतिनिधि मण्डल के बैठने के लिये नियत थी, जा बैठे। राष्ट्रपति जी अभी आए नहीं थे। मेरे पास बैठे एक नौजवान ने हिन्दी में पूछा—आप भारत से आये है! मैंने कहा हां! और आप? मैंने पलट कर पूछा तो जवाब मिला मैं रामदेव धुरंधर हूँ यहीं महात्मा गांधी संस्थान में कार्यरत हूँ। परिचय होने के बाद जब उन्हें पता चला कि मैं पत्रकार हूँ तो यह आत्मीयता और बढ़ी। श्री धुरन्धर वहां की पत्रिका 'वसन्त' के सम्पादक मण्डल में है और स्वयं भी अच्छे उपन्यासकार व लेखक हैं।

राष्ट्रपति ज्ञान जैल सिंह जी आए। उनके साथ मारीशस के गवर्नर जनरल डा० शिवसागर रामगुलाम व प्रधानमंत्री अनिरूद्ध जगन्नाथ भी थे। राष्ट्रपति जी ने अन्तर्राष्ट्रीय सेमिनार का उद्‌घाटन किया। हिन्दी में भाषण देते हुए भारत मारिशस के रिश्ते की बात की, प्रवासी भारतीयों के दुखः दर्द सहने और खून पसीने बहाकर देश को बनाने की जिक्र किया और उन पूर्वजों को श्रद्धाजलि दी।

समारम्भ समारोह के बाद मैं रामदेव धुरन्धर के साथ उनके कार्यालय गया। मारीशस की स्थिति पर चर्चा हुई फिर वहीं श्री अभिमन्यु अनंत से मिला। श्री अनंत मारीशस के प्रसिद्ध प्रतिष्ठि रचनाकार हैं। 'गूंगा इतिहास', 'लाल पसीना' और 'गांधी जी बोले थे' जैसी उनकी रचनायें प्रवासी भारतीयों के इतिहास को वास्तविक और सार्थक दस्तावेज हैं। उनके पास प्रभात के सम्पादक विशम्भर सहाय विनोद जी पहले से ही बैठे थे तथा राजस्थान पत्रिका के प्रबन्ध सम्पादक श्री विजय भण्डारी; प्रबन्धक श्री लक्ष्मी नारायण शर्मा व श्री नन्द किशोर पारीक भी वहां आ जुटे।

काफी कुछ चर्चा हुई। लगा मारीशस के हालात् ठीक नहीं हैं। प्रवासी भारतीयों को अपनी संस्कृति और परम्परा की रक्षा के लिये काफी संघर्ष करना पड़ रहा है। फ्रेंच और क्रियोली का मिला जुला आक्रमण इतना तेज और तीखी धार वाला है कि प्रवासी भारतीयों के हाथ में रक्षा

के लिए ढाल देने की जरूरत है। एक हिन्दी अखबार, भारतीय साहित्य व फिल्में तथा सांस्कृतिक दलों के दौरे वहां की प्राथमिक आवश्यकतायें हैं।

महात्मा गांधी संस्थान से मैं पं० राम सहा जी के साथ सुरेश रामदान जी के घर वाकवा लौटा। सुरेश रामदीन एक स्कूल में काम करते हैं। वे स्कूल से लौट कर आये तो हम सब गाड़ी में सम्पर्क के लिए निकले। मुझे कुछ लोगों से मिलना था जो दयानन्द संस्थान के नियमित सम्पर्क में थे। इनमें से एक नैतिक शिक्षा सभा के मंत्री सत्यप्रकाश विगु से मिलने हम यूनियन पार्क गये। वे घर पर नहीं मिले। लौट कर हम मारीशस के भू०पू० सांसद मेवा सिंह के घर गये। वे वहां के शिक्षा बोर्ड के अध्यक्ष भी रह चुके हैं। उनसे बातचीत में मारीशस के राजनैतिक हालात पता चले। उन्होंने २५ अक्टूबर को फिर मिलना तय किया। लौट कर हम १५, कांतो रोड गये। इस गांव में हर शनिवार किसी एक के घर हवन होता है। वहां एक घर में २०-२५ युवा १५-२० बुजुर्ग पुरूष व महिलायें इकठ्ठे होकर हवन कर रहे थे। जींस पहने नौजवान, आधुनिक पाश्चात्य सभ्यता के प्रतीक वस्त्र पहने युवा भी शुद्ध भावना व तन्मयता से हवन कर रहे थे।

हवन के बाद पं० राम सहाय जी ने उपदेश दिया, मेरा परिचय कराया और फिर मुझसे बोलने को कहा। मैंने वहां भारतीयों को साधुवाद दिया, अपनी सभ्यता, संस्कृति और परम्परा को सुरक्षित रखने और आगे बढ़ाने के लिए। वहां से लौटकर रामदीन जी के यहां खाना खाया। रात के दस बज रहे थे। हम बहुत थक गये थे पर जब सुरेश रामदीन जी ने फमरबोन में हो रहे दीपावली महोत्सव में चलने का प्रस्ताव रखा तो थकान के बावजूद समारोह देखने के उत्साह के कारण ना नहीं कर सका।

दीपावली महोत्सव

मारीशस में इस समय ५२ प्रतिशत हिन्दू हैं और सभी दीपावली मानते हैं। उनकी इस आस्था को देखकर पहली बार इस वर्ष सरकार ने दीपावली को राष्ट्रीय त्यौहार घोषित किया और एक जन समिति ने दस दिवसीय विराट दीपावली महोत्सव का आयोजन किया।

मारीशस के लगभग केन्द्र में स्थित नगर कतरबोन में हो रहे इस समारोह में रात लगभग साढ़े दस बजे जब हम पहुंचे तब लगभग १५ से २० हजार लोग इकठ्ठे थे, दीपावली महोत्सव के साथ ही एक मेला लगा

था, बिल्कुल भारतीय शैली में खाने पीने, पहनने-सजाने की चीजों का। लोग महोत्सव में भी थे और उस मेले में भी।

दीपावली समारोह में दस दिन तक हिन्दी, भोजपुरी, तमिल व मराठी गीतों की, नृत्य की प्रतियोगितायें रखी गई। एक भारतीय सांस्कृतिक दल का बैले रखा गया। उस दिन हिन्दी गीतों की प्रतियोगिता थी, मंच पर कोई गा रहा था, सुख के सब साथी, दुःख में न कोय। फिर एक बाद एक हिन्दी गीत चले, मीरा और कबीर के भजन भी। ऐसा लगा ही नहीं कि भारत से चार-पांच हजार मील दूर पर देश में बैठे हैं।

—सब कुछ भारत जैसा ही था। हिन्द महासागर के इस छोर पर भारत और उस छोर पर मारीशस। दोनों एक संस्कृति के संवाहक। १८३४ में भारत से मारीशस ले जाये गये। भारतीय मजदूरों ने किस तरह अपनी सभ्यता-संस्कृति, आस्था-निष्ठा, मान्यता परम्परा को सुरक्षित रखा संवार कर रखा और फ्रांसीसी गोरों के दमन व शोषण के बावजूद इन सबको आने वाली पीढ़ी को सुरक्षित विरासत के रूप में दे गए।

इसका यह समारोह उत्कृष्ट उदाहरण था। मुझे बताया गया कि कल दीपावली पर और अधिक भव्य कार्यक्रम होगा। हमारे राष्ट्रपति जी भी कल वहां आयेंगे। कल फिर लौटने का निश्चय कर हम लोग वाकया लौट आये, श्री सुरेश रामदीन के घर। २४ अक्टूबर को दीपावली थी। उस दिन मारीशस के अधिकतर हिन्दू घरों में मिठाई बनी थीं शाम को दीपक जले और बिजली की रोशनी भी की गई।

इस दिन भारत ने भी मारीशस में एक नया दीप जलाया। भारत के राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह ने रोजवेल गांव में पण्डित जवाहर लाल नेहरु अस्पताल की आधार शिला रखी। इस अस्पताल के बनाने लिये भारत ने दस लाख डालर दिए हैं। रोगों से जीवन में वाले अंधकार के विरुद्ध आशा की किरण लिए यह दीप मारीशस के लोगों के जीवन में रोशनी भर सकेगा। इस अवसर पर आए हजारों मारीशस वासियों ने भारत के राष्ट्रपति के आत्मीयता भरे भाषण को सुना और वे इससे अभिभूत होते दिखाई दिए।

□

[शेष वृत्तांत अगले अंक में पढ़िये]

नारी जाति के उत्थान में स्वामी दयानन्द का योगदान

—डॉ० रामनाथ वेदालंकार

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जहां अपने समय में भारत में प्रचलित विविध कुरीतियों, अन्धविश्वासों तथा मिथ्या धारणाओं के उन्मूलन का बीड़ा उठाया, वहां स्त्री जाति को दयनीय स्थिति से उबार कर समाज में स्थान दिलाने का भी भरसक प्रयास किया। उस समय स्त्रियों की अवस्था बडी शोचनीय थी। स्त्री-शिक्षा का प्रसार नाम को भी नहीं था, स्त्रियों को शिक्षित करना सर्वथा अनावश्यक समझा जाता था। घरों में उनका सम्मान भी नहीं होता था, अपितु वे ताडन की ही अधिकारी समझी जाती थीं। विधवाओं का मांगलिक उत्सवों में भाग लेना अच्छा नहीं समझा जाता था, बल्कि भद्र कार्यों में उनका दर्शन तक अशुभ माना जाता था। विधवाएं या तो सती हो जाती थीं या जीवन-भर कष्ट भोगती रहती थीं और समाज से अपमानित होती रहती थीं। नारियों को वेद पढ़ने के अधिकार से भी वंचित रखा गया था। वे बाहर नहीं निकलती थीं, घर में भी उन्हें पर्दे में रहना पडता था। नारी के विदुषी और अध्यापिका बनने की बात कोई स्वप्न में भी नहीं सोच सकता था। स्वामी जी ने नारी के विषय में प्रचलित समाज के इन हीन विचारों को परिवर्तित करने के लिए और समाज में नारियों को उच्च स्थान दिलाने के लिए अपनी लेखनी और वाणी को प्रवृत्त किया।

बाल-विवाह का निषेध

स्वामी जी ने जब देखा कि छोटी-छोटी बालिकाओं के विवाह हो जाते हैं, तब देश के अधःपतन को देख कर उनका हृदय नारी जाति के प्रति दयार्द्र हो उठा। उपदेशमंजरी के १२वें प्रवचन में वे कहते हैं—"यदि इस समय हम लोगों में बाल-विवाह प्रचलित न होता तो विधवाओं की संख्या कभी इतनी न होती और न इतने गर्भपात और इतनी भ्रूणहत्याएं होतीं।" उस

समय के पंडित लोग पाराशरी और शीघ्रबोध ग्रन्थों का प्रमाण देते हुए कहते थे कि आठ वर्ष की कुमारी गौरी, नौ वर्ष की रोहिणी, दस वर्ष की कन्या और दस वर्ष से ऊपर राजस्वला कहलाती है। आठवें वर्ष विवाह कर देना सबसे अच्छा है, उसके बाद नवें वर्ष और उसके बाद दसवें वर्ष के पश्चात् जो कन्या को अविवाहित देखते हैं वे माता-पिता और ज्येष्ठ भ्राता नरक में गिरते हैं। स्वामी जी ने उन पंडितों की भर्त्सना करते हुए कहा कि जिन श्लोकों को तुम प्रमाण रूप में प्रस्तुत कर रहे हो उन्हें बने अभी सस्सो वर्ष भी नहीं हुए हैं। उन्होंने मनुस्मृति तथा वेद मन्त्रों का प्रमाण देकर बताया कि तुम्हारे श्लोक कपोलकल्पित हैं। मनु ने लिखा है कि कुमारी ऋतुमती होना आरम्भ होने के तीन वर्ष पश्चात् विवाह करे—

त्रीणि वर्षाण्युदीक्षेत कुमार्युतुमती सती।
उर्ध्वं तु कालादेतस्माद् विन्दते सदृशं पतिम् ॥

सत्यार्थप्रकाश, चतुर्थ समुल्लास तथा संस्कारावधि के विवाह-प्रकरण में स्वामी जी ने कई वेदमंत्र यह प्रमाणित करने के लिए दिये हैं कि युवा और युवती का ही विवाह होना चाहिए। यथा—

तम् अस्मेरा युवतयो युवानं
मर्मृज्यमानाः परियन्ति आपः ॥

ऋग् २.३५.४

अर्थात् उत्तम ब्रह्मचर्य व्रत और सद्विद्याओं से अत्यन्त शुद्ध युवती कन्यायें युवा पति को प्राप्त करती हैं। विवाह-योग्य आयु के विषय में स्वामी जी लिखते हैं—"सोलहवें वर्ष से लेकर चौबीसवें वर्ष तक कन्या और पच्चीसवें वर्ष से लेकरे अड़तालीसवें वर्ष तक पुरुष का विवाह-समय उत्तम है। जिस देश में इसी प्रकार विवाह की विधि श्रेष्ठ और ब्रह्मचर्यविद्याभ्यास अधिक होता है, वह देश सुखी और जिस देश में ब्रह्मचर्यविद्याभास-रहित बाल्यावस्था में और अयोग्यों का विवाह होता है वह देश दुःख में डूब जाता है।"

स्वामी जी के ही विचारों का प्रभाव था कि बाद में शारदा ऐक्ट द्वारा बाल-विवाह कानूनी तौर पर निषिद्ध ठहरा दिया गया और आज तो विवाह-योग्य आयु के विषय में स्वामी जी का ही स्वप्न पूरा होता दिखाई दे रहा है।

स्त्री-शिक्षा

स्वामी जी ने स्त्री-शिक्षा पर बहुत बल दिया है। प्राचीन काल में

स्त्रियां शिक्षित होती थीं, इस ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए उपदेशमंजरी के तृतीय प्रवचन में वे कहते हैं— "पूर्व काल में आर्य लोगों में स्त्रियां उत्कृष्ट रीति से पढ़ती थीं। आर्य लोगों के इतिहास की ओर देखो—स्त्रियां आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर रहती थीं और साधारण स्त्रियों के भी उपनयन और गुरुगृह में वास इत्यादि संस्कार होते थे। गार्गी, सुलभा, मैत्रेयी, कात्यायानी आदि बड़ी-बड़ी सुशिक्षित स्त्रियां होकर बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों की शंकाओं का समाधान करती थीं।" स्वामी जी से कुछ लोग कहते थे कि स्त्री और शूद्र के विद्या पढ़ने का निषेध तो वेद में भी है। देखो, वहां स्पष्ट लिखा है —"स्त्रीशूद्रौ नाधीयाताम्। स्वामी जी ने तृतीय समुल्लास में यह प्रश्न उठा कर इसका उत्तर दिया है कि उक्त वाक्य वेदों में कहीं नहीं आता, किन्तु तुम्हारी कपोलकल्पना की उपज है।

स्वामी जी ने लड़के-लड़की सबके लिए शिक्षा का विधान करते हुए लिखा है — "सन्तानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण-कर्म-स्वभाव रूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है।" (समु. ३)। "आठ वर्ष के हों तभी लड़कों को लड़कों की और लड़कियों को लड़कियों की पाठशाला में भेज देवें।" (समु. ३)। स्वामी जी लड़के-लड़कियों सबकी शिक्षा को अनिवार्य बताते हैं तथा जो माता-पिता उन्हें शिक्षा से वंचित रखना चाहें उन्हें राजदण्ड मिलना चाहिए, ऐसा कहते हैं—"इसमें राजनियम और जातिनियम होना चाहिए कि पांचवें और आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़के और लड़कियों को घर में न रख सकें। पाठशाला में अवश्य भेज देवें, जो न भेजे वह दण्डनीय हो (समु. ३)। ऋग्भाष्य ६.४४.१८ के भावार्थ में लिखते हैं कि राजा ऐसा यत्न करे जिससे सब बालक और कन्याएं ब्रह्मचर्य से विद्यायुक्त होकर समृद्धि को प्राप्त हो सत्य, न्याय और धर्म का निरन्तर सेवन करें। यजु १०.७ के भाष्य में लिखा है कि राजा को प्रयत्नपूर्वक अपने राज्य में सब स्त्रियों को विदुषी बनाना चाहिए।

वेदाध्ययन और यज्ञ में अधिकार

आज महिलाएं सनातन धर्म के गढ़ वाराणसी के विश्वविद्यालयों से वेदशास्त्री और वेदाचार्य परीक्षाएं उत्तीर्ण हैं और विभिन्न विश्वविद्यलयों से वैदिक विषय लेकर शोधउपाधि पी एच.डी. और डी.लिट. प्राप्त करती हैं। इसका श्रेय स्वामी दयानन्द को ही है। स्वामी जी ने ही प्रमाणपूर्वक बताया

कि यज्ञ करने-कराने और वेदों के अध्ययन-अध्यापन करने का अधिकार नारी को भी वैसा ही है जैसा पुरुष को। उन्होंने इस ओर ध्यान आकृष्ट किया कि प्राचीन काल में यज्ञों में यजमान के साथ यजमान-पत्नी भी बैठती थी तथा मन्त्रोच्चारण भी करती थी। वेद के अनुसार कन्याओं का भी उपनयन संस्कार होना चाहिए, परन्तु मध्यकाल में स्त्रियों का उपनयन का अधिकार समाप्त कर दिया गया। अनुपनीत व्यक्ति वेद पढ़ने का अधिकारी नहीं होता अतः नारियां वेदाध्ययन से वंचित कर दी गईं। यथा भागवत पुराण में लिखा है कि स्त्री को, शूद्र को और ब्राह्मणत्व का ढोंग करने वाले को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं है—स्त्रीशूद्रद्विजबन्धूनां त्रयी न श्रुतिगोचरा (भाग १.४.२५)। दयानन्द ने इसका सप्रमाण खण्डन किया। स०प्र०, तृतीय समु० में 'क्या स्त्री लोग भी वेदों को पढ़ें ? इसका उत्तर देते हुए वे लिखते हैं—"अवश्य देखो, श्रौतसूत्रादि में 'इयं मन्त्रं पत्नी पठेत्', अर्थात् स्त्री यज्ञ में इस मन्त्र को पढ़े। जो वेदादि शास्त्रों को न पढ़ी होवे तो यज्ञ में स्वर-सहित मन्त्रों का उच्चारण और संस्कृत भाषण कैसे कर सके। भारतवर्ष की स्त्रियों में भूषण रूप गार्गी आदि वेदादि शास्त्रों को पढ़के पूर्ण विदुषी हुई थीं। यह शतपथ ब्राह्मण में स्पष्ट लिखा है।"

लगभग चार दशक पूर्व काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में प्रो० महेशप्रसाद जी की कन्या ने वेद-मध्यमा में जब प्रवेश कर लिया था तब पंडितों ने यह कहकर कि स्त्री वेद पढ़ने की अधिकारिणी नहीं है उसे पढ़ाने से मना कर दिया था। दयानन्द का अनुयायी आर्यसमाज ही था, जिसने इसके लिए संघर्ष किया और अन्ततः उसकी विजय हुई। यह वस्तुतः दयानन्द की विजय थी। आज तो नारियां बे-रोक टोक वेद पढ़ती और पढ़ाती हैं।

नारियां अध्यापन करें

स्वामी जी का विचार था कि नारियों को विदुषी बन कर गुरुकुलों और पाठशालाओं में कन्याओं को शिक्षित करना चाहिए। कन्या पाठशालाओं में पुरुष अध्यापक रखने का वे निषेध करते हैं —"जो वहां अध्यापिका और अध्यापक पुरुष वा भृत्य अनुचर हों वे कन्याओं की पाठशाला में सब स्त्री और पुरुषों की पाठशालाओं में पुरुष रहें (तृतीय समु.)। ऋग्भाष्य २.४१.१६ के भावार्थ में वे लिखते हैं—"जितनी कुमारी हैं वे विदुषियों से ऐसी प्रार्थना करें कि आप हम सबको विद्या और सुशिक्षा से युक्त करें"। ऋग्भाष्य २.४१.१७ के भाष्य में लिखते हैं —सब विद्वान् जब अपनी-अपनी विदुषी

स्त्रियों के प्रति ऐसा उपदेश देवें कि तुम्हें सबकी कन्याओं को पढ़ाना चाहिए और सब स्त्रियों को सुशिक्षित करना चाहिए ।" यजु. २०-८५ के भाष्य में लिखते हैं —"जो स्त्रियों के बीच में विदुषी स्त्री हो वह सब स्त्रियों को सदा सुशिक्षा करे, जिससे स्त्रियों में विद्या की वृद्धि हो ... "यजु ६.१४ के भाष्य में लिखते हैं —"गुरु और गुरुपत्नी को चाहिए कि वेद और उपवेद तथा वेद के अंग और उपांगों की शिक्षा से देह, इन्द्रिय, अन्तःकरण और मन की शुद्धि शरीर की पुष्टि तथा प्राण की सन्तुष्टि देकर समस्त कुमार और कुमारियों को अच्छे अच्छे गुणों में प्रवृत्त करावें ।"

स्त्रियां यदि अध्यापन करेंगी तो वे घर का कार्य कैसे कर पायेंगी, इस विषय में स्वामी जी का कथन है कि वे आवश्यक होने पर परिचारिकाएं रख सकती हैं । यजु ११.५६ के भाष्य में लिखा है कि—"श्रेष्ठ स्त्रियों को उचित है कि वे अच्छी शिक्षित चतुर दासियों को रखें, जिनसे सब पाक आदि की सेवा समय-समय पर होती रहे ।" इसी मन्त्र के भाष्य में परिचारिका के गुण भी बताए गए हैं कि वह प्रेम करने वाली, अच्छे केशों वाली, सुन्दर श्रेष्ठ कर्म करने वाली और अच्छे स्वादिष्ट पदार्थ के भोजन बनाने वाली होनी चाहिए । आज कन्या गुरुकुलों और कन्या पाठशालाओं में अध्यापिकाओं की एक बड़ी संख्या छात्राओं के चरित्र निर्माण और अध्यापन में लगी हुई है, यह दयानन्द का ही सन्देश मुखर हो रहा है ।

राजनीति में स्त्रियों का स्थान

जिस प्रकार स्वामी जी स्त्रियों को शिक्षण का अधिकार देते हैं उसी प्रकार वे राजनीतिक क्षेत्र में कार्य करने के लिए भी स्त्रियों को अनुमति प्रदान करते हैं । उनके अनुसार स्त्रियां विभिन्न राज्य कार्यों में, युद्ध में, न्याय व्यवस्था में पुरुषों के समान ही भाग लेने की अधिकारिणी हैं । यजु. १३-१६ के भाष्य में वे लिखते हैं कि जैसी राजनीति विद्या राजा पढ़ा हो वैसी ही उसकी रानी भी पढ़ी होनी चाहिए । ऋग् ६.७५.१५ के भाष्य में लिखा है कि रानी का धनुर्वेद जानने वाली तथा शस्त्रास्त्र चलाने में कुशल होना चाहिए । यजु १७.४५ के भाष्य में निर्देश देते हैं कि सभापति आदि को चाहिए कि जैसे युद्ध-विद्या से पुरुषों को शिक्षित करें; वैसे स्त्रियों को भी करें, जैसे वीर पुरुष युद्ध करें वैसे स्त्रियां भी करें । ऋग् ६.७५.१३ के भाष्य में कहते हैं कि राजा के अभाव में रानी युद्ध में सेनापति का कार्यभार सम्भाले । यजु १३.१७ के भाष्य में राजपुरुषों को प्रेरित करते हैं कि जिस-जिस राज्य-कार्य में वे स्वयं प्रवृत्त हों उस-उस कार्य में अपनी स्त्रियों को भी प्रवृत्त करें,

जो राजपुरुष पुरुषों का न्याय करें उन उनकी स्त्रिया स्त्रियों का न्याय किया करें।

जो समाज स्त्रियों को अबला, निर्बुद्धि और किसी भी उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य करने में अक्षम माने बैठा था, उसके सम्मुख दयानन्द के ये विचार बड़े ही क्रांतिकारी थे। इन्हीं विचारों का परिणाम है कि आज नारियां प्रत्येक क्षेत्र में आगे बढ़ी हुई हैं और सफलतापूर्वक कार्य कर रही हैं।

माता का महत्त्व

स्वामी जी द्वितीय समुल्लास में "मातृमान् पितृमान् आचार्यवान् पुरुषो वेद' इस वचन को उद्धृत करते हुए लिखते हैं —"जब उत्तम शिक्षक अर्थात् एक माता, दूसरा पिता और तीसरा आचार्य होवे तभी मनुष्य ज्ञानवान् होता है। वह कुल धन्य, वह सन्तान बड़ा भाग्यवान् जिसके माता और पिता धार्मिक विद्वान् हों। जितना माता से सन्तानों को उपदेश और उपकार पहुंचता है उतना किसी से नहीं। जैसे माता सन्तानों से प्रेम और उनका हित करना चाहती है उतना अन्य कोई नहीं करता। धन्य वह माता है जो गर्भाधान से लेकर जब तक पूरी विद्या न हो तब तक शालीनता का उपदेश करती है।" ऋग्भाष्य १.४८.१६ में भी ऐसा ही विचार प्रकट करते हैं —"माता की शिक्षा से ही सन्तान उत्तम होते हैं और किसी प्रकार से नहीं।"

इस प्रकार सन्तान के योग्य, शिक्षित, सदाचारी और उत्साही होने में स्वामी जी माता जी का विशेष योगदान मानते थे। इसी कारण ये नारी की शिक्षा आदि पर देते थे।

नारी का सम्मान

स्वामी जी इसके प्रबल पक्षपाती थे। नारियों का घर में और समाज में अत्यन्त सम्मान होना चाहिए। चतुर्थ समुल्लास में वे मनु के यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः (मनु ३.५६) श्लोक का स्मरण कराते हुए कहते हैं कि जिस घर में स्त्रियों का सत्कार होता है उस में पुरुष विद्वान् होकर देव संज्ञा प्राप्त करके आनन्द से क्रीड़ा करते हैं और जिस घर में स्त्रियों का सत्कार नहीं होता वहां सब क्रियाएं निष्फल हो जाती हैं। स्वामी जी के मत में पति-पत्नी दोनों का समान स्थान है, अतएव वे लिखते हैं कि जिस कुल में पत्नी से पति और पति से पत्नी अच्छे प्रकार प्रसन्न रहती है, उसी कुल

में सौभाग्य और ऐश्वर्य निवास करते हैं। ऋग्भाष्य १.५०.२ में लिखते हैं कि जैसे नक्षत्र चन्द्रमा के साथ और प्राण शरीर के साथ बरतते हैं, वैसे विवाह करके स्त्री-पुरुष आपस में बरतें। यजु. ६-३४ के भाष्य में प्रेरणा करते हैं कि पुरुष जन अपनी स्त्रियों को निरन्तर प्रसन्न रखें।

संस्कारविधि के विवाह-प्रकरण में वधू के प्रति घर वालों का कैसा व्यवहार होना चाहिए इस विषय में लिखते है—"अपने घर आके पति, सासु, श्वसुर, नणन्द, देवर, देवराणी, ज्येष्ठ, जेठानी आदि कुटुम्ब के मनुष्य वधू की पूजा अर्थात् सत्कार करें। सदा प्रीतिपूर्वक परस्पर वर्त्तें और मधुर वाणी, वस्त्र, आभूषण आदि से सदा प्रसन्न और सन्तुष्ट वधू को रखें।"

इस प्रकार नारी के विषय में दयानन्द के समस्त विचार उसे एक गरिमामय पद पर प्रतिष्ठित करने वाले हैं। इन विचारों का प्रभाव शनैः-शनैः समाज पर पडा है। इनसे नारी जाति के उत्थान में बड़ी सहायता मिली है। दयानन्द द्वारा स्थापित आर्यसमाज ने भी उनके विचारों से अनुप्राणित होकर नारी को समाज में उत्कृष्ट स्थान दिलाने के लिए सराहनीय प्रयास किये हैं।

पंडिता राकेशरानी पर से मुकद्दमे वापस लेने की मांग

अकोला। विजयदशमी के अवसर पर अखिल भारतीय हिन्दू सेना द्वारा अकोला और नागपुर में भव्य शोभायात्राओं का आयोजन कियागया मुसलमानों ने गणेश विसर्जन के जुलूस पर पथराव किया। पुलिस को लाठीचार्ज करना पडा। दुर्गा महोत्सव के अवसर पर विदर्भ क्षेत्र के अनेक स्थानों पर हिन्दू-मुस्लिम तनाव रहा। हिन्दू सेना हिन्दू समाज की रक्षा के लिए प्रयत्नशील है।

१५ नवम्बर को हिन्दू सेना ने महाराष्ट्र विधान भवन पर हिन्दू सैनिकों की रैली का आयोजन किया है। इसमें २५ हजार हिन्दुओं के सम्मलिन होने की आशा है। निम्नलिखित मांगें प्रस्तुत की जायें—१ देश भर में समान नागरिक कानून लागू किया जाये। २. गोहत्या पर पूरी रोक लगाई जाये ३. अयोध्या का राम जन्म स्थल, मथुरा का श्रीकृष्ण जन्म स्थल, और काशी का विश्वनाथ मन्दिर, जहां मस्जिदें बना ली गई हैं, हिन्दुओं को लौटाए जाये। ४. एक से अधिक विवाह न करने का कानून सब पर लागू किया ५. परिवार नियोजन सब पर लागू हो ६. दिल्ली के उपराज्यपाल पंडिता राकेशरानी पर चल रहे ३३ मुकद्दमे वापस लेने का आदेश दें।

जीवन का चरम लक्ष्य : मोक्ष

—महात्मा प्रेमप्रकाश वानप्रस्थी

प्रभु की पवित्र शरण, विमल गोद, सुख, शान्ति और आनन्द कौन नहीं चाहता ? जैसी इच्छा वैसा ही कर्म बुद्धिमान् करते हैं। विशेष सुख की निर्मल धारा में स्नान करने को किसका मन नहीं चाहता ? भवसागर पार करने की शरीर नौका है। भूख न भी हो, अमृत भोजन देखकर भूख जाग उठती है। विद्या पढ़ाने वालों के पास विद्यार्थी जाते हैं, दाता लोगों के पास भिखारी जाते हैं। ऐसे ही मोक्ष इच्छुक को मोक्ष दाता के पास जाना आवश्यक है। मोक्ष अभिलाषी को भगवान् की ओर ऐसे ही खिचे रहना चाहिए, जैसे सूर्य की ओर अग्नि और समुद्र की ओर जल।

सूर्य और चन्द्रमें प्रकाश के साथ अन्धकार भी है। किन्तु भगवान् तो ज्योति स्वरूप है, "आदित्यवर्णं तमसःपरस्तात्"। यजुर्वेद। अर्थात् वहां अन्धकार का लेश भी नही है। सूर्य का प्रकाश भी अपना नहीं, भगवान् का है। प्रभो, हमें चाहिये ज्योति, आप हैं ज्योति पुंज। हमें चाहिये आनन्द; आप हैं आनन्दमय। माँगने से ही कोई वस्तु नहीं मिल जाती; लेने से पहले कुछ देना पड़ता है। देना बड़ा कठिन है, लेना बडा सरल। परन्तु जितनी बढ़िया वस्तु चाहिये उतना अधिक मूल्य देना पड़ता है, अर्थात् त्याग के बिना नहीं मिलेगा मोक्ष। त्याग पैसे का ही नहीं, सम्पत्ति का ही नहीं, परिवार का ही नहीं, यश का ही नहीं, जीवन तक को ब्रह्मानन्द लेने के लिए देना होगा। बोलो, है स्वीकार ? सौदा तो सस्ता है, कोई मूर्ख व्यापारी ही इस सौदे से चूकेगा, क्योंकि यदि सांसारिक पदार्थ हम न भी देंगे, तब भी हम से छिन जायेंगे। कितनी अच्छी बात होगी कि स्वयं ही देकर ब्रह्मानन्द प्राप्त कर लें।

पूर्ण का दान पूर्ण है। संसार में जितना भी आनन्द है उसी का है। परमात्मा सभी स्थानों में है, अतः उसे सभी स्थानों में पाया जा सकता है। देखो, आंखें खोलो, हमारे जीवन की बागडोर उसी के हाथ में है। भगवान्

नित्य है, नित्य की नित्य ही उपासना करनी चाहिए। बन्धुओ ! प्रभु-भक्ति पृथ्वी के तल में भी करो। ज्योति के रूप में प्रकट हो जाती है, क्योंकि ज्योति-स्वरूप के पास बैठने से संगति का प्रभाव हो जाता है। कोई भी क्षण ऐसा नहीं, जब भगवान् सत्य का, कल्याण का, मोक्ष का मार्ग न प्रशस्त कर रहा हो, परन्तु हमारा दुर्भाग्य है कि जब प्रभु प्रेरणा होने लगती है, आनन्द आने लगता है, तो हम अनसुनी कर देते हैं या ऊँघने लग जाते हैं। प्रभु प्रेरणा करते है, हम अवहेलना करते हैं।

सूर्य की किरणें समस्त संसार को प्रकाशित कर देती हैं, जैसे प्रकाश कहीं भी हो, सूर्य का होगा। वैसे ही ज्ञान कहीं भी हो, परमात्मा का होगा। परम पिता आज भी ज्ञान दे रहे हैं, कल भी देंगे। इसलिए ऋषि दयानन्दजी ने लिखा है कि जो पापाचरणेच्छा समय में भय, शंका लज्जा उत्पन्न होती है, वह अन्तर्यामी परमात्मा की ओर से है। (सत्यार्थ-प्रकाश) प्रभु ज्ञान-दाता ही नहीं, प्राणदाता और जीवनदाता भी हैं, मोक्ष का आनन्द भी वही देंगे। मोक्ष से अधिक चाहिये क्या? वेद की आज्ञा है कि धर्म से धन प्राप्त करके पवित्र कामनाओं द्वारा मोक्ष प्राप्त करो। मोक्ष का भाव देवत्व से है। प्रभु देवों के भी देव महादेव हैं, अतः देवत्व उन्हीं के सम्पर्क से मिल सकता है। देवता का जीवन सत्य से ओतप्रोत होता है। सत्यवादी, सत्यकारी, सत्यनिष्ठ की नौकाएँ पार कर देती हैं क्योंकि देव हर समय भगवान् से प्रार्थना करता है—असतो मा सद्गमय। देव को भौतिक कार्य करते हुए मन से ओ३म् का जाप करते रहना चाहिये और प्रार्थना भी। हे प्रभो! तू तेज है मुझे तेज दे, तू बलवान् है मुझे बल दे, तू ओज है मुझे ओज दे, तू सहनशील है, मुझे सहनशीलता दे।

संसार जब सोता है तब मोक्ष इच्छुक जागता है, क्योंकि संसार का और भगवान् का एक साथ ध्यान नहीं किया जा सकता। प्रभु चिन्तन ही विषय वासनाओं से बचा सकता है। यम-नियम का पालन करते हुए ध्यान लगाओ और पार हो जाओ। जो तप का श्रद्धा द्वारा एकान्त में अनुष्ठान करता है वह उसे जान जाता है। जो सब कुछ जानता है, परन्तु उसको नहीं जानता वह कुछ नहीं जानता। उसके जानने के बाद शेष सब जाना जाता है। जिस प्रकार हीरे, स्वर्ण और मोतियों का धनी अन्य धनों को तुच्छ समझता है, वैसे ही जिसने ब्रह्मानन्द प्राप्त कर लिया उसके समक्ष सांसारिक सुख तुच्छ हो जाते हैं।

प्रभु को अपना सर्वस्व अर्पण करने वाले में बड़ी विचित्र शक्ति उत्पन्न

हो जाती है। उसके तप-तेज के समक्ष सब मौन हो जाते हैं। वह मौन होता है तो भी उसके तप की किरणों का प्रभाव दूसरों पर पड़ रहा होता है। उसके उपदेश और आदेश का प्रभाव दूर-दूर तक पहुंचता है। उसकी भावनाओं में विद्युत् शक्ति होती है। वह स्वयं पवित्र होने के कारण सबको सुख-शान्ति और आनन्द की धारा में स्नान करवाना अपना कर्त्तव्य समझता है। प्रभु की ज्योति से उसका जीवन ज्योतिर्मय हो जाता है।

मित्रो, यदि आपके हृदय में मोक्ष की ज्वाला भड़क उठी है, तो निम्नलिखित बातों का ध्यानपूर्वक, कठोरता और ज्ञानपूर्वक अनुष्ठान करो। किसी अनुभवी महात्मा की शरण में जाओ। जब तक महात्मा न मिले, जीवन को आहार व्यवहार, विचार और आचार से शुद्ध करो, सत्य को जीवन का आधार बना लो। धारणा और ध्यान को आत्मा का भोजन समझो। कामनाएं छोड़ दो सांसारिक कार्यों से मुख मोड़ लो और ईश्वर से नाता जोड़ लो। ईश्वर से नाता जोड़ने का अभिप्राय समाधि द्वारा हृदय पटल पर ज्ञान और आनन्द की वृष्टि होना है।

ज्योति स्वरूप परमात्मा और आत्मा का निवासस्थान एक है। अतः मोक्ष की अवस्था में ज्योति चमकती है, जो प्रज्ञा चक्षुओं और गुप्त रहस्यों को खोल देती है।

बम्बई आर्य समाज का निर्वाचन

आर्य समाज बम्बई की सभा निम्नलिखित पदाधिकारी निर्वाचित हुए
श्री गणपतराय आर्य (प्रधान) श्री जगन प्रसाद गौतम (उपप्रधान)
श्री झाऊ लाल शर्मा (उपप्रधान) श्री राजेन्द्र नाथ पाण्डेय (मंत्री)
श्री चमन लाल चांदना (उपमंत्री) और श्री करसनदास जे. राणा (कोषाध्यक्ष)

दयानन्द वेद विद्यालय का स्वर्णजयन्ती समारोह

नई दिल्ली। श्रीमद्दयानन्द वेद विद्यालय, ११९ गौतम नगर, नई दिल्ली—४९ का स्वर्ण जयन्ती समारोह ८, ९ दिसम्बर को बड़ी धूम-धाम के साथ मनाया जा रहा है। इस उपलक्ष्य में १८ नवम्बर से स्वामी दीक्षानन्द जी की अध्यक्षता में चतुर्वेद ब्रह्मपरायण महायज्ञ का आयोजन भी किया गया है। पूर्णाहुति ९ दिसम्बर को होगी। ८ दिसम्बर को नवीन स्नातकों का दीक्षान्त समारोह १० बजे से १२ बजे तक होगा। स्वर्ण जयन्ती समारोह के दिनों में अनेकों गोष्ठियों एवं सम्मेलनों का आयोजना भी किया जाएगा।

घर लुट रहा है प्यारे

कब से पुकारता हूं, सुनते नहीं हो प्यारे !
वंशी बजा रहे हो, घर लुट रहा है प्यारे !
सपनों की दुनियां तेरी, अपनों की दुनिया तेरी !
चल चित्र में बसी है, जीवन की दुनिया तेरी ।
तुम रंग-रास में हो, डूबे विलास में हो ।
सब मिट रहा है तेरा, सुनते नहीं हो प्यारे !
बंगाल तुमने खोया, पंजाब, सिंधु खोया ।
गंगा, चनाब, जेहलम का जल अपार रोया ।
धोया जो घाव हमने, नदियों का लाल पानी ।
भूला नहीं अभी तक, कहता वही कहानी ।
शिशुओं की हाय चीखें, बहनों की वे पुकारें ।
हां, गूंज उनकी अब भी, बुझते नहीं अँगारे ।
कितनी कचोट मन में, कैसे जताऊँ तुझको ।
माता की पीर कैसी, कैसे बताऊँ तुझको ।
तुम झूमते मगन हो, तुम देखते गगन हो ।
धरती की ठोकरों को, गुनते नहीं हो प्यारे !
जो पुण्य भूमि तेरी, जो पितृभूमि तेरी ।
पावन सुरभि रजों की जो मातृभूमि तेरी ।
वह शैल शृंगमाला, शिव की परम पुरी वह ।
शृंगार मातृभू का, गौरव धरा धुरी वह ।
वह शान्ति का सरोवर, शोभा अतुल अचंचल ।
वह स्वर्ग की धरोहर; माता का मुग्ध अचल ।
क्यों आँसुओं से लथपथ; सोचा कभी न तुमने ।
किस पीर में सने सब, सोचा कभी न तुमने ।
देखो कि ताक में अरि, कैसा निशान साधे ।
किस लक्ष्य में लगा वह, विषबाण विषम साधे ।
अब भी नहीं सुने तो, लो सुन रहा लुटेरा ।
आँखों के सामने ही, मिट जायेगा बसेरा ॥

—डॉ० राजेश्वर, भागलपुर

मानसिक स्वास्थ्य

तनावों के अनचाहे बोझ को उतार फेंकिये

—एम० पी० वाग्मी

वर्तमान जीवन की जटिलताओं में, भागदौड़ और व्यस्तता तथा आपसी सम्बन्धों के विस्तृत जाल में व्यक्ति इतना उलझ गया है कि ये परिस्थितियां उसे पल-पल पर उद्वेलित करती रहती हैं। घर हो या दफ्तर, सार्वजनिक स्थल हों या सार्वजनिक सेवाओं के केन्द्र—व्यक्ति को हर स्थान पर अनचाही विरोधी स्थितियां झेलनी पड़ती हैं। यही स्थितियां तनाव उत्पन्न करती हैं।

कुछ लोगों का मानना है कि तनाव वर्तमान युग की नियति है अतः इससे बचने की कल्पना करना ही व्यर्थ है। जटिल परिस्थितियों से भरे वर्तमान जीवन में तनावों को नियति मान लेना चाहिए, क्योंकि इन सारी परिस्थितियों को हम बदल नहीं सकते। किन्तु वास्तविकता यह है कि परि-स्थितियों को बदले बिना भी तनावों से बचा जा सकता है। इसके लिए यह जरूरी है कि हम मानसिक तनाव उत्पन्न करने वाली प्रक्रिया को समझें।

मानसिक तनाव की प्रक्रिया

हमारे शरीर की सारी क्रियाओं का नियंत्रक और संचालक मस्तिष्क है, यह हम जानते हैं। लेकिन हर्ष, विषाद, हास्य, क्रोध और प्रेम तथा घृणा जैसे अनेक संवेगों के बल पर जो हमारे कार्य-व्यापार चलते हैं उनके संवहन के लिए शरीर में स्नायुओं का मीलों लम्बा जाल फैला है। घटनाओं के संदेश को यही स्नायु विभिन्न केन्द्रों तक पहुंचाते हैं और इन्हीं के माध्यम से संवेगात्मक लहरें मस्तिष्क तक पहुंचती हैं। हम बाहरी घटनाओं से जिस मात्रा में प्रभावित हैं, उसी मात्रा में ये संवेग उत्पन्न होते हैं और उसी मात्रा में हम तनाव झेलते हैं।

बस, इन बाहरी घटनाओं से हम जितना ही कम आन्दोलित होंगे, उतने ही कम तनाव हमें झेलने होंगे।

तनावों का घातक प्रभाव

यह समझना भूल होगी कि मानसिक तनाव उत्पन्न करने वाले ये संवेग हमारे ऊपर क्षणिक प्रभाव डालते हैं। उदाहरण के लिए क्रोध, हर्ष या विषाद उत्पन्न करने वाले संवेग हमारे शरीर को केवल उस क्रियाशील क्षण तक ही प्रभावित नहीं करते बल्कि इनका दीर्घकालिक और स्थायी प्रभाव होता है। क्रोध की मन:स्थिति को ही लीजिए। यदि दिन में तीन-चार बार भी हमारी मन:स्थिति क्रोध से प्रभावित हुई तो हमारे शरीर में स्थित स्रावक ग्रन्थियों से इतनी ही बार विषैले तत्त्वों की उत्पत्ति होगी जो रक्त संरचना को दूषित कर हमारे हृदय, मस्तिष्क और पाचन संस्थान को प्रभावित करेगी और हमारी कार्यक्षमता तथा कार्य की गुणवत्ता को भी घटायेगी। इसके विपरीत यदि हम अपनी मन:स्थिति को हर्ष और प्रफुल्लता के आनन्दातिरेक भी भरा रहने दें तो हमारी कार्यक्षमता में वृद्धि होगी, हमारा कार्य अधिक गुणवत्तापूर्ण होगा और शरीर की स्रावक ग्रन्थियां भी रोग-निवारक स्रावों का उत्पादन करेंगी।

तनाव से कैसे बचें ?

इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि तनाव घटनाओं की प्रतिक्रिया से उत्पन्न संवेगों की परिणति होते हैं। अत: उपचार भी यही है कि हम जीवन में घटने वाली प्रत्येक घटना की प्रतिक्रिया नियंत्रित करें। यह भी ध्यान देने योग्य है कि एक ही घटना के सम्बन्ध में सभी लोगों की प्रतिक्रियाएं गणितीय फार्मूले की तरह एक समान नहीं होतीं बल्कि ये उस व्यक्ति के संस्कारों और बौद्धिक धरातल के आधार पर निर्भर करती हैं। इसलिए मानसिक सन्तुलन के अभ्यास और चिंतन प्रक्रिया में सुधार से घटनाओं पर स्वस्थ प्रतिक्रियाओं का सहज अभ्यास हो सकता है और प्रतिक्रियाओं के सन्तुलन से तनावों से मुक्ति पाई जा सकती है।

आत्मनियंत्रण की विधि

जीवन की दैनन्दिन घटनाओं और पारस्परिक कार्य-व्यवहार विशिष्ट वातावरण और परिस्थितियों की देन होते हैं। इसलिए यह प्रश्न उत्पन्न

होना स्वभाविक है कि विषम परिस्थितियों अथवा अवांछित वातावरण पर विजय पाना क्या सदैव संभव है ? और यदि संभव हो तो ऐसी स्थितियों में तनाव मुक्त कैसे रहा जा सकता है ?

विश्वविख्यात विचारक डेल कारनेगी ने इसके लिए एक त्रिसूत्रीय उपाय बताया है। उनका मत है कि आप अपनी सामयिक या स्थायी समस्या का विश्लेषण करें और उसके स्वरूप का निर्धारण करें। इसके बाद समाधान के तीन उपाय हैं —१—बाधित परिस्थितियों को अपने संकल्प और प्रयासों से बदलने का प्रयास करें। २— यदि परिस्थितियों को बदल न सकें तो उन्हें नियति मानकर समझौता कर लें। और अन्तिम उपाय यह है कि ३— उन परिस्थितियों से स्वयं को दूर कर लें जो आपके लिए समस्या बनी हुई हैं। तात्पर्य यह है कि समस्याओं को बिना हल किये लटकाए रखने से तनाव उत्पन्न होता है, इसलिए उन्हें लटकाने की बजाय किसी भी ढंग से हल करें।

अपने परिवेश को तनाव रहित बनाएं

आप घर में हों या दफ्तर में—और घर-परिवार अथवा दफ्तर में सहायक हों या स्वामी–अपने परिवेश को तनाव मुक्त रखने में आप स्वयं अपनी मदद कर सकते हैं। यदि आप सहयोगी हों तो कर्तव्यों और अधिकारों की सूची बनाने की बजाय अधिक से अधिक समर्पण भाव से काम करें। इससे आपके वरिष्ठ अधिकारी प्रसन्न तो रहेंगे ही, आपको भी कर्तव्य पालन का संतोष मिलेगा। यदि आप स्वामी हैं तो स्मरण रखें कि आपकी सेवा में नियोजित लोग आपके सहज स्नेह और आत्मीयता से आपके लिए अधिक समर्पित भाव से काम कर सकेंगे। आलोचना, प्रतारणा अथवा दंडभय के माध्यम से नहीं। और फिर यह भी याद रखें कि उक्त नकारात्मक विधि द्वारा नियन्त्रण के प्रयास से आप स्वतः को आहत करके तनाव ही झेलेंगे। क्या आप स्वयं को ही दंड देना उचित समझेंगे ? तनावकारी स्थितियां उत्पन्न करने वाले अधिकारी या परिवार प्रमुख स्वयं तो तनाव में रहते ही हैं, दूसरों पर भी अवांछित तनाव लाद देते हैं।

मानसिक धरातल को उन्नत करें

आप स्वयं को तनावमुक्त करने की शुरुआत करते हैं तो स्वाभाविक

रूप से अपने आप से जुड़े अन्य लोगों को भी इससे मुक्त करने में सहभागी होते हैं।

तनावों से छुटकारे के लिए व्यवहार और चिंतन में परिवर्तन और उससे भी आवश्यक और महत्त्वपूर्ण उपाय है मानसिक धरातल को विकसित करना।

जीवन की दैनन्दिन घटनाओं की स्वस्थ-अस्वस्थ प्रतिक्रियाएं आपकी मनःस्थिति पर ही निर्भर करती हैं। प्रतिक्रियाओं से जन्मे संवेग ही तनाव के कारण बनते हैं। इसलिए अपने मानसिक धरातल को विकार रहित और सबल बनाने के लिए रचनात्मक और एकाग्रतामूलक कार्यों में जुटें। उदात्त विचार, आत्मचिंतन और उपासना जैसी आध्यात्मिक क्रियाएं मानसिक क्षमताओं में वृद्धि करती हैं और मनोबल से सम्पन्न व्यक्ति अपने ही नहीं सारे समाज के तनावों को दूर करने में सहायक बनते हैं।

तेरी अब खाली गागर है अरि का घट अपने-आप भरा

—पं० उदय शंकर भट्ट

(१)

तेरा ही देश कट गया रे, तेरा ही अंग छट गया रे।
तेरी जमीन से तेरा ही, सारा अधिकार छूट गया रे।
तू तो अखंड का हामी था, वह खंडित हिन्दुस्तान हुआ।
मां का क्षत फूट गया गल-गल, बह कर वह पाकिस्तान हुआ।

(२)

तू रघु को भूल गया पागल, तू चन्द्रगुप्त को भूल गया;
तूने अशोक को भुला दिया, तू व्यर्थ दर्प से फूल गया।
तू भूल गया शक, हूण, यहां आये मिल तेरे संग चले,
सभ्यता धर्म को अपनाकर, वे तेरे बनकर अंग चले।

(३)

जो चन्द्रगुप्त ने रोपा था, जिसको अशोक ने था पाला,
उसकी रह सकी नहीं सत्ता, उसकी रह सकी नहीं छाया,
यह क्योंकि अहिंसा पर कोई, रह सका राष्ट्र है नहीं खड़ा,
यह क्योंकि व्यर्थ का दया-दम्भ, उन्नति के पथ में सदा अड़ा।

(४)

है राजनीति में साम-दाम और दण्ड-भेद ही मुख्य ध्येय,
क्या बना कभी है कहीं राष्ट्र, ले दया अहिंसा और प्रेय ?
नीतिज्ञ कृष्ण मन्दिर में था, पर उसको भी तू भूल गया,
विश्वास पालता रहा झूठ, गीता का ज्ञान समूल गया।

(५)

तू शुक्र और चाणक्य विज्ञ, जो मिले उन्हें भी पढ़ न सका,
तू जीवन पथ पर हार गया, गिर गया, हिमाचल चढ़ न सका
सावन के अंधे मनुज सदृश, तू रहा देखता हरा-भरा,
तेरी अब खाली गागर है, अरि का घट अपने आप भरा।

(६)

तूने जो मरकर पाया है, अरि ने वह जीकर पाया है,
तेरा सब स्वपन आज उसकी, जागृति ने स्वयं बनाया है,
तू शतनायक भी हार गया, तेरा सब खाली वार गया।
तू बहुमत में भी अल्प बना, वह अल्प जाति को तार गया।

(७)

विश्वास नये लेकर तू उठ, आकाश नये लेकर तू उठ !
जो संग चले तेरे उनके, उल्लास नये लेकर तू उठ !
रण गान नये लेकर तू उठ, बलिदान नये लेकर तू उठ !
अपमानित पीड़ित पद-पद पर, वे प्राण नये लेकर तू उठ !

(८)

तू ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र का भेद भूल अभिमान न कर !
तू जैन, सिक्ख और आर्यसमाजी बन न्यारा सामान न कर !
"हिन्दुत्व" एक ही राग उठे, हिन्दुत्व देश में जाग उठे,
खोया सब पुनः प्राप्त करने के लिए जागरण राग उठे !

भारत के उत्तर - पूर्वी राज्य और आर्यसमाज

—डॉ० प्रशांत वेदालंकार

मेरी-उत्तर पूर्वी राज्यों की यात्रा कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण रही है। मैं जहां भी जाता हूं, आर्यसमाज की आवश्यकता. उसके संगठन व कार्यों का समीक्षा मेरा मुख्य विषय रहता है। इस यात्रा पर जाने से पूर्व ही मैंने उस क्षेत्र के प्रमुख आर्यसमाजों व आर्यसमाज के अधिकारियों के बारे में जानकारी प्राप्त कर ली थी।

श्री रामनाथ सहगल ने मेरे जाने की सूचना आर्यसमाज गुवाहाटी तथा आर्यसमाज शिलांग को पहले से ही दे रखी थी। उन लोगों ने मेरे कार्यक्रम पहले से ही अपने-अपने आर्यसमाजों में तय कर दिये थे।

मैं २२ अप्रैल को आर्यसमाज गुवाहाटी में निर्धारित समय से पौन घण्टा विलम्ब से पहुंचा। कोई भी रिक्शा वाला आर्यसमाज के नाम से परिचित नहीं था। कुछ मुझे अतापता बता दिया गया था तथा कुछ पूछते-पाछते बहुत कठिनाई से वहां पहुंचा। डॉ० नारायणदत्त मेरी नीचे ही प्रतीक्षा कर रहे थे। सत्सग ऊपर पहली मंजिल पर हो रहा था।

मैंने पहली शिकायत की कि इस शहर में आर्य समाज का नाम प्रसिद्ध नहीं है। मैंने उनसे निवेदन किया कि शहर के प्रमुख स्थानों पर हिन्दी तथा असमिया में आर्य समाज के नियम व महर्षि दयानन्द के कुछ अच्छे वाक्य शिलाओं पर खुदवा कर लगवा दिये जाएं। उन्हीं के साथ आर्य समाज का पता भी हो। मेरे इस सुझाव को आर्य समाज के अधिकारियों ने माना और मुझे आश्वासन दिया कि दो मास में यह कार्य सम्पन्न हो जाएगा।

गुवाहाटी आर्य समाज की स्थापना आज से २२ वर्ष पूर्व १९६२ में हुई थी। वहां आर्य समाज के प्रमुख अधिकारी श्री ओ३म्प्रकाश आनन्द तथा डॉ० नारायण दास हैं।

मैंने अनुभव किया कि गुवाहाटी आर्य समाज के अधिकारियों का आर्य समाज के माध्यम से काम को बढ़ाने और उस क्षेत्र की मुख्य समस्या का समाधान करने की महती इच्छा है। उस क्षेत्र की महती समस्या है लोगों का — विशेषतः युवा वर्ग का—भारत की मूल धारा से कट कर ईसाइयत की ओर झुकना। वस्तुतः ईसाइयत की आंधी का सम्यक् उत्तर आर्य समाज ही दे सकता है।

गुवाहाटी आर्य समाज ने सन १९७५ में आर्य समाज स्थापना शताब्दी पर श्री परमेश्वर काकती जी द्वारा असमिया भाषा में अनूदित सत्यार्थप्रकाश का प्रकाशन किया तथा अनेक छोटी-छोटी प्रचार पुस्तिकाएं भी प्रकाशित कीं। पर अभी वहां काम की बहुत कमी है।

२६ अप्रैल को मैं गुवाहाटी से शिलांग (मेघालय की राजधानी) गया। मेरे साथ मेरी धर्मपत्नी डॉ० सरोज दीक्षा, बहन श्रीमती विनीता कुमारी, डॉ० नयनबाला शर्मा (प्राध्यापिका श्यामाप्रसाद मुखर्जी कालिज, दिल्ली) श्री हरिनारायण जी (प्राध्यापक अर्थशास्त्र, गोरखपुर), डॉ० लाल (गाजीपुर) प्रो० मिश्र (गोरखपुर) तथा स्वामी सीताराम जी (खुड़खुड़ा गाजीपुर) भी थे। हमारी बस थोड़ी देर से पहुंची। रास्ते में ही हमारी दृष्टि आर्य कन्या विद्यालय पर पड़ी। बस अड्डे पर वहां की आर्य समाज के प्रधान श्री एच० के० खुल्लर अपने साथियों के साथ हमारे आने की प्रतीक्षा में खड़े थे। उन्होंने जिस प्रकार से हमारा स्वागत किया, उससे स्पष्ट लगता था कि उनके मन में यहां आर्य समाज क क्षेत्र में काम करने वालों के प्रति अत्यधिक सम्मान है। कार्य-दिवस होने पर भी उन्होंने आर्य समाज में एक कार्यक्रम का आयोजन किया था। ३०-४० के लगभग आर्य सभासद् वहां उपस्थित थे। मैंने वहां के लोगों की इच्छा के अनुरूप पंजाब समस्या विषय लिया। वहां पर आर्य समाज की स्थिति की जानकारी भी प्राप्त की। वहां भी प्रचारकों की मांग थी।

एक ही शिकायत। एक ही बात। यदि आर्य समाज का काम यहां न बढ़ा तो सभी ईसाई बन जायेंगे। बोले, हम तो अपने विद्यालय के व्याज से यहां के लोगों को अपना बनाने का प्रयत्न करते हैं। पर जितना धन ईसाई मिशनरी अपने विद्यालयों पर व्यय करते हैं, उतना हम नहीं कर पाते। परिणामतः हम पिछड़ रहे हैं। हमें केन्द्र से आर्य समाज की सहायता चाहिए। बोले — हमने सार्वदेशिक सभा को कई बार कहा है कि वे हमारे विद्यालयों को संभाल लें, पर अभी तक कोई कार्रवाई नहीं

की गई। उन्होंने यह भय भी प्रकट किया कि अभी तो हम हैं, जैसे-तैसे संभाल रहे हैं। हमारे न रहने पर इनका क्या होगा?

२७ अप्रैल को मैं इम्फाल (मणिपुर) पहुंचा। वहां एक संस्कृत विद्वान् व महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त श्री गोपाल जी वैद्य तथा उनके पुत्र डॉ० राधागोविन्द कविराज ने एक वेदप्रचारक आर्य सभा (इम्फाल) की स्थापना कर रखी है। इसका पता है — द्वारा आनन्दकृष्ण, साहित्य कला संगम, उरिपोक, लैकाई, इम्फाल, मणिपुर। इन्होंने सन् १९७५ में आर्य समाज स्थापना शताब्दी मनाई तथा एक स्मारिका का प्रकाशन भी किया था। इसके अतिरिक्त श्री सेखरी जी ने सरकार से १०० एकड़ भूमि प्राप्त कर एक आश्रम स्थल की स्थापना की है।

पर आश्चर्य और दुःख इस बात का था कि वहां अभी तक आर्य समाज नहीं था। मैंने वहां के खादी आश्रम के एक अधिकारी तथा भाटिया बन्धुओं से सम्पर्क किया। और वहां विधिवत् एक आर्य समाज की स्थापना कर दी। पर आर्य समाज की स्थापना करने से क्या होता है, यदि हम उस आर्यसमाज की देखभाल का काम यहां से न कर सकें। यह सच है कि अभी तक मैं उनसे दुबारा संपर्क नहीं कर पाया।

इस प्रसंग में उस क्षेत्र में हुए आर्य समाज के अन्य स्थानों पर किये जा रहे कार्यों का विवरण देना भी प्रासंगिक होगा। कामरूप जिले में गुवाहाटी अतिरिक्त १९८२ की वैशाखी को श्री आत्रेय जी के प्रयास से मोलाझार नामक स्थान पर भी आर्य समाज की स्थापना हुई जिसमें श्री शिवप्रसाद शर्मा का विशेष हाथ है। श्री शिवप्रसाद जी ने आर्य समाज के काम की महती भावना से अपने एक पुत्र को ब्राह्म महाविद्यालय हिसार में अध्ययन के लिए भी भेजा है।

तिनसुकिया मेल गाड़ी के नाम से सभी परिचित हैं। वस्तुतः तिनसुकिया असम के डिब्रूगढ़ जिले का एक औद्योगिक नगर है। वहां १० नवम्बर १९८१ को पं० कमलकान्त आत्रेय जी के प्रयत्नों से एक आर्य समाज की स्थापना की गयी है जो वहां के उद्योगपति श्री भगवान् दास जी अग्रवाल की अध्यक्षता में अपना विकास कर रहा है। एक वर्ष के उपरान्त नवम्बर १९८२ में वहां एक वार्षिकोत्सव भी सम्पन्न हुआ। वहां आर्य समाज के भवन व विद्यालय के निर्माण के लिए भूमि ले ली गई है, जो आर्य समाज सेवा ट्रस्ट के अधीन होंगे।

डिब्रूगढ़ जिले में दूसरा आर्य समाज नामरूप में है। इस आर्य समाज को स्थापित हुए १०-२० वर्ष हो गये हैं। इसकी अपनी भूमि है जिसमें पक्की यज्ञ शाला है। इसकी देखभाल का कार्य श्री जी० एल० वजाज करते हैं।

असम के दरंग जिले में दो आर्य समाज हैं। रौता आंचलिक आर्य समाज की स्थापना सन् १९८१ में मराधन श्री प्राथमिक विद्यालय के प्रांगण में आर्य प्रतिनिधि सभा असम के मन्त्री श्री नारायणदास जी के सान्निध्य में हुई। दूसरा आर्य समाज शुक्लाई में है। इसकी स्थापना १९८२ की वैशाखी से अगले दिन हुई। शुक्लाई में पौराणिक बन्धुओं के सहयोग से एक प्रार्थना-गृह भी आर्यसमाजियों ने बनाया है, जहां हर पूर्णिमा व अमावस्या को आर्य समाज का सत्संग होता है।

असम के कार्बिआंगलौंग जिले के बौकाजान नामक स्थान पर अखिल भारतीय दयानन्द सेवाश्रम संघ द्वारा प्रचार कार्य चल रहा है। संघ ने वहां की जनजातियों की महती सेवा की है। संघ की ५० बीघा अपनी भूमि है जिसमें दयानन्द विद्या निकेतन, कार्यालय, अतिथि भवन, गोशाला, यज्ञशाला, छात्रावास, कर्मचारियों के निवास स्थान आदि बने हुए हैं। विद्या निकेतन में १-४ कक्षा तक अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा की व्यवस्था है। कार्बी भाषा भाषी ५० छात्र आश्रम में निवास करते हैं। श्री लीलाधरा इन सब संस्थाओं के संचालक हैं। उक्त संघ की स्थापना श्री ओम् प्रकाश पुरुषार्थी, श्री पृथ्वीराज शास्त्री और स्व० डॉ० सुशील कुमार ने की थी।

कार्बिआंगलौंग जिले के मुख्य शहर डिफू में भी दयानन्द सेवाश्रम संघ का एक छात्रावास है जहां ५० छात्र रहते हैं। वहां एक सरकारी मान्यता-प्राप्त डी० ए०-वी० स्कूल भी है।

फुपडाजान नामक स्थान पर भी दयानन्द सेवा संघ का तीसरा सेवा केन्द्र अपने कार्य में लगा है। यहां ३० बीघा भूमि में एक शिल्पालय की स्थापना की गयी है जिसमें उस प्रदेश की स्त्रियां आकर चादर, शाल, गमछा आदि बनाकर अपना व्यवसाय भी करती हैं और दयानन्द की शिक्षाओं को भी प्राप्त करती हैं। आश्रम में गन्ने की खेती भी होती है।

जिला जोरहाट में २६ जून १९८३ को आर्य समाज का गठन हुआ है। श्री मनोहर लाल भारद्वाज इसके प्रधान हैं।

ग्वालपाड़ा जिले के प्रमुख नगर बंगाईगांव में १९८२ को रामनवमी के

दिन आर्य समाज की स्थापना हुई। इसकी प्रेरणा हावड़ा आर्य समाज के मंत्री श्री पुरुषोत्तम दास जी ने दी। उनके अनुज श्री रामेश्वर प्रसाद जी अत्यन्त लगन से वहां का काम देखते हैं। वहां एक होमियोपैथी औषधालय चल रहा है और शीघ्र एक विद्यालय स्थापित करने का विचार है।

कछार जिले का प्रसिद्ध शहर सिल्चर (शिलचर) में भी एक आर्य समाज है जिसके प्रधान श्री रणजीत प्रसाद कोईरी हैं।

नगालैंड में सन् १९७८ में धूनापुर पुराना बाजार में दयानन्द सेवाश्रम संघ द्वारा दयानन्द विद्या निकेतन खोला गया। नगा भाषा बोलने वाले बच्चे अंग्रेजी माध्यम से यहां शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। वहां एक यज्ञशाला भी बनी है जिसमें प्रत्येक शनिवार को बच्चे तथा शिक्षक सन्ध्या-हवन करते हैं। विद्यालय के प्रधान शिक्षक श्री अटलबिहारी अस्थाना हैं। छात्रावास में रहने वाले छात्रों की संख्या लगभग १३ है।

दीनापुर के मुख्य बाजार में एक आर्य समाज का गठन किया गया है जिसके प्रधान श्री जगदीश जी हैं। श्री जगदीश जी ने ही अपने मकान का बड़ा हाल आर्य समाज के लिए दिया। यहां प्रत्येक रविवार को सत्संग होता है।

मिजोरम की राजधानी आइजोल में आर्य समाज के दो-चार अनुयायी स्थायी रूप से रहते हैं। पण्डित रामप्रसाद जी छत्राली आदि आर्य समाज के पंडित हैं।

त्रिपुरा में भी आर्य समाज का कार्य बिलोटिया और धर्मनगर में विद्यालय और छात्रावास के रूप में चल रहा है।

मैं उत्तर-पूर्वी राज्यों की यात्रा के समय अनेक आर्य सज्जनों से मिला। उन्होंने मुझ से उक्त प्रदेश में आर्य समाज के काम के अधिक प्रचार-प्रसार पर बल दिया। मैं स्वयं भी यह अनुभव करता रहा कि यदि यहां आर्य समाज का कार्य तेजी से न बढ़ा तो इन प्रदेशों में एक विस्फोटक स्थिति उत्पन्न हो सकती है। बंगलादेश से बहुत बड़ी संख्या में मुसलमानों का आना न केवल उन प्रदेशों के लिए विषम स्थिति उत्पन्न कर रहा है, वरन् पूरे देश के लिए ही यह बहुत बड़ी समस्या है। दूसरे ईसाई मिशनरियों का प्रभाव और उनका कार्य सारे प्रदेश को धीरे-धीरे केवल अपने धर्मों से ही विमुख नहीं कर रहा, वरन् राष्ट्र विरोधी भी बना रहा है।

मुझे सिलीगुड़ी जाकर करस्पोंग जाना था। वहां उस क्षेत्र के अत्यन्त

सक्रिय और निष्ठावान् आर्यसमाजी कार्यकर्ता श्री जोखीराम जी से मिल-कर मैंने उस क्षेत्र में आर्य समाज का कार्य बढ़ाने की एक योजना बनायी थी। उनके मेरे पास कई पत्र आ चुके थे। दिल्ली में भी आकर वे मुझसे मिले थे। उनकी इच्छा मुझे वहां एक भूमि का टुकड़ा दिखाने की थी, जिसमें हम एक अच्छा आधुनिक गुरुकुल स्थापित कर सकें। पर यह लिखते हुए मुझे अत्यन्त दुःख हो रहा है कि वहां पहुंचने पर मुझे प्रथम समाचार यही मिला कि वे उसी दिन ३०-३५ प्रतिदर दिवंगत हो गये हैं। मुझे लगा मानो उस क्षेत्र में आर्यसमाज के कार्य को बढ़ाने की भावना ही मर गई होगी। मैं कभी-कभी उनके पत्रों को पढ़ता हूं और मन ही मन उनके उत्साह व निष्ठा को प्रणाम कर लेता हूं। उस निष्ठा से वहां कार्य करने वाला व्यक्ति मुझे दिखाई नहीं देता। कार्य वे भी नहीं कर रहे थे, पर कार्य करने की उनकी बलवती भावना मुझे लगती थी कि किसी दिन अवश्य ही क्रियात्मक रूप धारण करेगी।

इस समय उस क्षेत्र के समस्त आर्य समाजों के सम्मेलन का कार्य श्री रतिराम जी शर्मा कर रहे हैं। १९८० में भी मैं उनसे मिला था। उसके बाद वे भी दिल्ली में आकर मुझसे कुछ विचार-विमर्श करके गये थे। उन्होंने सिलीगुड़ी में कार्य के अतिरिक्त आसपास के सम्पूर्ण क्षेत्र में कार्य करने की एक योजना बनायी है। उसकी सारी देखभाल वही करते हैं। सिक्किम आर्य समाज में पण्डित, प्रचारक आदि भेजने का कार्य वे बराबर करते हैं। यहां तक कि नेपाल के आर्य समाज के यज्ञ की ज्योति को उन्होंने प्रज्व-लित किया हुआ है और वे उसे बुझने नहीं देते। मेरा दुर्भाग्य था कि जब मैं वहां पहुंचा, तब वे वहां नहीं थे। पर मैं उनके घर ही जाकर रुका। मेरे लौटने पर उनका एक पत्र आया जिसे मैं यहां उद्धृत करना आवश्यक समझता हूं —

"आप मेरी अनुपस्थिति में मेरे यहां सपरिवार आकर रुके, यह मेरे लिए गौरव का विषय है। मैं वहां आपको मिल नहीं सका, इसका मुझे खेद रहा। आपसे मिलकर हमें इस क्षेत्र में कार्य करने की विशेष प्रेरणा मिलती है। आप यदि इसी प्रकार से दो चार महीने में एक बार यहां आ जाया करें तो निश्चय ही हम इस क्षेत्र में काम को जमा लेंगे। हमने दार्जीलिंग में एक उत्सव किया था, पर वह वैसा नहीं था, जैसा आप चाहते थे। यदि सार्व-देशिक सभा या आर्य प्रतिनिधिसभा बंगाल हमारे इस कार्य में विशेष सहयोग दे देतीं तो हमारा कार्यक्रम अधिक उपयोगी सिद्ध होता। आप सार्वदेशिक

सभा को सलाह दें कि इधर सच्ची लगन से काम करने वाले कार्यकर्त्ता भेजे। मुसलमान और ईसाई इस वक्त बहुत फायदा उठा रहे हैं। यदि उनका काम इसी प्रकार चलता रहा तो देश का नक्शा बदल जायेगा। आर्य समाज का कर्त्तव्य है कि वह इन्हें रोके। पर यह तभी हो सकता है जब हमें सार्वदेशिक सभा से सहायता मिले।

इस प्रसंग में मैं आर्य समाज सिलीगुडी की विशेष चर्चा करना चाहता हूँ। वहां अनेक आर्य सज्जन हैं, जो पूरे उत्साह से कार्य करते हैं। इस समय श्री जवाहरलाल आर्य अध्यक्ष हैं। वीर बहादुर प्रधान, हरभजराय अग्रवाल तथा डॉ० वीरेन्द्र प्रसाद वर्मा उपाध्यक्ष हैं। अन्य अनेक उत्साही कार्यकर्ता, जिनमें श्री सुभाषचद्र नकीपुड़िया (कोषाध्यक्ष), श्री मोहन चन्द्र गुप्त (पुस्तकालयाध्यक्ष), भगवान् दास गोयल (संयुक्त मन्त्री). राजकुमार आर्य (उपपुस्तकालयाध्यक्ष) तथा राजेन्द्र प्रसाद (प्रचार मन्त्री) आर्य समाज के कार्य पूरा सहयोग देते हैं। महिलाओं में भी श्रीमती शीला गुप्ता, श्रीमता शान्ति देवी व श्रीमती उषा गुप्ता आदि आर्य समाज के कार्य को बढ़ाने में प्रयत्नशील रहती हैं। इनका अपना एक अलग पुस्तकालय है और एक श्रद्धानन्द दातव्य औषधालय भी है, जहां डॉ० आशोष कुमार मलिक प्रतिदिन रोगियों का उपचार करते हैं। समय समय पर बाल सत्संग, महिला-सत्संग सम्पन्न होते रहते हैं। ये लोग वर्ष में एक बार अपना वार्षिकोत्सव भी करते हैं। इसमें आर्य समाज के गण्यमान्य विद्वानों को बुलाकर उनका सम्मान करते हैं। वार्षिकोत्सव के ही अवसर पर ये अपनी स्मारिका का प्रकाशन करते हैं। उसमें भी आर्य समाज के प्रचार के लिए अनेक गण्यमान्य विद्वानों के लेख रहते हैं। इससे इस क्षेत्र में होने वाली आर्यसमाज की गतिविधियों का भी ज्ञान होता है।

इस प्रसग में इस बात को मैं फिर लिखना चाहूंगा, क्योंकि पहले भी लिख चुका हूं और प्रायः इस बात को दुहराता रहता हूं कि आर्य समाज द्वारा खोले गये विद्यालयों की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। १९८० में भी श्री रतिराम शर्मा ने मुझसे कहा था कि यहां के लिए मुझे कुछ अध्यापक दीजिए। मैंने यह सूचना अथवा आवश्यकता समाचार पत्रों में भी प्रकाशित कराई थी तथा इसके लिए सार्वदेशिक सभा को भी लिख दिया था। इस बार भी मुझसे कहा गया कि हमें विद्यालयों के लिए कुछ ऐसे अध्यापक चाहियें, जो स्थायी रूप से यहां रहकर कार्य भी करें और हमारे आर्य समाज के प्रचार कार्य में भी सहायक सिद्ध हों। इस बार भी मैंने उनसे

कहा कि मैं वहां जाकर प्रयत्न करूंगा, किन्तु मुझे मालूम है कि में केवल उन्हें टाल कर ही आ गया हूं। वस्तुत: इस दिशा में आर्य समाज संस्था को ही सक्रिय होना होगा। सार्वदेशिक सभा, आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल या डी०ए०वी० कालेज मैनेजिंग कमेटी को अपनी ओर से कुछ अध्यापक व अध्यापिकाएं वहाँ भेजने होंगे। यदि अध्यापक-अध्यापिका परस्पर दम्पति हों तो उन्हें वहां जाकर कार्य करने में अधिक आसानी होगी। यह स्पष्ट है कि उन क्षेत्रों के विद्यालयों की प्रबन्धकर्त्री सभायें उन अध्यापकों को इतना वेतन आदि नहीं दे सकतीं, जितनी उनकी योग्यता व आवश्यकता है। कुछ धनराशि निश्चित रूप से हमारी अन्य प्रधान संस्थाओं को उनके लिए भेजनी होगी। यदि ईसाई मिशनरी विदेशों से धन मंगाकर यहां के अध्यापकों को ईसाई बना लेते है और अपने प्रचार कार्य में उन्हें लगा लेते हैं, तो इस दिशा में हम कोई योजना क्यों नहीं बना सकते? मैंने ऊपर—सलीगुड़ी के आर्यसमाजी कार्य-कर्ताओं में से एक के नाम का उल्लेख जान-बूझ कर नहीं किया—केवल इसलिए कि मैं उनका नाम पृथक् रूप से एक अनुच्छेद में करूं— श्री सर्वेश्वर झा। वे केवल आर्य समाज सिलीगुड़ी के मन्त्री ही नहीं हैं, वरन् उस सम्पूर्ण क्षेत्र में आर्य समाज के कार्य को नि:स्वार्थ भाव सेहदिन रात एक करके काम को आगे बढ़ाने में दत्तचित्त भी रहते हैं। उनका व्यक्तित्व बहुत ही आकर्षक है। लगभग ४० वर्ष की आयु का वह युवक गौरवर्ण है। माथे पर तेजस्विता है और हर समय आर्य समाज के कार्य को करने की उनमें अदम्य इच्छा है। हमारे वहां पहुंचते ही ये हमसे मिलने आये और इन्होंने उस क्षेत्र की सम्पूर्ण जानकारी हम लोगों को दी। अपने कार्य की सुचारु रूप से चलाने के लिये उन्होंने हम से बार-बार कहा कि हमारे पास वहां से कोई अच्छा पुरोहित भेजिए।

आर्यसमाजी संस्थाओं की यह एक धारणा-सी बन गई है कि पुरोहित बिना किसी धन की इच्छा के दूर देश में जाकर केवल त्यागवृत्ति से पौरोहित्य कार्य करे। विदेशों से आने वाले पादरी एक छोटे-मोटे राज्य के राजा की तरह रहते हैं और अपने कार्य का खूब विस्तार करते हैं। आर्यसमाज को भी कुछ योग्य पुरोहित तैयार करने होंगे, जिनमें आर्यसमाज का कार्य करने की तड़प भी हो और आर्थिक दृष्टि से भी वे इतने सम्पन्न हों कि उन्हें सरकारी व गैर-सरकारी नौकरियों की कोई इच्छा न रहे। न वे पौरोहित्य से प्राप्त यजमान की दक्षिणा पर गिद्ध दृष्टि रखें। क्या सार्वदेशिक सभा सिलीगुड़ी, सिक्किम या अन्य उत्तर-पूर्वी राज्यों

में इस प्रकार के पुरोहितों का एक दल वहां आर्य समाज का कार्य करने के लिए भेजने की योजना बनाएगी ?

श्री सर्वेश्वर झा ने मुझे बताया कि उन्होंने श्री रतिराम शर्मा के नेतृत्व में सीतामाड् तथा वांगराकोट में आर्य समाज का कार्य प्रारम्भ किया है। मालदा तथा पंचगामा में श्री निरंजन कुमार राय तथा श्री बनवारीलाल आर्य की सहायता से कन्या गुरुकुलों की स्थापना की है और हम यहां अपने कार्य को धीरे-धीरे बढ़ा रहे हैं, पर हमारे पास पूरा समय कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं का नितान्त अभाव है।

वे मुझे तथा मेरी पत्नी को सिलीगुड़ी से लगभग २० किलोमीटर दूर एक टी० गार्डन में ले गये जहां उराँव आदिवासियों की बस्ती थी। उन्होंने एक परिवार को आर्य बनाया था, जिसने न केवल मांस, सिगरेट आदि का परित्याग किया था वरन् वह वर्ष में एक वार अपने घर पर एक वृहद् यज्ञ का आयोजन भी करता था। उसके घर में महर्षि दयानन्द का चित्र था। सभी सदस्य, बच्चे और स्त्रियां हमें देख कर हमारे पास नमस्ते करने आ गए थे। हमारे वहां पहुंचने पर सारी बस्ती के अशिक्षित आदिवासी एकत्र हो गये। उन्होंने हमारे साथ भी वृहद् यज्ञ और सत्संग में भाग लिया। मैंने जब उन्हें अपने भाषण में बीड़ी, सिगरेट और मांस के साथ दारू की भी बुराइयां बतायीं तो उन्होंने उन बातों को बहुत ही ध्यान से सुना। हमने उन्हें अपने बच्चों को शिक्षित करने के लिए भी प्रेरित किया। बड़े-बड़े बच्चे थे, पर कोई आठवीं से अधिक नहीं पढ़ा था। प्रायः चौथी पास थे। इच्छा हो रही थी कि वहां एक आर्य-विद्यालय की स्थापना करता चलूं पर मेरे पास साधन कहां थे ? उन आदिवासियों में हमारे सम्पर्क में आने की एक भूख थी, जिसे हम चाहकर भी शान्त नहीं कर पा रहे थे। मेरी इच्छा थी कि मैं यहां से आठ-दस बच्चों को दिल्ली लेता चलूं और उन्हें शिक्षित करके वापस भेजूं, पर मुझमें ऐसा सामर्थ्य कहां था ? हम वहां ५-७ घण्टे रहे। मेरी पत्नी ने वहां के किशोरों और युवकों को एकत्र किया। कुछ ही देर में सौ-डेढ़ सौ किशोर और युवक एकत्र हो गये। उसने वहां उन्हें सामूहिक खेल सिखाए और अपनी एक अध्यापिका मित्र डॉ० नयनबाला शर्मा की सहायता से उन्हें कुछ देश भक्ति धर्म और संस्कृति के कुछ गीतों का ज्ञान भी कराया। आज मैं सोचता हूं कि हमारा २-४ घण्टों का दिया हुआ हुआ वह संस्कार अब तक कपूर बन कर उड़ चुका होगा। पर यह निश्चित है कि जैसे हम उस बस्ती के दीन-हीन आदिवासियों को स्मरण कर लेते हैं, वैसे ही वे लोग भी हमें अवश्य याद

करते होंगे। हम शायद वहां दोबारा न पहुंच सकें, पर कभी कोई ईसाई पादरी निश्चित रूप से वहां पहुंचेगा, उनमें बस जायेगा और उन्हें अपना बना लेगा। वह उन लोगों की दवा, भूख और अशिक्षा की समस्या पर विजय प्राप्त करने में सफल होगा।

हमारी उत्तर-पूर्वी भारत की यह यात्रा हम सब आर्यसमाजियों की आंख खोलने के लिए दिशा का कार्य करती है। हम इस प्रकार की परिस्थितियों से बहुत पहले से परिचित हैं, पर चाहते हुए भी उसका कोई उपचार नहीं करते। हम अपनी संस्था के अनुशासनबद्ध कार्यकर्ता हैं। हम चाहते हैं कि सार्वदेशिक सभा ही वहां की आर्य प्रतिनिधि सभा को सहायता देकर वहां के कार्य की एक विस्तृत योजना तैयार करे। हम यह भी चाहते हैं कि डी०ए०-वी० कालेज मैनेजिंग कमेटी केवल दिल्ली जैसे महानगरों में ही पब्लिक स्कूल न खोले। उसके साथ वह उत्तर-पूर्वी भारत में अपने स्कूलों का एक जाल बिछाये और उसका सारा खर्चा यहीं से हो।

अन्त में मैं यह भी लिखना चाहूंगा कि यदि हमारी सस्थाएं इस दिशा में सक्रिय न हुई तो हम अपने देश का यह सारा क्षेत्र केवल सांस्कृतिक और सामाजिक दृष्टि से ही नहीं गंवायेंगे वरन् वहां की राजनीतिक स्थिति भी हमारे हाथ से निकल जायेगी। मैंने अपने अन्य लेखों में इन क्षेत्रों की राजनीतिक स्थिति पर प्रकाश डाला है। राष्ट्र की भावात्मक एकता के सांस्कृतिक आन्दोलन न चलने के कारण ये सभी राज्य धीरे-धीरे भारत संघ से अपने को पृथक् करने का प्रयत्न कर रहे हैं। वहां के युवकों में न इस देश की भाषा के प्रति ममता है, न इस देश के महापुरुषों का उन्हें ज्ञान है और न वे इस देश के धर्म से परिचित हैं।

मैं केवल आर्य समाजी संस्थाओं से ही नहीं वरन् आर्य समाज से प्रेम करने वाले सभी महानुभावों से निवेदन करना चाहता हूं कि वे उत्तर-पूर्वी भारत की स्थिति पर गम्भीरता से विचार करें। जो युवक व युवतियां वहां जाकर कार्य करने को इच्छुक हों, वे मुझसे सम्पर्क करने की कोशिश करें। वहां से लौटते हुए मेरे मन में एक इच्छा जगी थी कि एक स्वतन्त्र संस्था का निर्माण करके उस क्षेत्र में कार्य प्रारम्भ कर दूं, पर मुझे लगा कि कहीं। मेरे इस प्रयत्न को अन्यथा न ले लिया जाये। यदि आर्य-समाजी संस्थाएं इस कार्य के लिए एक मंच पर आकर इस कार्य को अपने हाथ में लें, तो समस्या का कुछ समाधान हो सकता है। कार्य को प्रारम्भ करने के लिए दो करोड़ रुपये की छोटी राशि चाहिये।

जब तक हमारी संस्थाएं इस दिशा में कार्य नहीं करतीं, तब तक हमारे आर्य वीर दलों को उस क्षेत्र में जाकर कुछ शिविर आयोजित करने चाहियें। इस कार्य के लिए भारत सरकार तथा उन क्षेत्रों की सरकारें भी सहायता करेंगी। उत्तर भारत में होने वाले आर्य वीर दलों के शिविरों में उस क्षेत्र के युवकों को निमंत्रित करना चाहिए और उनके मन में भारतीयता, भारतीय भाषा एवं भारतीय संस्कृति के प्रति निष्ठा जागृत करनी चाहिये। आर्य वीरों के अतिरिक्त निष्ठावान् सेवानिवृत्त आर्य समाजी अथवा वानप्रस्थी भी इस दिशा में अग्रसर हो सकते हैं। मैं उस क्षेत्र में कार्य करने के इच्छुक सभी लोगों का आह्वान करता हूं।

★

"मुस्लिम इंडिया" की बहकी-बहकी बातें

"मुस्लिम इण्डिया" में प्रकाशित २० मई १९८४ की सूचना एवं लेख जिसमें आदरणीय पं० जयप्रकाश आर्य को बुरा-भला एवं गया-गुजरा कहा गया है; हमने देखा। क्या भारत में किसी को हिन्दू बन कर जीने का अधिकार नहीं है? उस लेख में "मुस्लिम इण्डिया" के सम्पादक सय्यद शहाबुद्दीन ने जो ढंग अपनाया है और पं० जय प्रकाश जी (पूर्व इमाम) का जो अपमान किया है; कोई भी समझदार हिन्दुस्तानी नागरिक उसे बरदाश्त नहीं कर सकता। अफसोस तो इस बात का है कि यह व्यक्ति जिसने पिछले दिनों बेतिया (बिहार) में खुले मंच पर यह कहा था कि "भारत का हर वह टुकड़ा जिसमें मुसलमान रहता है वह पाकिस्तान है और पाकिस्तान का है," देश-द्रोह की बातें करते हुए भी भारत का नागरिक है। इसी शहाबुद्दीन ने पिछले साल मुस्लिम संसद सदस्यों को इकट्ठा करके यह कहा था कि "इस्लाम खतरे में है," जिस पर प्रधान मन्त्री इन्दिरा गांधी को भी अपनी नाराजगी जाहिर करनी पड़ी थी। इससे ज्यादा भारत देश के साथ गद्दारी और क्या हो सकती है?

इस शख्स ने अपने अखबार का नाम भी "मुस्लिम इण्डिया" रखा है।

क्या कोई हिन्दू पाकिस्तान में रहते हुए अपने अखबार का नाम "हिन्दू पाकिस्तान" रख सकता है ? अगर नहीं तो फिर भारत में इस तरह के नाम के पत्र को प्रकाशित करने की इजाजत इन देशद्रोहियों को क्यों और कैसे मिल गई ? जहां तक हम जानते हैं, किसी भी मुद्रक-प्रकाशक को किसी पत्र की भी स्वीकृति जिला प्रशासन और राज्य प्रशासन से लेनी पड़ती है।

श्री शहाबुद्दीन ने पं० जयप्रकाश जी को अनाथ बताया है, हालांकि उनके पिता सय्यद अब्दुल कादिर इतने स्वस्थ हैं कि श्री शफीक जैसे अनेकों बच्चे उनके द्वारा जनमाए जा सकते हैं। श्री शहाबुद्दीन को चाहिए कि पहले सही जानकारी प्राप्त करें, उसके बाद ही कुछ लिखें।

बेतिया शहर में लगभग उन्नीस मस्जिदें हैं, जिनमें से ३ मुख्य मस्जिदों में ३-३ या ४-४ साल करके लगभग १२-१३ साल श्री जयप्रकाश जी इमाम रहे हैं। जिस दुकान की बात कही गई है वह पण्डित जी की अपनी दवा की दुकान थी। अगर श्री शहाबुद्दीन बेतिया डिस्ट्रिक्ट जेल एवं जिला कलेक्टर से भी सम्पर्क कर लेते तो उन्हें पता चल जाता कि वहां पण्डित जी का कितना अच्छा प्रभाव था कि मुस्लिम एवं क्रिश्चियन दोनों की तरफ से सरकारी अनुदेशक मुकर्रर किये गए थे। परन्तु श्री शहाबुद्दीन को कुछ गलत बातें लिखकर अपने विदेशी धनदाताओं को खुश करना था। शायद उन्हें डर होगा कि इन शुद्धियों के कारण कहीं पाकिस्तान और अरब देशों से छिपे तौर पर मिलने वाला रुपया बन्द न हो जाए। परन्तु ये लोग सच्चाई को कब तक छिपा सकते हैं ?

—मदनगोपाल अग्रवाल, हिसार

प्रत्येक हिन्दू परिवार में होना ही चाहिए

पवित्र धर्मग्रन्थ : परमात्मा की वाणी

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

मंत्रार्थ-व्रजभावार्थ-छन्द-स्वर-देवता आदि सहित

लागत मूल्य लगभग ४४४ रु०

किन्तु-प्रचार के लिए अपने सदस्यों को

जनता संस्करण : २२५ रु०, पुस्तकालय संस्करण : २५१ रु०

५० रु० अग्रिम भेजें। रेलवे स्टेशन लिखें।

१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, करौलबाग, नई दिल्ली-५

दूरभाष : ५६२६३६ ५६४७४१

जब काबुल एक हिन्दू राज्य था

—पुष्पा राठौर

आजकल अफगानिस्तान विश्व की राजनीति का एक बहुत बड़ा अखाड़ा बना हुआ है। भारतीय वाड्मय के अध्ययन से पता चलता है कि यह किसी समय महान् आर्य संस्कृति का क्रीड़ा-स्थल था। वामियान में भगवान् बुद्ध की विशाल और अद्भुत प्रस्तर मूर्तियाँ इस बात का सबूत हैं कि यह कभी बौद्ध संस्कृति का भी केन्द्र रहा। शाही राजाओं के जमाने में हिन्दू संस्कृति भी फलती-फूलती रही।

काबुल के हिन्दू राजाओं के सम्बन्ध में विशेष एतिहासिक सामग्री तो उपलब्ध नहीं है, परन्तु इतिहासकार अलवेरुनी ने उनके सम्बन्ध में जो कुछ विवरण प्रस्तुत किया है, वह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि ये राजा बडे लोकप्रिय शासक थे। अलवेरुनी का कहना है कि ये राजा कभी न्याय पथ से विचलित नहीं हुए और जनता की भलाई में निरन्तर तत्पर रहे। उस कट्टर साम्प्रदायिकता के जमाने में, जबकि मुस्लिम आक्रान्ता एक हाथ में कुरान और दूसरे में तलवार लेकर विश्व विजय के पथ पर अग्रसर हुए थे, एक मुस्लिम इतिहासकार की लेखनी से इन शब्दों का लिखा जाना इन राजाओं के गौरव में और भी चार चांद लगा देता है।

काबुल के इन शाही राजाओं की कहानी बड़ी रोचक है। कहा जाता है कि कल्लर नामक ब्राह्मण के हाथ एक बहुत बड़ा खजाना लग गया था। वैसे भी वह बड़ा योग्य और प्रतिभाशाली व्यक्ति था, किन्तु धन हाथ पड़ जाने से उसकी शक्ति और प्रभाव दोनों ही और भी अधिक बढ़ गये। इसका फल यह हुआ कि वह टर्की के कुशाण राजा लगातुर्मन का मन्त्री बन गया। चूंकि यह राजा बड़ा निर्दय, अत्याचारी और दुश्चरित्र था, इसलिए अन्त में उसके व्यवहार से तंग आकर जनता में विद्रोह की आग भड़क उठी।

दुरदर्शी मन्त्री ने इस अवसर से लाभ उठाया और जनता की सहायता से राजा को सिंहासन से च्युत कर स्वयं राजा बन बैठा। इस तरह इस कल्लर नामक ब्राह्मण ने काबुल के शाही राजवंश की नींव डाली। इस वंश के राजाओं का राज्य डेढ़ शताब्दी से अधिक समय तक पंजाब से लेकर काबुल तक फैला रहा।

इन राजाओं का कोई क्रमबद्ध इतिहास तो हमें नहीं मिलता, परन्तु अलबेरूनी, मिन्हाजुद्दीन तथा अलबदायूनी के ऐतिहासिक विवरणों और उन सिक्कों से, जो उन राजाओं ने अपने शासन काल में चलाये, इनके वंशक्रम का पूरा पता चल जाता है। जहां तक सिक्कों का सम्बन्ध है, कल्लर राजा के नाम का हमें कोई सिक्का नहीं मिलता, परन्तु एक बार अफगानिस्तान में स्पाल पतिदेव के नाम के बहुत से सिक्के पाये गये थे। महान् पुरातत्त्ववेत्ता सर अलैग्जैंडर कनिंघम का कहना है कि यह कल्लर ही स्पाल पतिदेव था। राजतरंगिणी में भी इस राजा का उल्लेख मिलता है और कहा जाता है कि कश्मीर के राजा शंकर वर्मा ने इसके राज्य पर आक्रमण किया था, जो हार कर वापस कश्मीर लौट आया था।

शाही राजवंश

स्पाल पतिदेव के जिन सिक्कों का ऊपर जिक्र किया जा चुका है, वे पैसे से कुछ छोटे और पतले हैं। इनके एक ओर 'शिव का नन्दी' और स्पल पतिदेव का नाम अंकित है जबकि दूसरी ओर भाला हाथ में पकड़े, लम्बा कोट और पगड़ी धारण किये हुए, उछलते घोड़े पर सवार स्वयं राजा का चित्र अंकित है। ये सिक्के इतने लोकप्रिय हुए कि इस राजवंश के अस्तगत होने के बाद दिल्ली के तोमर के और चौहानों, नरवर के कुशवाहों, कांगड़ा के राजपूत राजाओं और कुछ मुस्लिम बादशाहों ने भी इस किस्म के सिक्के चलाये।

यहां यह बता देना भी उचित होगा कि इस राजवंश का 'शाही' नाम क्यों पड़ा। ईरान के प्राचीन राजाओं की तरह कुशाण राजाओं को भी 'शहंशाह' कह कर सम्बोधित किया जाता था। इनके उत्तरवर्ती ब्राह्मण राजाओं ने भी यह परम्परा कायम रखी। इस तरह ये राजा शाही कहलाये।

ये राजा काबुल के शाही राजा के नाम से मशहूर थे। उस समय एशिया भर में इन्हीं की तूती बोल रही थी और ये हिन्दुत्व के कट्टर हिमायती थे।

□

हिन्दुओ, जागो !

—सत्यभूषण 'शान्त' वेदालंकार, एम. ए.

मिट रहा तुम्हारा मान हिन्दुओ जागो।
मिट रही तुम्हारी शान हिन्दुओ जागो॥
बहुसंख्यक होकर भी कुछ सत्त्व नहीं है
इस मातृभूमि से क्यों अपनत्व नहीं है।
सो गया आज इतिहास सुनहला जानो।
भीरुता बढ़ रही, क्या ममतत्व नहीं है॥
सदियों की तन्द्रा, निन्द्रा अब तो त्यागो।
मिट रहा तुम्हारा मान ...

थी शक्ति तुम्हारी जिससे सुरपति कांपा।
आसेतु हिमाचल तुमने भू को लांघा॥
तुम चक्रवर्ती शासक जग के कहलाये।
सब देव, दनुज नतमस्तक होकर आए॥
पर अब क्या बात, स्वधर्म कर्म से भागो।
मिट रहा तुम्हारा मान — —

पेट्रो-डालर के बल पर वंचित होते।
ईमान बेचते और प्रतिष्ठा खोते॥
अपनों का ही अपने से ही बिछुड़ाये।
अलगाववाद की इस कुरीति को त्यागो।
मिट रहा तुम्हारा मान —

वह कहां विक्रमादित्य कि विक्रमशाली।
वह चन्द्रगुप्त की लुप्त कहां श्री न्यायी॥
वह कहां प्रताप शिवा की शान निराली।
और भगतसिंह बिस्मिल की छवि मतवाली॥
हुंकार करो, फिर रिपु को सत्वर नाशो॥
मिट रहा तुम्हारा मान—

है यत्र, तत्र ही पतन तुम्हारा होता।
रिपु वार कर रहा, तुम्हें देख कर सोता ॥
तुम फिर भी चादर ताने क्यों सोये हो।
ना जाने किन सपनों में तुम खोए हो ॥
यह "शान्त" प्रमादालस्य विवशता त्यागो।
मिट रहा तुम्हारा मान हिन्दुओ जागो।
मिट रही तुम्हारी शान हिन्दुओ जागो ॥

दासता का तमाचा

"तुम्हारा नाम क्या है ?

मेरा नाम दासता है।

अब स्वाधीन भारत में दासता का क्या काम ? चली जाओ यहां से। मैं स्वाधीन भारतीय हूं। मुझे तुम्हारी आवश्यकता नहीं। मैं तुम्हारा कलंकित मुंह नहीं देखना चाहता। क्रोध के आवेश में मैंने कहा।

किन्तु दासता चुपचाप वहीं की वहीं खड़ी रही। टस से मस नहीं हुई। व्यंग्यात्मक ढंग से उसने धीमे स्वर में कहा—'३५ वर्ष हो गए आपको स्वाधीन हुए। परन्तु आपकी वेशभूषा अंग्रेजी है। घर का सारा रहन-सहन अंग्रेजी है। आपके बच्चे कान्वेंट स्कूलों में पढ़ते हैं। आप किसी पर थोड़ा सा उत्तेजित होते हैं तो अंग्रेजी में गालियां बकते हैं। अपनी धर्म पत्नी को डार्लिंग कहते हैं। आपके बच्चे माता जी-पिता जी कहने में शर्माते हैं। वे पापा-मम्मी कहते हैं। आप कैसे स्वाधीन भारतीय हैं ? कौन-सी भारतीयता आप में है। आप तो पूर्ण रूप से दास हैं। लेकिन आप किस बात में अपने को स्वाधीन मानते हैं। हिन्दी को गिरवी रखकर अंग्रेजी की वकालत करने वाले भारतीय, तुम स्वाधीन हो ! भले ही अंग्रेज चले गये, अंग्रेजों का शासन नहीं। लेकिन आप का मन अंग्रेजों की दासता से मुक्त नहीं। अंग्रेजियत तुम्हारे ऊपर सवार हो गयी है। समझे ?

इतना सुनकर मेरा अभिमान चूर-चूर हो गया। मैं ३७ वर्ष से स्वाधीन हूं। तब भी मैं अंग्रेजियत का दास हूं। मेरे गाल पर दासता का कस कर तमाचा पड़ा। मैं नींद में सो रहा था। एक आंख खुल गई। उद्विग्न हो गया था। सोच में पड़ गया था।

—रतनलाल रत्नेश

ऐतिहासिक कहानी

सतीत्व की रक्षा के लिए

—रजनीकांत वर्मा

चिंतामग्न क्यों बैठी हो, महारानी जी ! मस्तिष्क में पीड़ा हो तो दाब दूं ? हठात् कक्ष में प्रविष्ट होकर प्रधान चेटी चित्रलेखा ने अरगल की महारानी जगदम्बा से पूछा ।

प्रातःकाल का समय था । महारानी स्नान-पूजन के उपरान्त बिना जलपान ग्रहण किए शोक मग्न-सी पर्यंक पर तकिये का सहारा लिए बैठी थी ।

—"नहीं री चित्रलेखा, कोई पीड़ा नहीं है," चित्रलेखा के हाथ को मस्तक से हटाते हुए महारानी बोली ।

—"फिर क्यों शोक मग्न-सी बैठी हैं आप, बताइए मुझे ।"

—'हां चित्रलेखे, तुझसे नहीं तो फिर किससे कहूंगा, तू मुझसे भिन्न कहां । कल अमावस्या है । मैंने महाराज की विजय के लिए गंगा मैया से मनौती मानी थी, कल गंगा स्नान एवं पूजन करना मेरे लिए आवश्यक है ।"

—"तो इसमें कैसी चिंता की बात ? कल चलियेगा स्नान करने ।"

—"परन्तु गंगा घाट तो अवध के सूबेदार के राज्य में पड़ता है । यदि मैं महाराज से कहती हूं, तो वे साथ में सेना नहीं भेज सकते । ऐसा करने से सूबेदार सीमा का अतिक्रमण मानेगा । महाराज के मना कर देने पर स्नान हेतु जाती हूं तो पति की आज्ञा की अवहेलना होने से पतिव्रत धर्म छूट जाता है । यदि स्नान नहीं करती तो गंगा मैया को वचन कर्म छूट

जाता है। मेरी समझ में नहीं आता कि मैं क्या करूँ चित्रलेखा।" महारानी के नेत्रों में आंसू छलछला आए।

—"तो इसमें क्या हुआ महारानी, मैं कल आपके साथ चली चलूंगी।"—परन्तु सूवेदार……?……वह शत्रु का क्षेत्र है।"

"होगा! क्या कर लेगा, वह सूबेदार का बच्चा? अभी कुछ माह पूर्व ही तो महाराज से पराजित होकर भाग गया था। आया था दिल्ली के सुल्तान नासिरुद्दीन की आज्ञा से अरगल राज्य से कर वसूलने! कायर कहीं का। आप संशय हटा दीजिये। कल मैं चलूंगी। महाराज ब्रह्मभोज करने जा रहें हैं। उसमें व्यस्त रहेंगे। हम दोनों चली जायेंगी आपको महाराज से पूछने की आवश्यकता नहीं।"

□ □ □ □

दूसरे दिन सूर्योदय से पूर्व महारानी जगदम्बा चित्रलेखा के साथ अरगल दुर्ग के बाहर निकलीं। पूजन का सामान—स्वर्णमुद्राएं चित्रलेखा एक थाल में लिये थी। इसी समय पालकी उठाये कहार आ गये। रानी चित्रलेखा के साथ पालकी में जा बैठी। कहार पालकी लेकर बक्सर घाट की ओर चल दिये।

बक्सर घाट पर बड़ी भीड़ थी। धार्मिक श्रद्धालु स्त्री, पुरुष, बच्चे गंगाजल में स्नान कर रहे थे। पंडित मंत्रों का उच्चारण करते हुए यजमानों से दक्षिणा ले रहे थे। उनमें धनिक वैश्य सपरिवार टिके हुए मेले का आनन्द ले रहे थे। यह मेला सात दिन तक चलता था। दो मील तक विस्तृत गंगा के किनारे के मैदान में मेला फैला हुआ था। उसी घाट के दक्षिण की ओर अवध के सूबेदार अलाउद्दीन का कैंम्प लगा था। वह अपने कुछ सैनिक सरदारों एवं अपने परिवार के साथ अपनी हार का दुःख मिटाने मेले में आया था। अभी कुछ ही दिन पूर्व उसे अरगल के महाराज पुंडीर देव गौतम से भीषण पराजय खानी पड़ी थी। वह दिल्ली के बादशाह नासिरुद्दीन द्वारा अरगल से कर वसूलने के लिए नियुक्त हुआ था। इसी भीषण हार के कारण वह बादशाह के पास न जा सका था।

जिस काल की कथा हम कह रहे हैं उन दिनों ऐसे मेलों में मुसलमान शासकों की ओर से तमाम कुट्टनियाँ घूमा करती थीं, जिनका कार्य भोली-भाली सुन्दर युवती स्त्रियों को मेले में देखकर शासकों को सूचना देना होता था। इनकी सूचना पर शासकों के लुटेरे बड़ी कुशलतापूर्वक उनका

अपहरण कर लेते थे।

इन्हीं कुट्टनियों में खदीजा नाम की एक कुट्टनी हिन्दू संन्यासिनी का वेष बनाये घूम रही थी। घूमते हुए वह पक्के घाट पर लगे हुए काशी के रामशास्त्री के कैम्प की ओर जा पहुंची। वहां उसने दो अनिन्द्य रूपसी युवतियों को देख बात सुनी तो चौकन्नी हो गई।

रानी जगदम्बा गंगा स्नान कर पूजन कर रही थी। चित्रलेखा अशर्फियों का थाल लिए पास में बैठी थी। शास्त्री जी बोल रहे थे—'बेटी ! तुम अपने पति को साथ क्यों नहीं लायी ? उनके रहने से विधिवत् पूजन का—स्नान का फल कुछ और ही होता।"

—'पंडितजी ! ये अरगल के महाराज पुंडीर गौतम की रानी हैं। इन्होंने महाराज के युद्ध में जाने पर गंगा मां से मनौती मानी थी।

"अच्छा बेटी ! अरगल की रानी को मेरा प्रणाम स्वीकार हो। तुम उस वीर धर्मनिष्ठ की पत्नी हो जिसने अभी कुछ मास पूर्व अवध के सूबेदार को पराजित किया है। अहोभाग्य है मेरा कि हम ऐसे वीर की रानी की अर्चना सम्पन्न करा रहे हैं।"

खदीजा के कान में ये शब्द पड़े। वह तुरन्त सूबेदार के कैम्प में जा पहुंची। बोली, ,नवाब साहब ! अरगल की रानी छिपकर गंगा नहाने आयी है। उसके साथ एक दासी के अलावा और कोई नहीं है। यह बड़ा बढ़िया मौका है। आप उसे क़ैद कर लीजिये। फिर राजा गौतम से मनमानी शर्तें पूरी कराइए। हार का बदला लेने का इससे अच्छा मौका फिर न मिलेगा।"

नीच सूबेदार ने खदीजा की सलाह मानकर अपने सैनिकों के साथ रामशास्त्री का कैम्प घेर लिया। मेले में भगदड़ मच गई। किन्तु रामशास्त्री कैम्प में स्थित स्त्री-पुरुष अपने स्थान पर अविचलित खड़े रहे।

सूबेदार रानी के समीप अपना घोड़ा ले जाकर कड़क कर बोला, "अरगल की रानी साहिबा, हम आपको क़ैद करते हैं। चुपचाप डोले में बैठकर मेरे साथ चली चलें, जब मैं अपनी हार का इन्तक़ाम चुका लूंगा, तो आपको छोड़ दूंगा।"

सूबेदार के वचन सुनते ही सम्पूर्ण मेले में खलबली मच गई। सूबेदार अरगल की रानी का अपहरण करने आया है, यह अप्रत्याशित खबर विद्युत्

वेग से मेले में उपस्थित हर व्यक्ति जान गया।

रानी अपने जगदम्बा नाम को सार्थक करती हुई वीरांगनोचित वाणी में बोली, रे नीच, कुछ ईश्वर से डर। कायर, पापी अभी कुछ दिन पूर्व पुरुषों से हार कर भाग गया था। अब मुझ अबला से लड़ने आया है।"

"क्रूर, दुष्ट !" चित्रलेखा चिल्लायी उसका मुख क्रोध से तमतमा आया।"

—'हे...हे! काफिरों की बुलबुलों की घेरे में आकर ऐसे ही बकवास करने की आदत होती है। मैं मजहब से यों डरूँ। रसूले खुदा ने कहा है, लूट में काफिरों की औरतों से ऐश करना शरअ में जायज है। पकड़ लो अख्तर इन दोनों को! अगर शराफत से न चलें तो जबरदस्ती घोड़े पर बिठा कर ले चलो। यह लौंडिया भी कितनी हसीन है।" सूबेदार अपने सिपहसालार अख्तर से बोला।

अख्तर घोड़े से उतर कर कुछ कदम आगे बढ़ा। बोला, "रानी साहिबा चलिए आपको सूबेदार साहब के हरम में कोई तकलीफ नहीं होने पाएगी। ये लौंडियां मेरे साथ ऐश करेगी।"

अख्तर के वचन सुनकर चित्रलेखा पुकार उठी, "क्या इस मेले में आर्य रक्त इतना क्लीव हो गया है कि मेरी लाज की रक्षा इन कायरों से लड़कर नहीं कर सकता। सब पलायन कर रहे हैं। ये परशुराम के वंशज ब्राह्मण भी स्तंभित खड़े हैं।"

रानी गरज उठी "क्या कोई ऐसा वीर यहां नहीं जो अपने अस्त्र मुझे दे सके। मेरे पति ने वैरियों से कभी हार नहीं मानी है, न ही मैं झुकूगी। यहीं लड़ मरूँगी।"

"ठहरो आर्य माताओ! हम आ गए। राजपूत रक्त क्लीव नहीं हैं कि इन नारकी म्लेच्छों से मातृशक्ति की रक्षा न कर सके।"

इसी समय शास्त्री जी के कैम्प के समीप स्नान कर रहे मुशीपट्टम् के बैस राजपूत निर्भयचन्द और अभयचन्द अपने साथियों सहित अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित हाथ में नग्न तलवारें लिए भीड़ को चीरते हुए तथा भीषण गर्जन करते हुए आ पहुंचे।

निर्भयचन्द और अभयचन्द दोनों सहोदर भाई थे। निर्भय ने हुंकार कर कहा "माता जी, आप पालकी में बैठ जाइए। आपको सुरक्षित घरगल पहुंचाना हमारा धर्म है।"

निर्भय के वचन सुनकर अख्तर उपेक्षा से बोला— "चल भाग। तुम सब यहाँ क्यों आ गये। क्यों बीच में पड़ रहा है? हट डोले के पास से।"

—"कायर।" तू डोले का स्पर्श भी नहीं कर सकता। इनकी रक्षा करना मेरा धर्म है। नारी को संकटग्रस्त देख जिसकी भुजायें नहीं फड़कीं, अबलाओं की रक्षार्थ जो बलिदान हेतु प्रस्तुत नहीं हुआ वह क्लीव पुरुष कहलाने का अधिकारी नहीं, ऐसा क्लीव इतिहास का कूड़ादान ही है।"

अभय हुंकार कर साथियों से बोला "साथियो, यह शाक्त वंश के इतिहास में सर्वाधिक महत्त्वपूर्व परीक्षा का क्षण आ गया है। तुम्हें आदि पूर्वज महाराज शालिवाहन की शपथ है, वैस कायर न कहलाने पायें। इन आर्य अबलाओं के शरीर को म्लेच्छ हाथ न लगाने पायें।"

—"हम वैसों के रहते मातृ-शक्ति का अपमान असंभव है। हम इन्हें तलवारों की छाया में सुरक्षित अरगल पहुंचायेंगे।" सभी वैस हुंकार उठे।

—"क्यों मर्द होकर औरतों का पक्षपात करता है।" सूबेदार घोड़ा बढ़ाते हुए बोला—"कायर, तू कबसे मर्द हो गया?" निर्भय दहाड़ उठा —'जो नारी पर बल प्रयोग करे वह कायर होगा, क्लीव होगा, नपुंसक होगा। वह पुरुष कभी नहीं हो सकता। नामर्द कायर, अपने को मर्द कहते लाज नहीं आती?"

—"बन्द कर काफिर, अपनी जबान। अब भी कहता हूं चुप-चाप चला जा। क्यों अपनी जान देना चाहता है।"

—"राजपूतों का जन्म ही बलिदान के लिए होता है।"

—"क्यों मर्द होकर औरतों के लिए कुर्बानी देने पर तुला है? रानी को सूबेदार के हरम में जाने दे। इस रानी के साथ जो लौंडिया है, उसके लिए तुझसे वादा करता हूं, इसके साथ ऐश कर तुझे भी दे दूंगा। आखिर औरत इस्तेमाल के लिए ही खुदा ने बनाई है।" अख्तर बोला।

"अनर्गल मत बक कायर। नारी व्यभिचार के लिए नहीं पूजा के लिए है। ले, इन अबलाओं की रक्षक तलवार का पानी पी। जयशंकर! हर-हर महादेव!"

निर्भय ने एक करारा तलवार का वार किया। उसने ढाल पर तलवार

का वार रोका और घोड़ा कुदा कर पीछे हट गया। भीषण मारकाट मच गई।

अख्तर निर्भय से बोला, "तेरे धर्म में नारी अष्ट अवगुणों से पूर्ण बताई गई है, उसकी इज्जत क्यों करता है ?"

—"अष्ट अवगुणों से युक्त होने पर भी, वीरों को जन्म देने वाली नारी सहस्र वंदना के योग्य है। कायर, व्यर्थ की बात मत कर......" निर्भय ने तलवार चलाते हुए कहा।

राजपूत पैदल थे और शत्रु घोड़े पर, परन्तु उन्होंने अपने शौर्य से कुछ ही क्षणों में शत्रु के चार-पांच सिपाहियों को मार गिराया।

निर्भय की तलवार का एक करारा वार अख्तर के ऊपर पड़ा, परन्तु उसका घोड़ा पलट पड़ा। तलवार गोड़े की गरदन में धंस गयी। घोड़ा धराशायी हो गया। अख्तर घोड़े के नीचे दब गया। निर्भय उसे मारने बढ़ा पर शत्रुओं ने उसे घेर लिया। वह अकेला अनेक से भिड़ गया।

अभय सूबेदार से जूझ रहा था। सूबेदार ने उसके साथियों पर एक गुल्म रेल दिया और स्वयं पीछे से निर्देशन करने लगा।

अभय के कुछ साथियों ने घेरा तोड़ा और निर्भय की ओर बढ़े पर निर्भय की ओर घेरा बढ़ता ही जा रहा था। अभय जोर से बोला— "वीरो, निर्भय की चिंता मत करो। यह घेरा तोड़कर डोला आगे बढ़ाओ।"

चार राजपूत निर्भय के पास पहुंच गये थे। उनके अतिरिक्त अन्य पलट पड़े और डोले को घेरकर खड़े हो गए। उन्होंने घेरा तोड़ दिया और कहारों से बोले—"चलो, डोला आगे बढ़ाओ।"

निर्भय की ओर लड़ रहे मुसलमान डोला आगे बढ़ता देख उस ओर बढ़ा निर्भय ने साथियों सहित उन्हें रोका पर दुर्भाग्य से इसी समय निर्भय के तीन साथी मारे गये। केवल एक ही उसके साथ बचा।

अभय के साथ लड़ रहे राजपूतों की संख्या कम होती जा रही थी। वे अब दस-पन्द्रह की संख्या में रह गये थे।

इसी समय हर-हर महादेव का भीषण नाद हुआ और पृष्ठ भाग से असनी के वटुक ब्रह्मचारी रामदेव पाण्डे हाथ में फरसा लिए हुए पासियों के एक पूरे जत्थे के साथ आ पहुंचे। पासियों की संख्या लगभग सत्तर-अस्सी थी।

असनी में उन दिनों गंगासों के आचार्य देवेन्द्र पाण्डे का एक विद्यालय था। रामदेव पाण्डे उसके स्नातक थे। आचार्य देवेन्द्र पाण्डे के आश्रम में सम्पूर्ण हिन्दू मात्र को बिना जाति भेद के पठन-पाठन का पूर्ण अधिकार था। इसी कारण तमाम पासी भी उनके शिष्य थे। देवेन्द्र पाण्डे शास्त्रों की शिक्षा के साथ-साथ अस्त्र-शस्त्रों की शिक्षा भी अपने शिष्यों को देते थे।

रामदेव पान्डे वहां किंकर्त्तव्यविमूढ़ बने ब्राह्मणों को देखकर बोले, रामशास्त्री जी! आप लोग अकर्मण्य बने क्यों खड़े हैं? देखो, हमारे शिष्य क्षत्रिय प्राण झोंक रहे हैं और तुम दक्षिणार्थी क्लीव बने खड़े हो। इस धर्मस्थली में अधर्म न होने पाए। इसलिए ब्राह्मणो, धर्मरक्षार्थ शस्त्र धारण कर आगे बढ़ो।"

—हाँ, जब नियामक ही कर्तव्यच्युत हो जाएगा तो पालनकर्ताओं का पतन अवश्यम्भावी है। राष्ट्र जागरण हेतु ब्राह्मण को कर्मरत होना ही चाहिए।" रामशास्त्री जैसे निद्रा से जाग पड़े हों।

—आगे गढ़ो! ब्राह्मणो!, म्लेछों का सर्वनाश कर दो। हर-हर महादेव।

अख्तर कोलाहल सुन पलटा। उसका घोड़ा रामदेव पाण्डे के पास पहुंचा —"चल भाग ब्राह्मण! जाकर पूजा पाठ करा! तेरा काम मैदाने जंग में लड़ना नहीं। क्यों जान देने आया है? जाकर सोहा (स्वाहा) करा।"

—"कायर! ब्राह्मण की वाणी में केवल स्वाहा के यज्ञ गान की ध्वनि नहीं होती, क्रांति का संदेश भी होता है, एक प्रज्वलित दावाग्नि भी होती है। उसका कार्य केवल उपासना मंत्रों को सम्पन्न कराना ही नहीं, अपितु शिष्यों की राष्ट्र को प्रेरणा हेतु धर्म-युद्ध में शस्त्र ग्रहण कर क्रांति-यज्ञ की ज्वाला को प्रज्वलित कर अपने बलिदान से विकीर्ण कर देना है।"

—"हट जा। क्या जान देगा? बम्हना।

—"जब राष्ट्र, धर्म और मातृ-शक्ति का अपमान हो रहा हो उस समय जो निष्क्रिय होकर उपासना यज्ञों में रत हो, वह ब्राह्मण कहलाने का अधिकारी नहीं धर्म युद्ध सबसे बड़ी उपासना है। धर्म युद्ध से विमुख बना ब्राह्मण, ब्राह्मण नहीं होगा। वह क्लीव होगा, नपुंसक होगा, राष्ट्र का घाती होगा। ब्राह्मणो, अपने इस चतुर्थ वर्ण के शिष्य पासियों के साथ आगे बढ़ो, शत्रु का संहार कर दो। हर-हर महादेव।"—रामदेव ने फरसे से अख्तर पर वार कर दिया। वह घोड़ा कुदाकर पीछे पलटा। एक टुकड़ी उस ओर बढ़ा दी।

रामदेव पासियों के दो सहोदर भाइयों शिवदयाल और बजरंग पासी नामक से बोले—"बजरंग निर्भय थक गया है, तुम उस ओर बढ़ो। शिवदयाल, तुम साथियों सहित अभय के पास पहुंच डोला आगे बढ़ाओ।"

हर-हर महादेव का भीषण नाद करते हुए पासी दो भागों में विभक्त हो बढ चले।

अल्लाह-हो-अकबर ! या अली के नारे लगाते हुए अख्तर का जत्था आगे बढ़ा। पासियों के हाथ में बल्लम, बर्छे और फरसे थे।

बजरंग पासी के बर्छेधारी साथियों ने घुड़सवारों के साथ-साथ घोड़ों के पेट में बर्छे घुसेड़ना प्रारम्भ किया। बजरंग ने घुड़सवारों के नायक सरूर के घोड़े के पेट में बर्छा घुसेड़ दिया। वह घोड़े सहित ढेर हो गया। तड़ित् वेग से बजरंग का बर्छा उसकी गर्दन पर पड़ गया, वह चीख कर मर गया। वे भयभीत हो भागे, परन्तु पासियों ने चारों से ओर घेर कर वह भीषण मार मारी कि भागने का रास्ता ही न मिल सका। कुछ ही क्षणों में उनकी पूरी टुकड़ी साफ थी। शेष दस-पन्द्रह जीवित घोड़े पासियों के हाथ लगे। एक घोड़े पर बजरंग सवार हुआ, दूसरे की रास दांतों से पकड़ अभय की ओर बढ़ चला। शिवदयाल रामदेव के साथ निर्भय की ओर बढ़ रहा था।

बजरंग तुरन्त अभय के पास जा पहुँचा। उसके साथियों ने घेरा तोड़ दिया।

—"आप इस घोड़े पर आइए। निर्भय बहुत थक गया हैं।" बजरंग बोला।

अभय तड़ित् वेग से घोड़े पर सवार हो निर्भय की ओर बढ़ चला। कुछ पासी घुड़सवार एवं शेष बैस राजपूत उसके साथ हो लिए।

निर्भय अभिमन्यु की भांति चारों तरफ से शत्रुओं से अकेला घिरा हुआ होने पर भी बड़े ही जीवट से तलवार चला रहा था, बीस वर्ष की अल्पावस्था में भी उस जैसा तलवार का धनी योद्धा देख शत्रु आश्चर्य चकित थे। उसके अंग-अंग से रक्त झर-झर गिर रहा था। वह बहुत थक चुका था। मुल्ला इलाही और अख्तर दोनों उस पर वार कर रहे थे।

(शेष पृष्ठ ९० पर)

हिन्दू धर्म रक्षक साहित्य के प्रकाशन के लिए

ऑफसैट प्रिंटिंग प्रैस लगवाइये

हिन्दू धर्म रक्षक साहित्य, वैदिक विचार धारा के प्रसारक ग्रन्थों और जन-ज्ञान के प्रकाशन के लिए। हमने पिछले वर्ष जन-ज्ञान मुद्रणलय की स्थापना की थी इन दो मशीनों पर ही छपाई का कार्य हो रहा है। २०×३० सिलेण्डर तथा १३×१६ ट्रेडल पर पुनर्मुद्रण का कार्य इतना बढ़ गया है कि बिना आफसैट प्रिंटिंग प्रैस के हमारा काम रुक जाता है—काम की गति धीमी हो जाती है।

जैसा आपको पता ही है, हमारी पुस्तकों और जन-ज्ञान पत्रिका की सामग्री को लेकर हम पर ३३ मुकद्दमे चल रहे हैं। इन मुकद्दमों के कारण कोई हमारा साहित्य छापने को तैयार नहीं। फलतः हमारे लिए मुद्रण की अपनी व्यवस्था रखना अनिवार्य हो गया है। ऑफसैट प्रिंटिंग बढ़िया मुद्रण आधुनिकतम टैकनीक है। एक अच्छे आफसैट प्रिंटिंग प्रेस के लिए हमें दस लाख रुपये की आवश्यकता है।

यह प्रेस लगाने के लिए पूरा प्रोजेक्ट तैयार कर लिया गया है। स्थान की भी व्यवस्था करली गई है। अब नया आफसैट प्रेस लगवाने की जिम्मेदारी आपके कन्धों पर है।

हमें पूरा विश्वास है कि आप आर्थिक सहयोग देकर हमें इस योग्य बनायेंगे कि हम इसी वर्ष ऑफसैट प्रिंटिंग प्रेस चालू कर दें।

देरी न करें। यह आपका अपना काम है। हम आशाभरी दृष्टि से आपकी ओर देख रहे हैं।

—राकेशरानी

हिन्दू रक्षा समिति की मांगें

१. भारत के सभी नागरिकों के लिए समान सिविल कानून, नियम और अधिकार बनाये जाएं।

२. मजहब के आधार पर पुलिस, सेना या किसी भी सरकारी विभाग में आरक्षण की मांग को किसी भी स्थिति में स्वीकार न किया जाए।

३. पंजाब, कश्मीर, असम व देश के अन्य भागों में पाकिस्तानी घुसपैठियों व सेवा की आड़ में राजनैतिक देशद्रोहपूर्ण षड्यन्त्रों में लगे सभी विदेश पादरियों को तुरन्त भारत से निकाला जाए।

४. अल्पसंख्यक आयोग समाप्त किया जाए।

५. भारत के किसी भी भाग में मुस्लिम विश्वविद्यालय खोलने की अनुमति न दी जाए और अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय को राष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया जाए।

६. अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक शब्दों का प्रयोग बन्द हो और तुष्टीकरण की नीति समाप्त की जाए।

७. कश्मीर सम्बन्धी धारा ३७० तुरन्त हटाई जाए और वहां भारत कि नागरिकों के स्थायी तौर पर बसने की व्यवस्था हो।

८. मजहब के नाम पर अधिकार मांगने व दंगा करने वालों को पूरी शक्ति से कुचल दिया जाए।

९. जो भारत को अपना देश नहीं मानते उन्हें वोट का अधिकार न दिया जाए। प्रत्येक नागरिक को वोट का अधिकार देने से पहले एक शपथ-पत्र भरने का नियम बनाया जाए, जिसमें वह लिखे कि मैं भारत को अपनी मातृभूमि स्वीकार करता हूं और मेरी प्रथम निष्ठा भारत के प्रति रहेगी।

१०. गोहत्या का कलंक तुरन्त मिटाया जाए।

११. बिहार व उत्तर प्रदेश में उर्दू को द्वितीय राजभाषा बनाने का आदेश तुरन्त रद्द किया जाये।

लघु कहानी

संवर्ग विद्या

—चन्द्रदेव नारायण

अनन्त आकाश के श्रांत पथिक भुवन भास्कर अस्ताचल के अन्तराल में विश्राम करने की तैयारी कर रहे थे। वृक्षों की टहनियों पर हिचकोले लेता हुआ पक्षीदल चें-चें कर विदाई के गीत गा रहा था। रम्भाती हुई गायें गांवों की ओर भाग रही थीं। अन्तरिक्ष के पूर्वी अंचल में कालिमा की एक पतली-सी रेखा आहिस्ता-आहिस्ता उभर रही थी।

वह गोधूलि की वेला थी।

महाराज जानश्रुति पौत्रायण अपने उद्यान में धीरे-धीरे टहल रहे थे। सेव, नाशपाती एवं अनेकों किस्म के फल-फूलों से आच्छादित उस उद्यान के कण-कण में वसंत अपनी गरिमा बिखेर रहा था। शोभा वर्णनातीत थी। महाराज घूमते-घामते एक लता कुञ्ज की बगल से निकले। तभी उस कुञ्ज के भीतर से दो हंसों के बीच परस्पर बातचीत सुन कर वे वहीं ठिठक गये। ध्यान से सुनने लगे। पहला हंस कह रहा था—"मित्र मल्लाक्ष जानश्रुति पौत्रायण बहुत-बड़ा धर्मात्मा राजा है। उसने अपने राज्यान्तर्गत चारों दिशाओं में अनेक धर्मशालाएँ बना रखी हैं। वहां अतिथियों को, असहायों को तथा गरीबों को मुफ्त में भोजन मिलता है, कपड़े मिलते हैं। उसका यश सारे संसार में तीव्र गति से फैल रहा है। देखना, इसके साथ वाद-विवाद न कर बैठना; कहीं वह तुझे दग्ध न कर दे!"

"अरे तू किसकी बात कर रहा है? यह राजा तो गाड़ीवाले रैक्व ऋषि के पासंग बराबर भी नहीं।"

"वह कैसा है मित्र?"

"वह 'संवर्ग विद्या' का पूर्ण ज्ञाता है। जिस तरह जुए का 'कृतपासा' सब को जीतकर अपने में समेट लेता है उसी तरह रैक्व ऋषि प्रजा के शुभ

कर्मों को अपने में समेट लेता है। जानश्रुति पौत्रायण जितना जानता है उससे कहीं अधिक रैक्व जानता है।"

महाराज के अहम् को बड़ी चोट लगी। वे उल्टे पांव महल में लौट आये। खाना-पीना भूल गये। रातभर करवटें बदलते रहे, सोचते रहे—यह रैक्व कौन है, कहां है, कैसा है ?

सवेरा हुआ महाराज ने दरबार में पहुंचते ही गाड़ीवाले रैक्व की तलाश करने के लिए चारों दिशाओं में अपने गुप्तचरों को भिजवा दिया। दूसरे दिन सभी गुप्तचर वापस आ गये। रैक्व का अता-पता नहीं चला। महाराज फिर भी निराश नहीं हुए। अपने मंत्री सारथी को बुलाकर उन्होंने कहा—"मंत्रि-वर, ब्रह्मज्ञानियों के बीच में गाड़ीवाले रैक्व ऋषि की तलाश की जाये। शायद वह वहां पर मिल जाये।"

सारथी छानबीन करता हुआ दूसरे दिन जनपद से दूर, बहुत दूर, घोर जंगल की ओर निकल गया। निर्जन स्थान, पेड़-पौधों की भरमार, हवा की सनसनाहट और परिंदों की फड़फड़ाहट वातावरण को बोझिल कर रही थी। वह एक टीले पर खड़ा हो सशंक नेत्रों से चारों ओर देखने लगा। तभी एक विशाल बरगद की छाया तले अपनी टूटी-फूटी गाड़ी के सहारे एक मैला-कुचैला व्यक्ति बेतरतीब बैठा इत्मीनान से दाद खुजलाता-सा दिखाई पड़ा। सारथी लपककर वहां पहुंचा, पूछ लिया—,,क्या आप गाड़ीवाले रैक्व ऋषि है ?"

"हां रे अन्धे, गाड़ी नहीं देखता ! मैं ही रैक्व हूं।'

सारथी सहम गया, साष्टांग दण्डवत् किया और वापस भागा राजधानी की ओर।

खुशखबरी सुनकर महाराज पौत्रायण अत्यन्त खुश हुए। तत्काल अनेक रथ, सैकड़ों गौवें, हजारों स्वर्ण मुद्राएँ और अपनी इकलौती सुन्दरी कन्या को लेकर वे रैक्व ऋषि की सेवा में उपस्थित हुए। हाथ जोड़कर विनीत स्वर में उन्होंने कहा—"मुनिवर, मैं जन्म से शूद्र हूँ पर, कर्त्तव्य से हीन नहीं हूँ। नियमित रूप से मैं संध्या-वंदना करता हूँ। अग्निहोत्र संपन्न किये बिना मैं एक बूंद जल भी ग्रहण नहीं करता। मेरी पुत्री भी सदाचारिणी है। रात-दिन वेदाध्यान में रत रहती है। इस लिए इसके साथ ही यह तुच्छ भेंट आपको समर्पित करने आया हूँ। स्वीकार करें।"

ताबड़तोड़ दाद खुजलाते हुए ऋषि ने महाराज की ओर प्रसन्न मुद्रा में

देखा और भेंट स्वीकारते हुए सहानुभूति भरे शब्दों में पूछा—"जानश्रुति; तुम्हें क्या चाहिए ?"

मैंने पहले ही कहा है ऋषिवर, मैं जन्म से शूद्र हूँ और इसीलिए कहते डरता हूँ कि मैं 'संवर्ग (ब्रह्म) विद्या' प्राप्त करने की अभिलाषा रखता हूँ।"

"तुम्हारी अभिलाषा पूर्ण होगी महाराज" रैक्व ने सोत्साह कहा—"शूद्रत्व ज्ञान प्राप्ति में बाधक नहीं बन सकता। कल ब्राह्ममुहूर्त्त में उपस्थित हो जाओ।"

□ □ □ □

दूसरे दिन महाराज जानश्रुति पौत्रायण नतमस्तक कुशासन पर विराजमान ध्यान से सुन रहे थे—"संवर्ग विद्या के दो ही स्थान हैं—वायु और प्राण (आत्मा)"—रैक्व ऋषि ने समझाते हुए कहा—"महाराज, संसार के सारे स्थूल पदार्थ अन्ततः वायु (सूक्ष्म कारण) में लीन हो जाते हैं। प्राण दशों इन्द्रियों को अपने में समेट लेता है। जैसे प्रज्वलित अग्नि की शांत-शत शिखाएँ शांत होकर वायु में विलीन हो जाती हैं, वैसे ही सुषुप्ति अवस्था में दशों इन्द्रियां सिमट कर प्राण में घुलमिल जाती हैं। हमें यह स्पष्टतः जान लेना चाहिये कि सृष्टिकर्ता परम पिता परमात्मा ही अन्ततोगत्वा लयकर्त्ता है। हमें उसी की उपासना करनी चाहिए।"

जानश्रुति का अहम्, गलकर पानी जैसे बह गया। मन पवित्र हो गया। प्रसन्न-चित्त वे राजधानी को लौट आये।"

यह आत्मा सत्य, तप, सम्यग्ज्ञान और ब्रह्मचर्य से ही प्राप्त किया जा सकता है जिसे संयम से व्यतीत करने वाले देखते हैं वह ज्योतिर्मय शुभ्र आत्मा इसी शरीर के अन्दर वर्तमान है।

सत्य की ही जय होती है, असत्य की नहीं। देवताओं के विचरण का मार्ग सत्य से ही विस्तृत है। पूर्णकाम ऋषिजन सत्य द्वारा ही उस पद को प्राप्त होते हैं, जहाँ सत्य का वह परम विधान विराजमान है।

—मुण्डकोपनिषद्

मुझमें कौन-सी बात पशुओं जैसी है और कौन-सी सत्पुरुषों जैसी मनुष्य को प्रतिदिन अपने चरित्र का इस प्रकार अन्तर्निरीक्षण करना चाहिए।

—सुभाषित

अपने ग्राम-नगर में हिन्दू रक्षा समिति स्थापित कीजिए

सबसे पहले आप समिति के उद्देश्य और मांगें पढ़ डालिए। यदि आप उनसे सहमत हों तो कम से कम अपने १६ साथी और बनाइए। इस प्रकार २० सदस्य बनाकर उनके फार्म तथा उनके पूरे शुल्क का ड्राफ्ट "अखिल भारतीय हिन्दू रक्षा समिति" के नाम का बनाकर केन्द्रीय कार्यालय, नई दिल्ली को भेजिए। साथ ही स्वीकृति के लिए पत्र भी लिखें।

स्वीकृति प्राप्त होने पर आप में से जिन्हें संयोजक बनाया जाए—वे एक अस्थायी कोषाध्यक्ष व मंत्री नियुक्त कर लें तथा अपने यहां विधिवत् कार्यालय बना लैटर-हैड, रसीद बुक आदि छपवा लें। स्थापना के दो मास के भीतर आप एक कार्यकर्ता सम्मेलन बुलाएं और रात्रि को सार्वजनिक सभा हिन्दू रक्षासम्मेलन के रूप में रखें।

आपका लक्ष्य अधिक से अधिक सदस्य बनाना हो। अपने सदस्यता शुल्क व दान से सम्मेलन कीजिए। साहित्य बांटिए, पोस्टर लगाइए और संगठन को सुदृढ़ बनाइए।

२० सदस्यों के बाद बने सदस्यों का चौथाई शुल्क आप केन्द्र को भेजेंगे।

दान के रूप में एकत्र सम्पूर्ण धन आप अपने क्षेत्र में व्यय कर सकेंगे, किन्तु आप को सारा हिसाब नियमानुसार रखना होगा।

केन्द्र कभी भी आपके आय-व्यय की जांच कर सकेगा और केन्द्र को यह भी अधिकार होगा कि अनियमितता प्रतीत होने पर आपकी समिति भंग कर नयी समिति गठित कर सके।

हिन्दू रक्षा समिति वस्तुतः राष्ट्र के गौरव, परम्पराओं, इतिहास और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए कृतसंकल्प सर्वस्व-समर्पित देशभक्तों का संगठन है। इसी भावना से सब कार्य करें, ताकि सफलता मिल सके।

हम किसी भी संकट में सेवा के लिए सदा प्रस्तुत हैं।

(प्रो०) धर्मवीर, प्रधानमंत्री

अ० भा० हिन्दू रक्षा समिति, करौलबाग, नई दिल्ली-५

प्रभावशाली धार्मिक साहित्य

१.	चारों वेदों का हिन्दी भाष्य	मूल्य ५००)
२.	सामवेद : आध्यात्मिक भाष्य (पं० विश्वनाथ विद्यामार्तण्ड)	५०)
३.	वेद ज्योति	१५)
४.	वेदांजलि : ३६५ मंत्रों की प्रेरक व्याख्या	३०)
५.	सोमसरोवर : (सामवेद के पावमान पर्व की व्याख्या— पं० चमूपति)	१५)
६.	ईश्वर : वैज्ञानिकों की दृष्टि में : क्षितीश वेदालंकार	१५)
७.	संस्कारविधि [सजिल्द] :	१५)
८.	सरस्वतीन्द्र जीवन (महर्षि दयानन्द का जीवन-चरित्र)	३०)
९.	अग्निहोत्र दर्पण (डा० रामनाथ वेदालंकार)	२०)
१०.	सत्यार्थ-प्रकाश (१० १५ इंच) स्थूलाक्षर	१५१)
	,, ,, आर्ट पेपर पर	२५१)
११.	ज्योति स्तम्भ :	१०)
१२.	वैदिक सम्पत्ति	८१)
१३.	योगासन :	२)
१४.	योग और ब्रह्मचर्य :	३)
१५.	Concept Of God	३०)
१६.	श्रीमद्दयानन्द प्रकाश :	२५)
१७.	LIGHT OF TRUTH	५०)
१८.	प्रकृति और सर्ग : आचार्य उदयवीर शास्त्री	६)
१९.	अथर्ववेद परिचय :	६)

बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाएं।

दयानन्द संस्थान, वेद मन्दिर

१५६७ हरध्यानसिंह मार्ग,
करोलबाग, नई दिल्ली ५

एक चेतावनी है उन्हें !

यह चेतावनी वीर सावरकर ने १९४१ में दी थी। अब "हिन्दू जागरण" की वेला में उनकी चेतावनी विचारणीय है। नीचे हिन्दू महासभा के अध्यक्ष के रूप में वीर विनायक दामोदर सावरकर के भाषण के कुछ अंश प्रस्तुत हैं —

"पूरी हालत देखते हुए, वह समय आ गया है जब हमारे मुसलमान देशवासियों को अपने हित में अनिवार्य होनहार को स्वीकार कर लेना चाहिए और हवाई उड़ानों में गगन-विहार का आनन्द लेना समाप्त कर देना चाहिए। उन्हें असलियत पर गौर करना चाहिए। उनके लिए यह जान लेना जरूरी है कि वे अल्पमत में हैं, और उनके लिए अब कोई रास्ता नहीं बचा है, जिससे वे हिन्दुओं के बहुमत को किसी कदर घटा सकें।

"शुद्धि अभियान और हिन्दुओं में पैदा जोशीले जागरण ने इस्लाम में हिन्दुओं के जबरी, और जाली धर्मपरिवर्तन को हमेशा के लिए रोक दिया है। अब अगर (चिराग वाले) अलाउद्दीन या औरंगजेब भी आसमान से उतर आएँ तो वे भी ताकत या कपट-जाल के बलपर स्थायी रूप में किसी हिन्दू का हमेशा के लिए धर्मपरिवर्तन करके उनकी भावी पीढ़ियों को मुसलमान बनाए नहीं रख सकते।

"बंगाल का ही उदाहरण लीजिए, जहां इसी साल ढाका के दंगों में हिन्दुओं का जबरी धर्म-परिवर्तन किया गया था। कुछ गांवों में सैकड़ों हिन्दू परिवारों को जबरी धर्मपरिवर्तन करके मुसलमान बनाया गया था। उस समय मुस्लिम दंगाइयों ने यह समझा था कि वे गांव पाकिस्तान की अपनी सुल्तानी में जुड़ जाएँगे, जैसा सचमुच सदियों पहले होता था। लेकिन ज्यों ही दंगे समाप्त हुए त्यों ही, मुसलमानों को यह देखकर बड़ी निराशा हुई कि आनन-फानन हिन्दुओं की शुद्धि करके उन्हें फिर हिन्दू और ऐसे कट्टर हिन्दू बना लिया गया जो इस्लामी दबावों और रीतिरिवाजों का कड़ा विरोध करते थे।

"अगर इस घटना पर मुसलमान लोग गंभीरतापूर्वक विचार करें तो वे यह समझ जाएँगे कि हिन्दुस्थान में अल्पमत में रहने के अलावा और कोई चारा नहीं है, और उसी तरह भविष्य में रहने का उन्हें अपना राजनीतिक निर्णय ले लेना चाहिए।"

मानव शरीर : धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र

धृतव्रताः क्षत्रिया यज्ञनिष्कृतो बृहद्दिवा अध्वराणामभिश्रियः
अग्निहोतार ऋतसपो अद्रुहोऽपो असृजन्ननु वृत्रतूर्ये ॥

ऋग्वेद १०.६६.८

'वृत्रासुर-वध' में क्षात्रधर्म का व्रत धारण किए हुए, यज्ञ को ही आत्म उद्धारक मानने वाले, अत्यन्त दीप्ति के साथ, हिंसा की हिंसा द्वारा, अध्वरों की शोभा बढ़ाने वाले; अग्नि के अन्दर सर्वस्व आहुति करने वाले, ज्ञान के सेवक और परस्पर द्रोह रहितों ने ही इन्द्र की अनुगामिनी सेनाओं का सृजन किया था।

प्रत्येक मानव शरीर धर्मक्षेत्र अर्थात् कुरुक्षेत्र है। इसमें देव तथा असुर संकल्प प्रतिक्षण युद्धार्थी होकर आमने-सामने खड़े रहते हैं। जब मानव मन में दैवी भावना का उदय होता है, तब देवों की जीत और असुरों की हार होती है, इसके विपरीत जब मानव मन आसुरी भावनाओं के वशीभूत हो जाता है, तब असुरों की जय और देवों की पराजय होती है।

"धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र समवेता युयुत्सवः।" गीता १।१

इस धर्मक्षेत्र अर्थात् कुरुक्षेत्र में एक दिन न्याय-अन्याय की सेना आमने-सामने लड़ने के लिए इकट्ठी हुई। दैवी सेना के संचालक योगेश्वर श्रीकृष्ण थे।

गत संगस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥ गीता ४.२३

कर्म में अकर्म तथा अकर्म में कर्म का ज्ञान प्राप्त होने से जिसका चित्त व्यवस्थित हो चुका है, जिससे फलासक्ति दूर हो गई है, वह जो कुछ भी करता है यज्ञ के लिए अर्थात लोक कल्याण के लिए करता है। व्यक्तिगत विषय-वासनाओं की पूर्ति के लिए नहीं। इसलिए उसके सभी कर्म यज्ञ प्रविलीन हो जाते हैं। इस यज्ञ के द्वारा उसका हर कर्म ब्रह्म के अर्पण होता जाता है।

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना ।। गीता ४.२४

जीव के पास अपना तो कुछ भी नहीं है, जो कुछ है उस परब्रह्म परमात्मा का है। उसी की प्राप्ति के लिए मनुष्य जो कर्म, विशेष "मैं इस लोककल्याणकारी कर्म को अपने जीवन में अवश्य पूरा करूंगा" इस प्रकार व्रत-रूपेण वरण करता है वह ही ब्रह्माग्नि है। उसमें ब्राह्मण अर्थात् वेदोक्त विधान से उस परब्रह्म के दिये हुए प्राण, धन आदि समस्त पदार्थों को ब्रह्म के लिए आहुति करता है, तो वह अपने सर्वस्व को ब्रह्म-हवि बनाता है।

प्रभु की यही प्यारी वस्तु है। हम अपनी प्यारी वस्तु (तन-मन-धन) प्रभु की प्रजा की सेवा के लिए अर्पण कर दें। हमने जितना कुछ भी अपने वैभव का भाग प्रभुप्राप्त्यर्थ-प्रभु की प्रजा के कल्याणार्थ अर्पण कर दिया, वही ब्रह्महवि है ।

हमारा जो कर्म इस प्रकार ब्रह्मार्पण हुआ वह ब्रह्म कर्म समधि हेतु से यज्ञ हुआ। आसक्ति से मुक्ति का फल यही होगा—जरा-मरण बन्धन से मुक्ति। सामान्य जरा-मरण बन्धन से तो छूट जायेंगे, लेकिन लोक कल्याणार्थ राम-कृष्ण की भांति दिव्य जन्म तो सहस्रों बार प्राप्त होगा ही।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ।। गीता ४।७

जब-जब धर्म की ग्लानि अर्थात् हानि होती है तथा अधर्म का अभ्युत्थान होता है तब-तब मैं लोक कल्याण के लिए परमात्मा से आदेश पाकर जन्म लेता हूं।

जब जीवात्मा अपनी कैवल्यावस्था में पहुंच जाता है, तब नाना नैमित्तिक कारणों से दबी हुई स्वाभाविक परोपकार की इच्छा शुद्ध रूप में प्रकट होती है और वह ईश्वर से प्रार्थना करता है कि हे भगवन्, आपकी कृपा से लब्ध इस पवित्र मार्ग का मैं कब अन्य सब जीवों को उपदेश करूंगा। तब ईश्वर अवधि की समाप्ति पर उसे अवसर प्रदान करते हैं कि अपनी परोप-कारेच्छा की पूर्ति के लिए उचित स्वयं प्रार्थित स्थान में जन्म ले। इसी परोपकारेच्छा से प्राप्त जन्म को 'आत्म-माया-जन्म' कहा गया है। सो मैं वहां अपनी निर्माण शक्ति से जन्म लेता हूं।

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः ।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन ।। गीता४।६

हे अर्जुन ! जो भी अन्य जीव इसी प्रकार मेरे लोक कल्याणार्थ प्रार्थना लब्ध दिव्य जन्म को तथा उस जन्म में किए हुए दिव्य कर्मों को अच्छी तरह जान लेता है वह निष्काम कर्मों की महिमा से सामान्य भोगजन्य जन्म फिर नहीं पाता है। वह दिव्य जन्म पाने वाले दिव्य जीवों में पहुंच जाता है।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे युगे ।। गीता ४।८

उत्तम उद्देश्य की पूर्ति में लगे हुए साधु पुरुषों की रक्षा के लिए (साध्नोति कार्याणि इति साधुः) तथा दुःखदायी कर्मों में प्रवृत्त दुष्टों के विनाश के लिए तथा धर्म की स्थापना के लिए मैं युग-युग में जन्म लेता हूं। इसी तरह मदुपलक्षित अन्य मुक्त जीव भी स्वेच्छा से जन्म लेते हैं।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ।। गीता ४.११

हे अर्जुन ! मैं इस युग में परम्परा-प्राप्त राजर्षि-सेवित कर्म योग का प्रचार करना चाहता हूँ। मैंने खण्डशः जर्जरीभूत इस भारत में महाभारत साम्राज्य की स्थापना का बीड़ा उठाया है; इस पवित्र यज्ञ में जो जिस अवस्था में मेरी शरण में आता है अर्थात् मेरी सहायता करता है, मैं उसका उसी रूप में उपयोग अर्थात् सहयोग ले लेता हूं। मैं किसी से घृणा नहीं करता हूं। इस घृणाभाव तथा उत्साहवर्द्धन के कारण चारों ओर मनुष्य इस कार्य में मेरे अनुयायी बन जाते हैं।

हे अर्जुन ! एकान्त में जाकर प्राणायामपूर्वक ब्रह्म-ध्यान का नाम ही योग नहीं है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र कोई भी अपने कर्तव्य-पालन में एकाग्र होकर लोक कल्याणार्थ अनन्य भाव से लगता है, तब वह कर्मयोगी कहलाता है। ज्ञान से अज्ञान का नाश ब्रह्म-कर्म समाधि, धन से दारिद्र्य हरण वैश्य कर्म समाधि तथा उक्त तीनों की यथायोग्य स्वमनसा सेवा शूद्र-कर्म समाधि है

अश्रद्दधानाः पुरुषाः धर्मस्यास्य परंतप ।
अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ।। गीता ९।३

हे परन्तप ! वीर पुरुष मरने से नहीं डरता है। इसलिए वह मृत्युरहित संसार में विचरता है। परन्तु कायर (भीरु) पुरुष प्रतिक्षण मौत से बचना चाहता है। इसलिए वह मृत्यु संसार में विचरण करता रहता है। जिन्हें इस समर्पण धर्म में श्रद्धा नहीं, वे पुरुष मृत्युभय थोड़ा सा टलते ही फिर भोग-वासना में लग जाते हैं। इस प्रकार बारम्बार वे मृत्यु-संसार के मार्ग में प्रकट होते हैं

मनुष्य को धर्माचरण इस प्रकार करना चाहिए, मानो मौत सिर पर सवार है।

अजरामरवत् प्राज्ञो विद्यमर्थण्येच चिन्तर्थत् ।
गृहीत इव केशेषु मृत्युना धर्ममाचरेत ॥

मनुष्य विद्योराजंन तथा अर्थोपार्जन तो बिलकुल निश्चित होकर करे। अभी कर लेंगे विद्या तथा धन भी इकट्ठा, क्या जल्दी है ? कौन-सी मौत सिर पर खड़ी ? धर्म बटोरो धर्म, जितना बटोर सको। न जाने कब बुलावा आ जाय है ? यही हमारी मनोवृत्ति होनी चाहिए।

यज्ञ के लिए अर्थात् संगठन के लिए बलिदान होते समय मृत्यु का भय न करना चाहिए बल्कि अत्यन्त उल्लास अनुभव करना चाहिए। यही संज्ञपन अर्थात् सम्यक् ज्ञान है।

अथर्ववेद के १२वें काण्ड के प्रथम सूक्त की संज्ञा 'भूमि-सूक्त' है। उसमें भूमि को माता कहकर स्मरण किया गया है। भूमि माता का द्वार चींटी जैसे क्षुद्र प्राणी से लेकर प्रभु की परमोत्कृष्ट रचना मनुष्य तक के लिए सदा-सर्वदा से खुला है। प्राणियों को जन्म देने वाली माताए कुछ काल तक भरण-पोषण कर छोड़ देती हैं। मरणोपरांत की तो बात ही क्या ? भूमि ऐसी माता है कि जन्म से मरण पर्यन्त कभी भी साथ नहीं छोड़ती तथा मरणोपरान्त भी अपनी गोद में समेट लेती है। इसी कारण उसके पुत्र(मनुष्य) वैदिक ऋचाओं द्वारा उसका (भूमि माता का) स्तवन करते हैं।

"माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः विश्वम्भरा वसुधानी प्रतिष्ठा हिरण्य-वक्षा जगतो निवेशिनी। वैश्वानरं बिभ्रति भूमिः। हे भूमि, तू हमारी माता है और हम तेरे पुत्र हैं। तू सबको प्रवेश देकर हमारे धारण-पोषण का भी प्रबन्ध करती है। तू सचमुच में विश्वम्भरा है। निवास देने वाले साधनों की खान है। तू ही हमारी प्रतिष्ठा—जड़-जंगम का निवास स्थान है।

"उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा अस्मभ्यं सन्तु पृथिवीप्रसूताः तेरी गोद हम प्राणियों के लिए निरामय और यक्ष्मा रहित हो। "त्वज्जातास्त्वयि चरन्ति मर्त्यास्त्वं बिभर्षि द्विपदस्त्वं चतुष्पदः।" तुझसे उत्पन्न हुए हम तुझ पर ही विचरण करते हैं। तू ही दो पाये और चौपाये प्राणियों का भरण-पोषण करती है।

तस्यै हिरण्यवक्षसे पृथिव्या अकरं नमः।

उस हिरण्यवक्षा भूमि माता को हम लोग श्रद्धापूर्वक प्रणाम करें और संकल्प लें कि "वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम्। पुमान्पुमांसं परिपातु विश्वतः। मां तेरे लिए हम सदैव प्राणों की बलि देने के लिए तत्पर हैं। मनुष्यमात्र की रक्षाकर उन्हें अभय दान देंगे। "धर्मात्मा निर्बल से भी प्रभु को याद कर डरना तथा पापी दुर्योधन भी हो तो उससे नहीं डरना।" यही आदेश हमारे गुरु महर्षि दयानन्द सरस्वती का था कि अन्यायकारी बलवान् से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की रक्षा, उन्नति और प्रियाचरण सर्वदा किया करे और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती सनाथ, महाबलवान्, और गुणवान् भी हो उसका हमेशा अप्रियाचरण किया करें।

—डा० रामप्रसाद सिंह आर्य

जन-ज्ञान में विज्ञापन दीजिये

'जन-ज्ञान' मासिक एक सामाजिक, धार्मिक व पारिवारिक पत्रिका है। देश-विदेश में लाखों पाठक इसे पढ़ते हैं।

इस प्रकार यह पत्रिका आपके प्रतिष्ठान तथा उसके उत्पादनों के प्रचार-प्रसार के लिए एक उपादेय माध्यम बन सकती है।

आप अपने प्रतिष्ठान व उसके उत्पादन के प्रचार के लिए इस सशक्त साधन का उपयोग करें।

विवरण पत्र लिखकर मंगायें।

यह धर्मनिरपेक्षता है या हठधर्मी ?

—के० पी० के० उन्नी

तमिलनाडु के मुख्यमंत्री के फोटो-चित्र के साथ (मदुरै के) के २२ सितम्बर के "इण्डियन एक्सप्रेस" में मद्रास शहर की मुस्लिम जमात के लोगों का एक विज्ञापन प्रकाशित हुआ है, जिसमें तमिलनाडु के मुख्यमंत्री डा० एम० जी० रामचन्द्रन् को एक प्रस्ताव अखिल भारतीय अन्नाद्रमुक की महासमिति द्वारा एक सितम्बर को अपनी बैठक में पारित करने पर धन्यवाद देने के बहाने प्रकाशित किया गया है। साथ ही भारतीय संविधान के धर्मनिरपेक्ष सिद्धान्त पर निष्ठा व्यक्त करते हुए उन ताकतों की घोर निन्दा की गई है जो भारतीय जनता की एकता के मूल पर प्रहार कर रही हैं।

आगे इस विज्ञापन में ऐलानिया आरोप लगाया गया है कि "हिन्दू मुन्नानी" (हिन्दू एकता संघ) के नाम से ये ताकतें साम्प्रदायिक शत्रुता पैदा कर रही हैं और इस तरह उन विदेशी ताकतों की मदद कर रही हैं, जो हमारी मातृ-भूमि खिलाफ हैं। साथ ही इसमें उन पुलिस अफसरों और उनके के मातहत सभी जिलेवालों का, जहां कहीं नाजुक साम्प्रदायिक स्थितियां पैदा हुई, वहां बड़ी काबलियत के साथ माहौल पर काबू पाने में सफलता पर भी धन्यवाद दिया गया है।

जिस समय से (कांग्रेस के अन्तिम विभाजन से) जब से भारत की सरकार के मुस्लिम वफादारों ने अल्पसंख्यक समुदाय के नाम पर नीली-पीली आंखें दिखानी शुरू की, आज तक भारत के (सब भाषाओं के) अखबारों में इससे पहले कभी भी किसी ने (इस तरह का या) इससे ज्यादा नफरत व बेईमानी से भरा, क्रूर, पाखण्डी और हिन्दुओं में आग लगाने वाला विज्ञापन नहीं पढ़ा। इरादे के लिहाज से इसके प्रकाशन के हेतु धन्यवाद देने की जगह उससे कहीं अधिक (साम्प्रदायिक कि) कीचड़ उछालना है, और अगर उससे मुख्यमंत्री और उनकी सरकार की थोड़ी-सी परेशानी हुई तो कोई आश्चर्य नहीं!

इसमें सबसे मजेदार बात यह है कि भारत को मुस्लिम जमात वालों ने अपनी "मातृभूमि" (पाकिस्तान बनने के बाद पहले पहल) कहा है।

सचमुच? क्या उन्हें यकीन है कि भारत उनकी "अपनी मातृभूमि" है, न कि उनकी "दादी भूमि" या "सौतेली अम्माभूमि" है?

फिलहाल अगर हम उन्हें संदेह का अनुचित लाभ उठाने दें तो जाहिरा तौर पर यह एक राष्ट्रीयता का लक्षण है जिसका आफताब (इतिहास में) पहले-पहल मुसलमानों के दिलो दिमाग में उग रहा है।

इस देश की मुस्लिम जमातों के लिए, चाहे वे मद्रास की हों या एवरेस्ट की चोटी की, भारत के सभी प्रदेशों के मुख्यमंत्रियों और खुद प्रधानमन्त्री को उस धर्मनिरपेक्षता हिन्दू या हिन्दू विरोधी ब्राण्ड के एवज में शुकराना देने के तमाम कारण हैं, जो भारतीय धर्मों का मूलाधार बन गया है। जमात के लोगों से इत्तर किसी भारतीय से वे उन विशेषाधिकारियों और एकाधिकारों को अधिक जानते है जिनका आनन्द वे अपनी इस मातृभूमि पर भोग रहे हैं और जिनका वे ख्वाब भी भारतीय सीमा के उस पार की अपनी (असली) मातृभूमि पर नहीं देख सकते।

पुनश्च, केवल वे ही पूरी तरह जानते हैं कि चाहे पाकिस्तान या बांगलादेश या ईरान ही हो, हाजी मस्तान और यूसुफ पटेल जैसे लोगों के लिए वह (भारत) क्या (मातृभूमि) होगा अथवा कैसे होगा। उन्हें मिनिस्टरों और पुलिसमैनों का शुक्रिया अदा करने दीजिए, लेकिन वे उसके साथ एक सांस में हिन्दू-मुसलमानों को कांटों में क्यों घसीटते हैं?

फिर धर्मनिरपेक्ष को मान्यता देने के उपलक्ष्य में वे केवल अन्ना द्रमुक पार्टी का ही शुक्रिया अदा करने को व्याकुल हो रहे हैं मानो (उनकी समझ में) देश की अन्य सभी पार्टियां उनके खिलाफ हैं। भारत का प्रत्येक हठधर्मी मजहबपरस्त उसी तरह सेकुलरिज्म की कसम खाता है जैसे प्रत्येक सर्वोदयवादी से लेकर प्रत्येक नक्सलवादी तक गांधीवाद की कसम खाता है। धर्मनिरपेक्षता के विषय में किसी एक पार्टी या व्यक्ति को धन्यवाद देने का साफ यही मतलब होता है कि बाकी सब लोग धन्यवाद के पात्र नहीं (बल्कि धिक्कार के पात्र हैं)। शायद इसी वजह से उन्होंने धर्मनिरपेक्षवाद के प्रति अपनी वफादारी पर इतना जोर नहीं दिया है, जैसा हिन्दू मुन्नानी के खिलाफ जहर उगलने पर दिया है। जिसने पद-ग्रहण करने के समय राष्ट्रीय संविधान मानने की शपथ ग्रहण की है ऐसे इस सेकुलर प्रदेश (तमिलनाडु) के किसी मिनिस्टर को धर्मनिरपेक्षवाद मानने के उपलक्ष्य में शुकराना नजर करने की कोई जरूरत नहीं होनी चाहिए (जिससे दूसरे राज्यों के मिनिस्टर वंचित रह जाएँ), और इसके अलावा यह बड़ी बेजा बात होगी कि किसी मिनिस्टर को इसलिए धन्यवाद दिया जाए कि वह "ईमानदारी सर्वश्रेष्ठ नीति है" या "सत्यमेव जयते" की

कहावतों पर यकीन रखता है।

और अखिल भारतीय अन्ना द्रमुक के लिए सेकुलरिज्म पर विश्वास की पुष्टि के लिए एक प्रस्ताव पास करना तो शायद एक बददिमागी का ऐसा केस है जिसका डाक्टरी इलाज जरूरी है। धर्मनिरपेक्ष हिन्दू जाति का सबसे निराला सिद्धान्त है जो हिन्दू परम्परा और दर्शनशास्त्र के अनुकूल है।

अपने इस बदनीयत विज्ञापन द्वारा मद्रास शहर की मुस्लिम जमातों ने अपने दिल में छिपे रहस्य का और भारतीय सेकुलरिज्म की दरिद्रता का देश के लोगों में विचारवान् लोगों के सामने भन्डाफोड़ कर दिया है।

इस प्रसंग में कुछ सीधे सवाल उठते हैं—क्या मुस्लिम जमातें, जो तमिलनाडु के मुख्य मंत्री की इस कदर इसलिए शुक्रगुजार हैं कि उनकी धर्मनिरपेक्षता पर आस्था है, सचमुच स्वयं धर्मनिरपेक्षवाद पर आस्था रखती है ?

क्या धर्मनिरपेक्षवाद इस्लामी फर्मानों के मुताबिक तर्कसंगत है ? जिसे वह काफिर कहता है ऐसे अविश्वासी के प्रसंग में एक सच्चे मुसलमान के लिए उसका सामना होने पर क्या कर्त्तव्य शरीअत के मुताबिक होगा ? क्या अन्य इस्लामी देश धर्मनिरपेक्ष हैं ? उनके बारे में मुस्लिम जमातों का क्या कहना है ? अगर वे इस सन्दर्भ से कुछ कहने से डरते हैं, तो उनकी दशा शोचनीय होगी ?

"इंडियन एक्सप्रेस" के इस ऐलाने-शुक्रिया के बयान के मुताबिक हिन्दू मुन्नानी ताकतें "इस्लाम, ईसाई और द्रविड़-विरोधी तबकों के भारतीय लोगों के संगठन में फूट डालने की कोशिश कर रही हैं।" इससे स्पष्ट है कि ये जमातें भारतीय लोगों में हिन्दुओं को कोई जगह नहीं देतीं। वे केवल "मुसलमानों, ईसाइयों और आदि द्रविड़ों" के संगठन में फूट पड़ने के भय से बड़ी चिंतित हैं, और ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता की सम्भावना को एक नामुमकिन खामखयाली मानकर ठुकरा दिया है। यह बात समझ में आने योग्य है कि वे आदि द्रविड़ों को इस कारण विशेष महत्त्व दे रही हैं कि वे उनकी मुसलमानी करने (खतने की रस्म) का ख्वाब देख रहे हैं।

और अगर मान लें कि इस मुल्क में फकत हिन्दू मुन्नानी ही सारी साम्प्रदायिक व्याधियों के जिम्मेदार हैं, तो उन जगहों के (साम्प्रदायिक दंगों के) बारे में उनकी क्या सफाई होगी जहाँ हिन्दू मुन्नानी नहीं हैं।

हैदराबाद में 'मजलिसे इत्तेहादुल मुस्लिमीन' का एक एस० एस० उवेसी था, जो पिछले अगस्त के दंगों में गिरफ्तार किया गया और ऐसे हजारों उवेसी लोग इस देश में धर्मनिरपेक्षवाद के अवतार बने मूंछों पर (और दाढ़ी पर भी) ताव देते गश्त कर रहे हैं। साम्प्रदायिक स्थितियों पर काबू पाने के एवज में जमातों का पुलिस का शुक्रिया अदा करना बिल्कुल वाजिब है, बशर्ते कि उनके दिमाग में उवेसी की गिरफ्तारी की मिसाल काबिल इन्दिराज हो सकती है।

अब उन मुस्लिम जमातों और उनके कबीले वालों से हिन्दू मुन्नानी के बारे में भी एक शब्द कहना वाजिब होगा, जो उनका नाम सुनते ही ऐसे भड़क उठते हैं जैसे लाल पलीता देख कर बैल भड़कता है। हिन्दू मुन्नानी उन हिन्दुओं की एक संस्था है जो सांस्कृतिक मेधावी और कुछ ऐतिहासिक मजबूरियों और सामाजिक दुरभिसंधियों की युगों पुरानी दास्तानों से मर्माहत धार्मिक लोग हैं। इस संगठन के लक्ष्य हैं—किसी की हत्या न करना या किसी की चीज में आग न लगाना, बल्कि हिन्दुओं को मारने वाले सब श्रेणियों के लोगों को संगठित करना, जो तमाम जातियों, उपजातियों, सम्प्रदायों और उपसम्प्रदायों तथा दर्जनों ऐसे वर्गों की अलग-अलग कड़ी किलेबन्दियों में अलग-अलग बिखरे हुए हैं, और उनके सामाजिक तथा आर्थिक उत्थान के लिए प्रयत्नशील होना, तथा उसके अलावा सबसे महत्त्वपूर्ण लक्ष्य उन्हें प्रलोभनों और धमकियों के भालों-बर्छों की चोटों से बचाने के लिए ढाल का काम करना जो उनपर दूसरे धर्मों के तहखानों और छिपने की सुरक्षित जगहों से बिना रुके बराबर बरसाए जा रहे हैं।

क्या इनमें से कोई एक भी लक्ष्य ऐसा है जो मुसलमानों या ईसाइयों की एकता का घातक है? यह किसी की भी समझ से बाहर की बात है कि एक धार्मिक इकाई के रूप में हिन्दुओं की संगठित एकता के नाम को सुनकर ही क्यों कोई लाल-नीला-पीला-सफेद-काला पड़ जाता है। इसका कारण शायद यह हिन्दू मुन्नानी का ही अपराध है कि उसने एक हजार वर्ष पूर्व अपने को क्यों नहीं संगठित किया।

अन्त में, मगर गैर-हिन्दुओं, मुसलिम जमातों के लिए यह शुरुआत ही होगी कि वे हिन्दू मुन्नानी के बारे में अपने दिल से सारी खामखयलियाँ दूर कर दें और यह यकीन करना सीखें कि उन्हें हर हालत में उससे खौफ खाने वाली कोई बात नहीं है जबतक वे हिन्दुओं और हिन्दुत्व को आघात पहुँचने वाली कोई ऐसी कार्रवाई नहीं करते?

('आर्गनाइजर' से साभार)

(पृष्ठ ७२ का शेष)

एक ओर से … अभय और दूसरी ओर से शिवदयाल पासी उसके घेरे को तो…ड़ रहे थे कि इसी समय मुल्ला इलाही ने एक कटार उसकी आंख को लक्ष्य कर फेंकी। कटार आंख में धंस गयी। इतने ही में अख्तर ने घोड़ा उसके ऊपर चढ़ाया। वह लड़खड़ाया। इसी समय एक घायल पड़े मुसलमान ने उसके पैर में तलवार मार दी। वह गिर पड़ा। तमाम शत्रु उस पर भूखे भेड़िए के समान टूट पड़े।

अभय घेरा तोड़ता हुआ घोड़ों से लाशों को रौंदता हुआ अख्तर के समीप जा पहुंचा। शीघ्र ही वैस राजपूतों ने लाशों के ढेर से निर्भय के शरीर को निकालकर एक घोड़े की पीठ पर लाद लिया।

अख्तर अभय से बोला—"देख, तेरा भाई निर्भय मर गया, तू भाग जा।"

अभय के नेत्रों से अग्निज्वाला निकलने लगी—"कायर! निर्भय मरा नहीं, वह असीम हो सम्पुर्ण हिन्दुत्व में समाहित हो गया है। ले, निर्भय के बलिदान से अनुप्राणित तलवार का शौर्य देख।" अभय ने अख्तर पर एक करारा वार किया। उसने ढाल पर रोक कर घोड़ा पिछाड़ना चाहा कि इसी समय हर-हर महादेव का भीषण नाद करते हुए शिवदयाल पासी घेरा तोड़कर उसके पास जा पहुंचा। अख्तर को घोड़ा हटाते देख एक पासी ने बर्छा उसके पेट में घुसेड़ दिया। घोड़ा चमक कर लड़खड़ाया। अभय का तलवार का एक करारा हाथ अख्तर के चेहरे पर पड़ा। तलवार उसके चेहरे को नाक के पास से काटती हुई निकल गई। उसका आधा चेहरा कट कर अलग जा गिरा। वह चिघाड उठा और घोड़े सहित गिरकर ढेर हो गया।—

पासियों और वैसों ने हर्ष से हर-हर महादेव का भीषण नाद किया।

अख्तर के मारे जाने पर मुल्ला इलाही अभय की ओर बढ़ा! रामदेव पाण्डे फरसे से शत्रुओं का संहार करते हुए उसके सामने जा पहुंचे।

"ओ बम्हन, तू भी लड़ने आया है—ही, ही, ही! खी! खी! खी! मुल्ला इलाही पैशाचिक हंसी हंसते हुए बोला—'काफिरों के दोनइया चाट ब्राह्मण भी लड़ने का जोश-खरोश रखते हैं…ही…ही…। खी…खी…।"

—"कायर!! अफगानों से लड़ने आया है?" — ही ही! मेरे रसूले खुदा ने कहा है, काफिरों की लौंडियों को लूटकर उनके साथ ऐश करना हर मोमिन का फर्ज है।। मैं अपना मजहबी फर्ज पूरा कर रहा हूं।"

राम पाण्डे मुल्ला इलाही की ओर बढ़े। मुल्ला हाथ में तलवार लिए आगे बढ़ा, उसकी आंखों से वहशीपन झांक रहा था। अधपकी दाढ़ी हवा में फरफरा रही थी।

रामदेव का फरसा मौलाना की तलवार से टकराया। दूसरे ही क्षण मौलाना का सिर कट कर भूमि पर लोटने लगा।

हिन्दुओं ने हर्ष से भीषण नाद किया हर-हर महादेव। इनके नाद ने शत्रुओं के हृदय विदीर्ण कर दिये।

बजरंग सूबेदार से जूझ रहा था। डोला बीच में रखा था। चारों ओर से शत्रु घेरे थे। बजरंज दस अश्वारोही और बीस पैदल सैनिकों के साथ डोले की रक्षा कर रहा था।

बक्सर का काजी मुल्ला इकराम अली, बजरंग को रक्त से सराबोर देख बोला —"क्यों तू इन औरतों के लिए जान दे रहा है? आखिर ये ऊंची जाति के ब्राह्मण, ठाकुर तुम शूद्रों का अपमान ही तो करते हैं। उनका साथ छोड़ दे। मेरी नेक सलाह मान—इस्लाम के पाक साये में आ जा। यहां तुझे इज्जत, दौलत, बड़ा रुतबा सब कुछ मिलेगा। क्यों बेकार हिन्दू रहकर शूद्र बना है?"

"जिनकी आनुवंशिकता भ्रष्ट नहीं हुई है, जिनका रक्त शुद्ध है, जिन्हें किंचित् स्मृतियों का ज्ञान है, वे शूद्र, धन-पद के लोभ में आकर अपना धर्म नहीं छोड़ते। अज्ञानता का तमस् उन्हें उस ओर ले जाता है। हमारे धर्म में शूद्र तपश्चर्या कर ब्राह्मण हो जाता है। ब्राह्मण नियमों से गिरने पर अज्ञान के अंधकार से आच्छादित हो शूद्र हो जाता है। वे ब्राह्मण नहीं हैं जो जाति को मानते हैं। वे सब पाखण्डी हैं। मैं आचार्य देवेन्द्र पाण्डे का शिष्य हूं। मुझे धर्म का पूर्ण ज्ञान है। म्लेच्छ, मजहबी डकैत, धर्म में हस्तक्षेप मत कर।" बजरंग ने उसके साथियों से युद्ध करते हुए कहा।

हर-हर महादेव—जय दुर्गा का भीषण उद्घोष करते हुए पाण्डे, अभय और शिवदयाल पासी ने घेरा तोड़ दिया। मार काट करते हुए उन्होंने डोला उठाया और अरगल की ओर तीव्र वेग से बढ़ चले। अरगल जब आधा कोस दूर था, काजी इकराम अली ने पाण्डे को घेरा और खिलखिलाते हुए बोला—काफिरो, तुम सब जान भले ही दे दो, मगर मैं इन मस्तूरातों को जरूर ले जाऊंगा।

रामदेव पाण्डे का फरसा उसकी तलवार से टकराया, परन्तु फरसे की

लाठी कट गयी। वह दूर जा गिरा। पाण्डे निहत्थे हो गये। काजी ने उन पर तलवार का वार किया पर बजरंग ने घोड़ा पलटा कर उसकी तलवार का वार अपनी तलवार पर रोक लिया और दूसरा वार कर अपने घोड़े को उसके घोड़े पर हूल दिया। काजी का घोड़ा लड़खड़ाया। मार्ग ऊँचा था, घोड़े के पिछले पैर सड़क से नीचे चले गए। वह गिरकर ढेर हो गया। काजी के हाथ से तलवार छूट गई। वह लुढ़कता हुआ दूर झाड़ियों में जा गिरा।

पाण्डे के हाथ में तलवार आ गई थी। वह उसी से आत्मरक्षा करते हुए बजरंग के पास आ गये। बजरंग घोड़े से कूद पड़ा और उसे पाण्डे को सौंप बोला—"इस काजी को दंड देना आवश्यक है।"

"हाँ यार बजरंग ! यह काजी न्यायाधीश होकर भी बलात्कारी है। आज इस म्लेच्छ व्यवस्था में संपूर्ण देश में बलात्कार की आंधी आ गयी है। सैनिक, नवाब, रईस और न्यायाधीश, काजी सभी तो बलात्कारी हो गये हैं। आगे बढ़ो। इन बलात्कारियों का समूल संहार कर इनका अस्तित्व संसार से मिटा दो। किसी भी बलात्कारी को इस पावन वसुन्धरा में जीने का कोई अधिकार नहीं।" पाण्डे तलवार ऊँची कर बोले।

बजरंग रक्तरंजित तलवार हाथ में लिए काल रूप हो काजी को मारने सड़क से नीचे दौड़ पड़ा। काजी भयभीत हो कांपता हुआ भागा। पार्श्व में पासियों के खेत थे। एक झाड़ी के पास एक पासी नवयुवक एक सूअर का वध कर रहा था। सूअर पृथ्वी पर गिरा चिचिया रहा था। दो लम्बे मजबूत लकड़ी के बर्छे उसकी गर्दन में धंसे थे। काजी लड़खड़ाता हुआ उसी नवयुवक के पास गिर पड़ा।

बजरंग उस नवयुक को जानता था। वह चिल्लाकर बोला—"मार शंकर ! मार डाल इसे। देख, यह वही काजी है, जो चतुर्थ वर्ष के आर्यों के अबोध बालकों का अपहरण कर उन्हें मुसलमान बनाता है। उन्हें राष्ट्र-घाती इस्लामी तालीम के लिए सुदूर देशों में भेज देता है। मार शंकर ! आज देश में बलात् धर्म परिवर्तन की मजहबी आंधी आ गई है। इन बलात् मजहबी बनाने वाले कठमुल्लाओं और काजियों को इस आर्यावर्त में जीने का कोई अधिकार नहीं। मार इसे। एक भी मुल्ला जिन्दा न बचने पाये जिससे भविष्य में धर्म संकट सदा के लिए समाप्त हो जाए। शत्रु के विनाश में ही पूर्ण विजय निहित है।"

शंकर सूअर के शरीर में धंसा हुआ बर्छा निकाल कर काजी के पास

पहुंचा। काजी चीखते हुए गिड़गिड़ाया—मुझे मत मारो! रहम करो। मुझे छोड़ दो! मैं तुम्हें बहुत बड़ा इनाम दूंगा।"

"शूद्र इनाम के लोभ में आकर धर्मयुद्ध से मुख नहीं मोड़ते। देर मत कर शंकर!— बजरंग जोर से चिल्लाया।

—"म···मैं······निहत्था हूं। निहत्थे को मारना तुम्हारे धर्म के—विरुद्ध है। मुझ पर दया······।"

काजी गिड़गिड़ाते हुए शंकर के पैरों पर गिर पड़ा।

"हट पापी म्लेच्छ "शंकर ने उसके सिर पर कसकर लात का एक प्रहार किया। वह लुढ़क कर लेट गया। सांस खींचने लगा।

"न जाने कितनी अबलाएं तेरे सामने रोई गिड़गिड़ाई होंगी। पर उनकी लाज लूटते हुए तुझे दया नहीं आई, अबोध बच्चों का अपहरण कर उन्हें मुसलमान बनाते समय तुझे धर्म का विवेक नहीं रहा। इस आर्यावर्त की भूमि का अन्न-जल ग्रहण कर भी तूने कभी धर्म का पालन नहीं किया। केवल अपने मजहबी कुकृत्य में जुटा रहा। इसलिए इस पावन राष्ट्र का धर्म तेरी रक्षा नहीं करेगा। धर्म कहता है। निर्दयी हिंसक का अन्त प्रति-हिंसा द्वारा ही संभव है। यही धर्म की आज्ञा है। मर दुष्ट, आज तेरे पापों का अन्त हो गया।" शंकर ने रुद्र रूप धारण कर उसकी गर्दन में सूअर के रक्त से सना बर्छा घुसेड़ दिया। काजी चिचियाया और मर कर ढेर हो गया।

इसी समय दस-पन्द्रह नवयुवक और आ पहुंचे। बजरंग बोला—"शंकर! अरगल की रानी का डोला मुसलमान अपहरण कर लिए जा रहे हैं। जितने लोग इस गांव में हों उन्हें लेकर रानी की सुरक्षा के लिए तुरन्त आओ।"

क्षण भर में तमाम पासी गड़ासा, भाला, बल्लम, कुल्हाड़ी, लाठी इत्यादि जिसके हाथ जो लगा, लेकर युद्ध में चल दिए।

बजरंग पलट पड़ा। पाण्डे और शिवदयाल सूबेदार से जूझ रहे थे। डोले का बढ़ना रुक गया था। अभय डोले के पास खड़ा अंग से झर-झर रक्त बहता हुआ तलवार चला रहा था। उसके पास चार-पांच पासी ही शेष थे। शेष सब बिखर गये थे। पाण्डे घोड़ा बढ़ा सूबेदार से जा टकराए पर उन्हें तलवार चलाने का अच्छा अभ्यास न था। अचानक उनके घोड़े को ठोकर लगी, वे घोड़े सहित लड़खड़ा कर गिर पड़े। शत्रुओं ने उन्हें घेर

लिया। उन्हें कई घाव लगे। वे उठने का प्रयत्न करने लगे। इतने में ही एक घायल पड़े शत्रु ने उन्हें पेट में कटार घोप दी।

शिवदयाल बड़े जीवट से तलवार चलाते हुए पाण्डे के पास पहुंचा। उसकी दृष्टि पाण्डे के पेट से निकल रहे रक्त की धार पर पड़ी। वह कांप उठा।

"ओह भैया! यह क्या हुआ?" उसकी आंखों से आंसू छलछला आए। बजरंग पाण्डे के साथ खेल-कूद कर बड़ा हुआ था। बचपन में उसकी मां मर गई थी, तब पाण्डे की माँ ने ही उसका पालन-पोषण किया था। बजरंग पाण्डे से दो-तीन वर्ष ही छोटा था।

"मैं महाकाल के साथ प्रयाण कर, महाशून्य में असीम हो, सम्पूर्ण हिन्दुत्व में समाहित हो जाता हूं। मेरे संदेश शाश्वत रहेंगे। उन्हें क्रान्ति की दावाग्नि के रूप में विकीर्ण कर देना। यहीं इस निर्धन बटुक ब्राह्मण की संम्पूर्ण हिन्दुत्व से अभिलाषा है। पाण्डे बोले, "रो मत। तू गीता का ज्ञानी है, बजरंग।"

"भैया। तुम्हारे न रहने पर मैं मां को मुख कैसे दिखाऊँगा?"

"माँ को तुम देखना बड़े भाई शिवदयाल।" पाण्डे हांफते हुए बोले।

हर-हर-महादेव! या अली! अल्ला हो अकबर या अली मारा मारा! हाय या ओह ह।

भीषण युद्ध मचा था।

पाण्डे की दृष्टि उधर गयी। उनकी सांस मंद होती जा रही थी परन्तु वह आत्मशक्ति द्वारा बोले, "रो मत बजरंग, देख राष्ट्र-धर्म का अभ्युत्थान तेरे बलिदान का आह्वान कर रहा है। क्रांति की ज्योति मेरे बलिदान से जली है, उसे अपने बलिदान से महलों से झोंपड़ी तक विस्तार दे दे। तेरे बलिदान से विजय अवश्यम्भावी है। कभी टूटना नहीं। कभी झुकना नहीं फिर किसी अबला की लाज पर संकट न आए, इसलिए आगे बढ़। देर मत कर। ओ३म्। पाण्डे की गर्दन एक ओर झूल गई।

"ओ मेरे भाई!" शिवदयाल रो पड़ा। उसने बचपन में पाण्डे और बजरंग को अपनी गोद में खिलाया था। परन्तु बजरंग की आंखों के आँसू सूख गए। उसकी आंखों से क्रोधाग्नि निकलने लगी "भैया, तुम्हारे बाद में जीकर क्या करूंगा! हां तुम्हारे हत्यारे भी जिन्दा नहीं बचेंगे।"

वह घोड़े पर चढ़ा और लगाम मुंह से पकड़ दोनों हाथों से तलवार चलाता हुआ म्लेच्छ सेना के बीच जा धंसा।

शंकर तमाम पासियों सहित हर-हर महादेव का नाद करते हुए बजरंग के पीछे ही चल दिया। बजरंग ने काल रूप धारण कर लिया। जो भी उसके सामने आया, वह मारा गया।

अभय ने सूबेदार से डोला छीन लिया। वह काफी घायल हो गया था। इसी समय आकाश में निःस्तब्धता छा गयी और अत्यन्त तीव्र वेग से आंधी घू-घूकर चलने लगी। प्रकृति भी अन्याय के प्रतिरोध में संलग्न हो गई। अभय साथियों के साथ डोले की रक्षा कर रहा था। पर वह बहुत थक गया था। कब वह गिर पड़े इसके बारे में उसके साथी आशंकित थे।

इतने ही में काल रूप धारण कर बजरंग उसके पास जा पहुंचा और शत्रुओं के सिर उड़ाता हुआ डोला पूर्ण रूप से अपने अधिकार में कर अरगल की ओर बढ़ चला।

अचानक अभय को शत्रुओं ने घेर लिया। वह हांफ रहा था। तलवार ठीक से चल नहीं रही थी। बजरंग की दृष्टि उस पर पड़ी। वह शंकर से बोला—"शंकर, डोले की सुरक्षा तुम करो। निर्भय मारा जा चुका है। बैस वंश को जीवित रखना है, अभय को बचाना है।"

बजरंग का घोड़ा तीव्र वेग से अभय के शत्रुओं के घेरे में घुस गया। अभय सूबेदार से लड़ रहा था। सूबेदार ने अभय के ऊपर नेजा ताक कर फेंका। अभय के लिए बचना सम्भव न था। परन्तु बजरंग ने अपना घोड़ा उसके बीच में डाल दिया। अभय बाल-बाल बच गया। नेजा बजरंग के सीने में जा धंसा। उसने एक हाथ की तलवार फेंककर सूबेदार के मारी। सूबेदार का हाथ भुट्टा-सा कट अलग जा गिरा।

बजरंज ने वक्षःस्थल में धंसा नेजा हाथ से खींचकर निकाला। उसके मुख से निकला 'ओ३म्' और नेजे के साथ ही उसके प्राण शरीर से निकल गये। वह घोड़े से गिरकर वीरगति को प्राप्त हुआ।

इसी समय जयकारा-ए-वीर बजरंगी-हर-हर महादेव! जय भवानी! का भीषण तुमुल नाद उठा और अरगल की घुड़सवार सेना लिए महाराज पुंडीर देव गौतम आ पहुंचे।

अरगल की सेना ने म्लेछ सेना पर धावा बोल दिया। गाजर-मूली की भांति म्लेच्छों को काटते हुए राजपूत आगे बढ़ चले। मेले में पहुंचकर उन्होंने सूबेदार के कैम्प में आग लगा दी। जितने शत्रु मिले, सब काट

डाले गए। सूबेदार अपना एक हाथ तथा अनेक सिपहसालार गंवाकर तथा सैकड़ों सैनिकों का संहार कराकर भाग गया।

महाराज पुंडीर देव गौतम डोला सुरक्षित ले अरगल पहुंचे। राजवैद्य ने अभय को बचा लिया। निर्भय के बलिदान और अभय की वीरता से प्रसन्न हो महाराज पुंडीर देव गौतम ने उसे उन्नाव तथा गांडीव प्रांत के चौदह गांवों का राज्य, जो कालांतर में बैसवाड़ा कहलाया, दे अपनी पुत्री राजकुमारी वनलता का विवाह उससे कर दिया।

आज भी निर्भय और अभय की वीरता की गाथा बैंड़े वारे के जन-जन में गांव-गांव में गूंज रही है। परन्तु निर्धन ब्राह्मण वटुक रामदेव और बजरंग पासी का बलिदान अप्रकाशित और उपेक्षित ही रहा। किसी चारण या भाट ने उनकी प्रशस्ति के गीत न गाए। किसी कवि ने उनके बलिदान पर काव्य लिखकर श्रद्धांजलि अर्पित नहीं की। वह इतिहास के गर्त में ही छिप गया। शक्तिहीन सत्य की कोई महत्ता नहीं होती।

वैदिक संपत्ति

स्वर्गीय पंडित रघुनन्दन शर्मा की अमर कृति—
भारतीयता के प्रत्येक उपासक के लिए पठनीय।

कपड़े की जिल्द : मूल्य ८१)

अभी —६१) मे मंगाइये
दयानन्द संस्थान, वेद मंदिर
नई दिल्ली–५

यवन-ईसाई आक्रमण के विरुद्ध
साहित्य प्रकाशन और वेद-भाष्य प्रकाशन में सहयोग दें।
अधिक नहीं तो कम से कम १५१ रु. अवश्य भेजें।

—राकेशरानी

कहानी

वचन की आन : वह बलिदान

—राकेशरानी

पुणे महाराष्ट्र की राजनीति का हृदय स्थल है। नगर के मध्य भाग में एक मकान के एक कमरे में आठ-दस युवक बैठे हुए थे। उनमें से एक-दो के हाथ में ब्रिटिश शासन विरोधी पत्रक भी थे।

उनमें से एक युवक सहसा बोल उठा "अब क्या महत्त्व है ऐसे पत्रकों का? अब तो कोई धमाका ही होना चाहिए।" दूसरा नौजवान बोला "हमें इन निर्जीव पत्रकों में प्राण डालने होंगे।"

"इसीलिए तो हम एकत्रित हुए हैं यहां। कुछ न कुछ तो करना ही होगा हमें। पहला काम तो सामग्री जुटाना है, तभी अगला कदम उठाया जा सकता है।" युवकों में से एक ने कठिनाई स्पष्ट की। उनमें से एक ने कहा कि।

"कोई ठोस योजना पहली आवश्यकता है। काम का विभाजन हो जाना चाहिए। सामग्री कौन लाएगा पहले यह तो तय करना होगा।" इस बैठक के आयोजन में प्रमुख भूमिका निभाने वाला व्यक्ति बोला।

"क्या चाहिए ?" युवकों में से एक ने प्रश्न किया।

"चार हथगोले चाहिए।" ऐसा लगता था कि यह कहने वाले के समक्ष कोई सुविचरित योजना थी अवश्य ही।

"मैं दो दिन में बता सकूंगा।" एक युवक ने कहा।

और उसके बाद बैठक के आयोजक ने कहा कि सामग्री प्राप्त हो जाने के बाद पुनः चर्चा करेंगे। इस निश्चय के साथ बैठक समाप्त हो गयी।

१९४२ की क्रांति से देश में आशा और उत्साह का जो वातावरण बना था, उसमें ढिलाई-सी आने लगी थी। क्रांतिकारी कार्यकर्त्ता भूमिगत हो हो चुके थे। पुणे नगर के कुछ युवक स्थिति से विक्षुब्ध थे। उन्हें गुप्त पत्रिकाएं छापने या छपवाने और उन्हें जनता तक पहुंचाने के काम से संतोष नहीं था। उनमें से कई के मन में यह प्रश्न भी उभर रहा था कि क्या किसी अन्य प्रभावी मार्ग का अवलम्बन नहीं किया जा सकता?

बैठक में शामिल हुआ एक युवक एक अन्य युवक के पास गया और बोला कर्णिक, चार बम चाहिए।"

"कब चाहिए और कौन ले जाएगा ?" कर्णिक ने प्रश्न किया।

"कौन ले जाएगा ?"

"मैं ही ले आऊंगा।"

"ठीक है। कब लोगे ?"

"आज रात को ही।"

नहीं, आज रात को नहीं। कल सायंकाल छह से आठ के मध्य तुम्हें एक लड़का मिलेगा। उससे नाम मत पूछना और न उसे अपना ही बताना। उससे एक ही प्रश्न करना कि क्या तुम रानडे हो? बदले में वह तुम से पूछेगा चार गुना चार कितने होते हैं ?" यही होगा संकेत। उसके बाद वह तुम्हें एक थैला देगा। तुम वह लेकर चले आना।"

"कि अच्छा, यह तो ठीक है। किन्तु एक बात तो बताओ कि जब हम और तुम एक-दूसरे को भली भांति जानते हैं तो फिर किसी तीसरे व्यक्ति को बीच में क्यों लाया जाए।"

कर्णिक बोला "मेरा संग्रह कहां है बमों का यह तो तुम नहीं जानते हो ना। और मैं स्वयं तुम्हें ये बम देने वाला नहीं हूँ अतएव तुम मेरा नाम नहीं बता सकोगे यदि तुम पुलिस के हाथ चढ़ गये तो भी।"

"किन्तु यदि मैंने विवश होकर तुम्हारा नाम बता दिया तो क्या होगा कर्णिक ?"

"उस स्थिति में भी पुलिस मुझ से कोई जानकारी प्राप्त नहीं कर पाएगी।"

□ □ □ □

"हथगोले तो मैं ले आया हूं। अब अगला कदम आपको उठाना है," उस युवक ने अपने दल के प्रमुख से कहा।

"तुमने एक बहुत बड़ी समस्या का समाधान कर दिया है। अब इसके आधार पर हमारी योजना आगे बढ़ सकती है," प्रमुख ने कहा।

"तुम्हारी दम्मू से भेंट हुई थी। वह मुझे उपदेश देने लगा था कि यदि हमने कोई एक्शन किया तो बापू को दुःख होगा। अहिंसा हमारा धर्म है। मैं तो उस कायर के गाल पर एक थप्पड़ जड़ देना चाहता था। किन्तु मैंने धैर्य से काम लिया।"

प्रमुख बोला "यह बताकर तुमने अच्छा ही किया है। प्रत्यक्ष कार्रवाई

होने तक ऐसे कई भाग जाएंगे । किन्तु जितने हमारे साथ टिकेंगे उतने ही काफी होंगे।"

"मुझे इस बात का क्षोभ है कि ऐसे लोग अपने मन की कायरता पर पर्दा डालने के लिए गुरु की अवमानना होगी; जैसे शब्दों की आड़ ले लेते हैं। दूसरे को भी अपने समान डरपोक बनने का उपदेश देते हैं। इनसे तो वह बालू ही अच्छा है जिसने गत दिवस मुझसे स्पष्ट कह दिया था कि मुझसे यह काम नहीं हो सकेगा । मैं अगली बैठक में भाग नहीं लूंगा, क्योंकि जिन मामलों में मैं सहयोग नहीं कर सकता, उसका ज्ञान भी मुझे क्यों हो। उसने कम से कम ईमानदारी से अपनी बात कह तो दी है।"

□ □ □ □

कहीं सड़क दुर्घटनाएं करने अथवा तोड़-फोड़ जैसे कर्मों की बजाए अंग्रेजों को सीधी हानि पहुंचानी चाहिए, यह विचार घर कर गया था इन युवकों के मन में। अतएव वे किसी ऐसे स्थान के बारे में विचार करने लगे जहां उन्हें ब्रिटिश सैनिक एक ही स्थान पर अच्छी खासी संख्या में मिल जायें और वे उन्हें अपनी कार्रवाई का निशाना बना सकें।

क्रांतिवीर वासुदेव बलवंत फड़के द्वारा की गयी बम विस्फोट की कार्रवाई को अब बारह वर्ष हो चुके थे। किन्तु उनकी वह कार्रवाई इन युवा क्रांतिकारियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनी हुई थी।

पुणे का कैपिटल सिनेमागृह युद्धकाल में मुख्य रूप से सैनिकों के लिए ही आरक्षित था। इन युवकों ने उसी सिनेमागृह को अपनी कार्रवाई के लिए ठीक स्थान माना।

हथगोला फेंकने की बजाय टाइम बम रखे जाने की योजना बनाई जाने लगी। इस दृष्टि से ग्रेनेड के कई परीक्षण भी इन युवकों ने एकान्त में किए। इस प्रक्रिया का भली-भांति अध्ययन किया गया। विस्फोट में कितना समय लगेगा इस संबन्ध में भी अध्ययन किया गया।

जब परीक्षण और अध्ययन के बाद इन युवा क्रांतिकारियों को अपनी कार्रवाई की सफलता का विश्वास हो गया तो अधिकारियों को चेतावनी पत्र भेज दिए गए—

"२६ जनवरी स्वतन्त्रता की घोषणा की वर्षगांठ है। अतएव उस दिन से सभी सिनेमागृहों में 'वन्देमातरम्' गीत का गायन होना चाहिए। जिन सिनेमागृहों में यह गीत नहीं गाया जाएगा, हम उन्हें नष्ट कर देंगे।"

चेतावनी सूचक इस पत्र के प्राप्त होते ही पुलिस दल सतर्क हो गया। सिनेमागृहों की सुरक्षार्थ कड़ी व्यवस्थाएं की जाने लगीं।

□ □ □ □

२४ जनवरी, १९४३ की रात। कैपिटल सिनेमागृह में एक जोरदार धमाका हुआ। भगदड़ मच गयी। सर्वत्र आतंक व्याप्त हो गया।

दूसरे दिन पुणे ही नहीं अपितु देशभर के समाचार पत्रों में यह समाचार प्रमुखता से प्रकाशित हुआ। शीर्षक लगे "पुणे के सिनेमागृह में गोरे सैनिकों पर बम फेंका गया। दो सैनिक मरे, दो की हालत चिन्ताजनक। संदिग्ध व्यक्ति फरार होने में सफल।"

और फिर विस्फोट के फलस्वरूप मरे सैनिकों की संख्या बढ़कर चार हो गयी।

कैपिटल सिनेमागृह में धरा हथगोला खिड़की के शस्त्र निर्माण कारखाने में बना बताया गया। प्रमाण प्राप्त करने के लिए इतना ही सूत्र पर्याप्त था।

छानबीन जारी रही और अंततः ३० जनवरी १९४३ को खिड़की के कारखाने में काम करने वाले कर्णिक को बंदी बना लिया गया। इसका पूरा नाम था भास्कर पांडुरंग कर्णिक। तीस वर्ष का था वह मातृभक्त युवक, रत्नागिरि—वही रत्नागिरि जहां स्वातन्त्र्यवीर सावरकर ने अनेक वर्ष बिताए थे—इस युवक का जिला था। उसी के ग्राम करूल का रहने वाला था कर्णिक।

कर्णिक देशभक्ति की भावनाओं से प्रेरित था। किन्तु अपनी सीमाओं और क्षमता का उसने भली-भांति आकलन किया था। वह स्वयं तो क्रांतिकार्य में सक्रिय नहीं हो सकता था, किन्तु उनमें सहयोग तो कर ही सकता है, इसी भावना से वह प्रेरित था। यह उसने बहुत पहले ही निश्चय कर लिया था कि यदि कभी वह पुलिस के हाथ पड़ भी गया तो अपनी वाणी पर ताला ही लगा लेगा।

□ □ □ □

पुलिस चौकी में कर्णिक पर प्रश्नों की बौछार हुई। कर्णिक बोला तो सही किन्तु उसने अपने बयान से पुलिस जांच को गलत राह पर डाल दिया। उसने पुलिस को जो सूत्र दिए वे गुमराह करने वाले ही थे। अतएव पुलिस ने खोज बीन तो की किन्तु उसे निराशा ही हाथ लगी।

हताश अधिकारियों ने कर्णिक को अपने समक्ष पेश किए जाने की आज्ञा दी।

पहरेदार उसे लाने के लिए उसकी कोठरी पर गया तो कर्णिक को वहां उसने सर्वथा अचेत पाया। अधिकारियों को सूचित किया गया। डाक्टर बुलाया गया और उसने कर्णिक को मृत घोषित कर दिया। कर्णिक ने अपना वचन निभा दिया। उसने क्रांतिकारी युवकों के बारे में कोई सूत्र दिए बिना ही अपनी नश्वर काया राष्ट्र देवता के श्री चरणों में अर्पित कर ली। अपने पास छिपा कर रखे गए साइनाइड से उसने अनन्त यात्रा की व्यवस्था जो कर ली थी।

पुलिस की छानबीन जारी रही और अंततः २० मार्च, १९४३ को सात युवक श्रीधर पुरुषोत्तम लिमये, बाबूराव चव्हाण, प्रभाकर शिवराम सालवी, शंकर त्र्यंबक कुलकर्णी, रामसिंह रत्न सिंह परदेशी, हरिवामन लिमये और दत्तात्रेय जोशी पर षड्यंत्र का अभियोग चला।

जूरी ने प्रमाणों के अभाव में सभी अभियुक्तों को बरी कर दिया।

बरी किए जाने के बाद भी इन युवकों को भारत सुरक्षा कानून के तहत बंदी ही रखा गया। दत्तजेय जोशी ने बंदी वास की अवस्था में ही दस सितम्बर, १९४४ को अन्तिम श्वास लिया।

इस काण्ड से संबन्धित युवक अपने शीश हथेली पर धर कर स्वातन्त्र्य समर में उतरे थे। उन्होंने अपना कर्त्तव्य ईमानदारी से निभाया। उन्होंने कष्ट कंटकों का पथ अपनाया—केवल इसलिए कि आने वाली पीढ़िया आजादी का सुख भोग सकें।

"पंजाब : तूफान के दौर में" का विमोचन

१५ नवम्बर को दिल्ली हिन्दी साहित्य सम्मेलन द्वारा नई दिल्ली के विट्ठल भाई पटेल हाउस में आयोजित एक समारोह में "आर्य जगत के सम्पादक श्री क्षितीश वेदालंकार द्वारा लिखित पुस्तक "पंजाब तुफान के दौर में" का विमोचन उत्तर प्रदेश सरकार के आबकारी मन्त्री श्री वासुदेव प्रसाद सिंह के हाथों सम्पन्न हुआ। वक्ताओं ने इस पुस्तक के लेखन के लिए लेखक को बधाइ दी। श्री खुशवन्त सिंह (सदस्य-राज्य सभा) जन सत्ता के सम्पादक श्री प्रभात जोशी, नव भारत टाइम्स के सम्पादक श्री राजेंद्र माथुर, प्रताप और वीर अर्जुन के सम्पादक श्री के० नरेन्द्र और प्रसिद्ध इतिहासकार डाक्टर सत्यकेतु विद्यालंकार ने पंजाब की स्थिति पर अपने विचार प्रकट किये।

महान् देशभक्त लाला लाजपतराय

—अशोक प्रेमी

दूरदर्शी लाला जी

लाला लाजपतराय जी एक दिन अपने साथियों से बातचीत कर रहे थे, जिसके दौरान उन्होंने कहा कि "मुझे ऐसा डर है कि हमारे देश में एक मुस्लिम स्टेट बन जाएगी।" और यह बात तब कही गई थी जब किसी को पाकिस्तान का ख्याल भी नहीं था। आचार्या लज्जावती जी ने पूछा कि "क्या हमें लाहौर भी छोड़ना पड़ेगा?" तो उन्होंने कहा "हो सकता है। यह तो हिन्दुओं की ताकत पर निर्भर होगा, हर हिन्दू औरत की इज्जत खतरे में पड़ जाएगी, और अपनी रक्षा उसे स्वयं करनी पड़ेगी। मैं चाहता हूँ कि हर हिन्दू औरत और मर्द अपने पास कृपाण रखे। और उन्होंने एक कृपाण आचार्या लज्जावती जी को उस दिन दी, और कहा; इसकी तुम्हें जरूरत पड़ सकती है।" वह कृपाण आज भी उनके पास है। अगले दिन एक नेता ने आचार्या जी पर चोट की कि तुम्हारे लाला जी तो महासभाई हो गए हैं। तो उन्होंने जवाब दिया, ऐसा बिल्कुल नहीं है। उन्हें तो आपकी नीतियों के कारण यह आशंका है। उन्होंने इस समस्या पर १३ लेख १६४२ में विविध पत्रों में लिखे थे। वे समझौते द्वारा लीपा-पोती करने के खिलाफ थे। वे तो देश को एक सांझा परिवार बनाना चाहते थे। उन्होंने लिखा है—

"मुझे यह देखकर दुःख होता है कि कुछ उदार विचारों के हिन्दू, जो संसार का भ्रमण कर चुके हैं, व्यवहार में मुसलमानों को अस्पृश्य समझते हैं। भारत मे राजनीतिक एकता तब तक नहीं आ सकती जब तक एक भी हिन्दू इस विचार का है कि गैर-हिन्दू के हाथों पानी पीने और खाना खाने पर वह धर्म-भ्रष्ट हो जाएगा।" उनकी आशंका कितनी सही निकली यह बात शीघ्र ही देश विभाजन से सिद्ध हो गई।

लाला जी को स्वदेशी वस्तुओं से बहुत प्रेम था, और उनका विश्वास था

कि यदि हमने देश की तरक्की करनी है तो हमें अपना व्यापार भी बढ़ाना पड़ेगा। इसीलिए उन्होंने पंजाब नैशनल बैंक और लक्ष्मी बीमा कम्पनी की स्थापना की, परन्तु यह शायद ही किसी को मालूम होकि लुधियाना की होजरी का कारोबार जिसके लिए वह देश में ही नहीं, बल्कि सारे संसार प्रसिद्ध है, उसके संस्थापक भी लाला जी ही थे। यह काम उन्होंने महाशय घसीटा राम के द्वारा करवाया था।

लाला जी के सब से छोटे पुत्र थे प्यारे कृष्ण। लाला जी ने उनको लंदन इम्पीरियल कालेज ऑफ टैक्नालोजी में दाखिल करवाया था, ताकि वह इण्डट्रियलकैमेस्ट्री पढ़कर आए। उनके विचार में भविष्य में देश को इसकी बहुत आवश्यकता होगी। परन्तु भाग्य को कुछ और ही मंजूर था। उन्हें वहां तपेदिक की बीमारी हो गई, जिससे नौजवानी में ही उनकी मृत्यु हो गई।

ये कुछ-एक उदाहरण मैंने लिखे हैं जिन से पता चलता है कि लाला जी कितने दूरदर्शी थे।

बीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण में पंजाब के शैक्षणिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय जीवन में जिस महापुरुष का नाम प्रथम श्रेणी में आता है, जिन्होंने पंजाब के नव-निर्माण में एक महान् नेता का काम किया, जो केवल पंजाब के ही नहीं, समस्त भारत के एक नेता के रूप में उभरे, वे पंजाब केसरी लाला लाजपतराय ही तो थे।

लाला लाजपतराय का जन्म सन् १८६५ में जिला फीरोजपुर के गांव ढुढिके में हुआ था। उनके पिता लाला राधाकृष्ण जी एक विद्वान् पुरुष थे, जिनका प्रभाव लाला लाजपतराय पर भी पड़े बिना न रहा सका। वे भी बड़े कुशाग्र बुद्धि निकले। उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा ढुढ़िके गांव में ही प्राप्त की। दसवीं पास करने के बाद गवर्नमैंट कालेज में दाखिल हुए। कालेज की शिक्षा के पश्चात् आपने वकालत पास की और आपकी वकालत थोड़े ही समय में चमक भी उठी। आपकी गणना सुविख्यात वकीलों में होने लगी।

इन्हीं दिनों आप आर्यसमाज के कामों में भी बढ़-चढ़ कर भाग लेने लगे। स्वामी दयानन्द के निधन के बाद उनकी स्मृति में आपने डी०ए-वी० कालेज की स्थापना का बीड़ा उठाया। लाहौर में डी०ए-वी० कालेज की स्थापना के साथ ही आप वहीं बस गए और आर्य समाज के क्षेत्र में चल रहे सेवा-कार्यों में जूट गए। डी०ए-वी० कालेज के विकास का श्रेय लाला जी को ही प्राप्त है दान। कई पाठशालाएं भी उन्होंने खुलवाई और इनके लिए दिल खोल कर दान भी दिया।

राष्ट्रीयता की भावना भी उनमें बचपन से ही कूट-कूट कर भरी हुई थी। राष्ट्रीयता का प्रथम परिचय उन्होंने हिसार में दिया था, जहां वे नगरपालिका के अवैतनिक मंत्री थे। अंग्रेज जिलाधीश पालिका का अध्यक्ष था। वहां वे अंग्रेज जिलाधीश से टक्कर लेने को तैयार हो गये। जिलाधीश गवर्नर का स्वागत अंग्रेजी भाषा के प्रशंसात्मक शब्दों से करना चाहता था। जो कि लाला जी उस समय की सरकारी भाषा उर्दू में अभिनन्दन पत्र पढ़ना चाहते थे, जिसमें नगर की अनेक समस्याओं का उल्लेख आता था। अन्त में लाला जी की विजय हुई।

शिक्षा ईसाई मिशनरियों के हाथ में होने के कारण जब भारत का युवक अपने धर्म और संस्कृति से विमुख होता जा रहा था, ऐसे समय में लाला जी ने पंजाब प्रदेश की शिक्षा प्रणाली को नया मोड़ दिया। शिक्षा का ऐसा रूप विकसित किया, जिसमें पाश्चात्य शिक्षा के साथ-साथ भारतीय शिक्षा का प्रकाश भी फैलाया जा सकें। वे स्त्री-शिक्षा के भी पक्ष में थे और इस सम्बन्ध में आपने जोरदार प्रचार भी किया। एक बार आपने कन्या महाविद्यालय जालंधर के एक समारोह में बोलते हुए कहा था—"मैं देश की बेटियों में सीता की पवित्रता, द्रौपदी की कर्मठता और लक्ष्मीबाई की वीरता देखना चाहता हूं।"

लाला जी ने देश में आये प्राकृतिक संकटों में भी सराहनीय सेवा कार्य किए और धन संग्रह करके पीड़ितों की सहायता की। उन्होंने बीमार स्त्रियों तथा अनाथ बच्चों के लिए गुलाबदेवी अस्पताल की स्थापना की।

तभी देश में कांग्रेस का आन्दोलन भी जोर पकड़ गया। लाला जी भी इलाहाबाद के कांग्रेस अधिवेशन में सम्मिलित हुए। वे राजनीति में भी पूर्णतया जागरूक थे। वहां उन्होंने जोरदार भाषण दिया, जिसमें लोगों की मांगों को अंग्रेज सरकार के सामने रखा। जो शिष्टमंडल इंग्लैंड भेजा जाने वाला था, उसका नेतृत्व लाला जी ने ही किया। वहां जाकर उन्होंने बड़े उत्साह एवं साहस का परिचय दिया। कुछ तीखे लेख भी लिखे। वहां उन्होंने अनुभव किया कि स्वतन्त्रता मांगने से नहीं मिलेगी, उसे प्राप्त करना होगा और इसकी प्राप्ति के लिए अनवरत संघर्ष करना होगा।

अतः वे स्वदेश लौटते ही कांग्रेस के गरमदल में शामिल हो गए। लाला जी ने बंगाल के विभाजन के विरोध में चल रहे बंग-भंग आन्दोलन का भी नेतृत्व किया। सरकार ने दमनकारी नीति को अपनाया और लाला जी को माडले जेल भेज दिया गया।

सन् १९१९ में जलियावाला बाग का भीषण कांड हुआ। उन दिनों लाला जी अमरीका में थे। वहां यह समाचार सुन कर उनका खून खौल उठा। वे स्वदेश लौटने को तैयार हो गए। अंग्रेज सरकार पंजाब केसरी के भारत लौटने से बौखला उठी। उसने उन्हें भारत आने की अनुमति न दी। सन् १९२० में जब वे स्वदेश लौटे तो उनका जोरदार स्वागत किया गया। वे कलकत्ता में होने वाले कांग्रेस अधिवेशन के अध्यक्ष चुने गए। उन्होंने गांधी जी के असहयोग आन्दोलन के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। देश में हलचल मच गई, अतः उन्हें फिर गिरफ्तार कर लिया गया।

लाला जी कट्टर हिन्दू थे। जब उन्होंने देखा कि कांग्रेस हिन्दुओं से न्याय नहीं कर रही तो वे कांग्रेस को छोड़ कर हिन्दू महासभा में चले आए। जाति-पांति के भेदभाव को दूर करने, अछूतोद्धार तथा हिन्दुओं में जागृति लाने के लिए उन्होंने अथक प्रयास किए। १९२५ ई० में वे हिन्दू महासभा के अध्यक्ष बना दिए गए। फिर 'स्वराज्य दल' की ओर से लाला जी को केन्द्रीय विधानसभा का उप-नेता नियुक्त किया गया, परन्तु कुछ समय पश्चात् ही आप इस दल से अलग हो गए और स्वतंत्र कांग्रेस दल की स्थापना की। इस दल की ओर से आप दो स्थानों से केन्द्रीय विधानसभा के लिए खड़े हुए और दोनों ही स्थानों से चुन लिए गए।

सन् १९२८ में भारतीयों की राजनीतिक मांगों के सम्बन्ध में जांच करने के लिए ब्रिटिश सरकार ने एक कमीशन भारत भेजा, जो साइमन कमीशन के नाम से विख्यात है। यह कमीशन देश के अन्य भागों में घूमता हुआ ३० अक्तूबर, १९२८ को लाहौर पहुंचने वाला था। अन्य स्थानों की भाँति यहां भी इस कमीशन का स्वागत काली झंडियों में करने का कार्यक्रम था। ये रोष प्रदर्शन कमीशन में कोई भारतीय सदस्य न होने के कारण किए जा रहे थे। इसे रोकने के लिए नगर में धारा १४४ लगा दी गई थी, परन्तु जन-साधारण जलूस निकालने और प्रदर्शन करने पर तुले हुए थे। जलूस को निकलना था और उधर पुलिस भी दमन के लिए तैयार थी। "साइमन लौट जाओ" और "वन्दे मातरम्" के गगन-भेदी नारों ने नगर को हिला कर रख दिया। लाला जी जलूस के आगे थे। एकाएक उन पर और जन-साधारण पर लाठियों की बरसात शुरू हो गई। लाला जी पर एक गोरे सार्जेंट ने भी लाठियां चलाई जिससे आपकी छाती पर गम्भीर चोटें आई।

उसी सायं सरकार के दमनचक्र के विरुद्ध रोष प्रकट करने के लिए एक विशाल जनसभा का आयोजन किया गया। इस अवसर पर लाला जी

ने अंग्रेजों को चेतावनी देते हुए कहा था—"मेरे शरीर पर लगी एक-एक लाठी ब्रिटिश साम्राज्य पर कफन में कील साबित होगी।"

लाठी प्रहार के पश्चात् आपका स्वास्थ्य दिन-प्रति-दिन गिरता गया, परन्तु फिर भी लाला जी देश सेवा के कार्यों में जुट रहे। १७ दिन के पश्चात् ही १७ नवम्बर के दिन लाला लाजपतराय अचानक चिरनिद्रा में सो गए। देश का जगमगाता सूर्य ६३ वर्ष की आयु में अस्त हो गया।

अपने बलिदान द्वारा लाला जी ने देश के नवयुवकों में चेतना का संचार किया, जिसके परिणामस्वरूप शीघ्र ही चन्द्रशेखर आजाद, राजगुरु, भगतसिंह और सुखदेव ने सांडर्स को गोली का निशाना बना कर लाला जी की मौत का बदला ले लिया।

लाला जी के सम्बन्ध में महात्मा गांधी ने अपने उद्‌गार प्रकट करते हुए कहा था, "लाला लाजपतराय अपने आप में एक संस्था थे। अपने यौवन काल से ही उन्होंने देश-भक्ति को अपना कर्म-क्षेत्र बना लिया था। आपकी राष्ट्रीयता, अन्तर्राष्ट्रीयता से परिपूर्ण थी। आपकी सेवाएं विविध थीं!"

आज यदि हम उन्हें अपनी सच्ची श्रद्धाजलि भेंट करना चाहते हैं तो हमें उन्हीं की भांति वीर, साहसी, पराक्रमी एवं कर्त्तव्यनिष्ठ बनना होगा। उनकी शिक्षाएं आज भी हमारे लिए उतनी ही आवश्यक हैं, जितनी उस समय थीं।

दयानन्द संस्थान के दो नये प्रकाशन

अंग्रेजी साहित्य
(उपलब्ध है)

दी हिस्ट्री ऑफ असैसिन्स ३०)

इन-साईड दी कांग्रेस ३०)

दोनों का सम्मिलित मूल्य ५०)
आदेश के साथ धन अग्रिम भेजें—

हिन्दी अनुवाद
(छप रहा है)

हत्यारों का इतिहास ४०)

काँग्रेस की अंतःकथा ४०)

दोनों का सम्मिलित मूल्य ८०)
आदेश के साथ धन अग्रिम भेजें...

पहासू (बुलन्दशहर) का दंगा

हुआ क्या ?

पहासू (बुलन्दशहर) १२० हजार की आबादी वाले कस्बे पहासू में हिन्दुओं के पवित्र त्यौहार विजयादशमी के दिन दो सम्प्रदायों के मध्य संघर्ष की चिनगारी के लिए मुस्लिम समाज व जिला प्रशासन दोषी है।

जो तथ्य उभरकर सामने आये हैं, उनसे स्पष्ट होता है कि अगर पुलिस ने प्रतिवर्ष की भांति निकाले गये काली मां के जलूस को नियत स्थान से पहले ही रोकने का प्रयास न किया होता तो शायद पहासू में साम्प्रदायिक त्यौहार तोड़ने वाली इस घटना से बचा जा सकता था। हुआ यह कि रामलीला का ही एक अंग काली मां का जलूस अपने पूर्व मार्ग पर जा रहा था जिसे पुलिस ने रास्ते में रोक दिया और वहीं से वापस होने को कहा। इस पर स्थानीय बुजुर्ग व्यक्तियों श्री रामलीला कमेटी के अधिकारियों आदि ने थाना अध्यक्ष को बताया कि प्रति-वर्ष जलूस हीरालाल खल-बिनौले वालों की दुकान तक जाता है और इस बार भी वहां तक जायेगा। मगर थानाध्यक्ष इस बात पर अड़गये कि जलूस इसी स्थान से वापस होगा। इस विवाद में लगभग बीस मिनट बीत गये इतने में ही एक मुस्लिम गुण्डे ने गोली चला दी। इसके साथ ही मुसलमानों के घरों की छतों पर से जलूस पर भारी पथराव शुरु हो गया, जिसमें थानाध्यक्ष सहित पाँच पुलिस कर्मी व २५ से अधिक व्यक्ति घायल हुए।

जिलाधीश जावेद उस्मानी का आतंक

जिलाधीश जावेद उस्मानी ने जब देखा कि दंगा भड़काने के आरोप में पुलिस ने कुछ मुस्लिम गुन्डों को गिरफ्तार कर लिया हैं तो उन्होंने दूर-दूर के ग्रामों के हिन्दू समाज के प्रतिष्ठित परिवारों के व्यक्तियों को पकड़वा-पकड़वाकर स्वयं डण्डों से पीटा और बिजली के शॉट लगवाये। पिटाई से दो वृद्ध सज्जनों के हाथों की हड्डियां टूट गयी। इसके अतिरिक्त उस्मानी ने ३४ ग्रामीण व्यक्तियों पर लूट मार, बलवा, डकैती आदि की संगीन धारायें लगवायी हैं। जिलाधीश का नगर व क्षेत्र में अब भी आतंक व्याप्त है।

हिन्दुत्व : मानव-कल्याण का विज्ञान

—आनन्द शंकर पंड्या

विचार अणुओं जैसे होते हैं जिनमें असीमित शक्ति के भण्डार छिपे होते हैं। दोनों अलक्षित रूप से, तथापि अत्यन्त बलवान् ढंग से काम करते हैं।

"स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है"—एक विचार था, जो लोकमान्य तिलक के दिमाग में पैदा हुआ। लेकिन इस विचार के गर्भ में जो क्रान्तिकारी शक्ति थी वह जब प्रस्फुटित हुई तो अन्ततोगत्वा उसने भारत को स्वतंत्र कर दिया, और लाखों सामान्य मर्त्य लोगों को अमर स्वतंत्रता सेनानी बना दिया।

आधुनिक जगत् के समूचे ढांचे और रास्ते को बदल देने की जिम्मेदारी प्रजातंत्र, समाजवाद और साम्यवाद के विचारों की थी।

केवल हिन्दू धर्म ही भारत और दुनिया को बचा सकता है और यह हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है कि हम हिन्दू धर्म की रक्षा करें—इस आशा से कि अगर ये दोनों विचार सर्वस्वीकृति पा जाते हैं और सब हिन्दुओं के दिमाग में जड़ जमा लेते हैं तो वे हमारे देश में एक सदाचारनिष्ठ क्रान्ति पैदा कर सकते हैं।

हिन्दू धर्म अपने इतिहास के एक सबसे अंधकारमय युग से होकर गुजर रहा है, क्योंकि आज औसत दर्जे के हिन्दू ने आधुनिक क्रान्तिकारी जगत् में अपने पड़ाव, अपने धार्मिक और आध्यात्मिक विश्वास खो दिए हैं। हिन्दुत्व के प्रति उसकी उदासीनता और उपेक्षा करीब-करीब चोटी तक पहुंच चुका है, क्योंकि सेकुलरिज्म (धर्मनिरपेक्षता) के एक गलत विचार ने उसके विचार करने और कल्पना करने के स्वाभाविक क्रम में गड़बड़ी पैदा कर दी है।

एक सामान्य हिन्दू की हिन्दुत्व की जानकारी अपर्याप्त है—इस तथ्य का स्वार्थी लोगों द्वारा मौका पड़ने पर सत्य को तोड़ने-मरोड़ने और हिन्दू समाज को पथभ्रष्ट करने के उद्देश्य से शोषण किया जाता रहा है।

अगर हिन्दुत्व और अपनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति को हमें बनाए रखना है तो सब हिन्दुओं के लिए वह समय आ गया है जब उन्हें यह जानना चाहिए कि वे अपने जीवन में कैसी भूमिका निभाएं ? इस जिम्मेदारी में प्रत्येक हिन्दू भागीदार है। लेकिन वह अपनी जिम्मेदारी तभी पूरी कर सकता है जब वह हिन्दुत्व के उच्च सौभाग्य पर अपनी श्रद्धा अविचल रखे। उसके धर्म को एक युक्तियुक्त आधार देकर और तर्कसंगत ढंग से उसे यह समझा कर कि उसे क्यों हिन्दुत्व की रक्षा करनी चाहिए, संभव है कि यह लेख अपने धर्म पर उसकी श्रद्धा को पुष्ट करने में सहायक हो सके।

हिन्दुत्व की दुखःदायी व्याधियाँ

हिन्दुत्व की अधिकतर दुखःदायी व्याधियों का मूलकारण हिन्दुओं में फूट, स्वा-अभिमान और आत्म-विश्वास का अभाव, असहायता की भावना पैदा करने वाली भाग्यवाद की एक धारणा, पिछले एक हजार वर्षों की गुलामी और विदेशी हमलावरों द्वारा हिन्दू संस्कृति के विनाश से पैदा बेसिर-पैर वाली विचारधारा है। इन वर्षों के अन्तराल में हिन्दुत्व की महानता और अलौकिकता को भूलने के लिए हिन्दुओं को मजबूर कर दिया गया। उन्हें बाहरी दुनिया से अपने प्राचीन सम्बन्ध और यह सत्य भी भूल जाने के लिए विवश कर दिया गया कि उनकी प्राचीन भाषा संस्कृत मंगोलिया से लेकर ईस्ट इंडीज पर्यन्त सब देशों में पढ़ी और अध्ययन की जाती थी। विदेशी हमलावरों द्वारा हिन्दुओं की अन्तरात्मा को पूर्णतया चेतनाशून्य कर दिया गया, जिन्होंने लाखों हिन्दुओं का धर्मपरिवर्तन छल, बल और धमकियों से कर डाला।

हमारे प्राचीन धर्म ग्रंथों में निर्दिष्ट हिन्दुत्व की सच्ची मूल्य की दीपज्योति पश्चिमी सभ्यता के नये सितारे की चमक-दमक में धुंधली पड़ गई और उन मूल्यों की या तो पूरी तरह उपेक्षा कर दी गई अथवा उन्हें पृष्ठभूमि में फेंक दिया गया।

चेतावनी अनसुनी कर दी गई

विवेकानन्द, गांधी, टैगोर जैसे अनेक सम्भ्रान्त हिन्दुओं को हिन्दू धर्म के लिए खतरे का पूर्वज्ञान हो गया उन्होंने चेतावनी दी, लेकिन दुर्भाग्यवश उसे अनसुनी कर दिया गया, क्योंकि हिन्दू जनता वेदों की शिक्षाओं को

भुला चुकी थी। वह अब भी अनसुनी की जा रही है।

यह दुर्भाग्य की बात है कि यद्यपि हमारे सभी नेता लोग भारतीय संस्कृति के गीत गाते हैं फिर भी वे इस सच्चाई को स्वीकार करने में शर्माते हैं कि भारतीय संस्कृति केवल हिन्दू संस्कृति ही है। अगर वे डा० ऐनी बिसेण्ट के इस विचार पर गौर करेंगे तो उनकी बड़ी भलमनसाहत होगी कि, "भारत के इतिहास, उसकी कलाओं, उसके दर्शन सबके आर-पार हिन्दुत्ववाद लिखा है।"

मैं झूठे धर्मनिरपेक्षेवाद के बाड़े से बाहर आ गया हूं क्योंकि उससे अधिक मुझे सत्य प्यारा है। मैं आशा करता हूं कि यह पुस्तक अनेक धनी, सम्भ्रान्त, सूक्ष्मग्राही, बुद्धिमान् और दूरदर्शी हिन्दू महानुभावों की अन्तरात्मा को ऊपर उठाएगी और हिन्दुत्व और इस प्रकार इन्सानियत को, क्योंकि बिना मानवधर्म वाले, मानव मूल्य के धर्म, हिन्दुत्व पर विचार किये इन्सानियत पर विचार करना असम्भव है, बचाने के लिए एक कार्यक्रम की योजना बनाने के लिए प्रेरणा देगी।

समय बड़ी तेजी से भाग रहा है और अगर "इसी समय" कुछ नहीं किया जाता तो भारत की अमूल्य बपौती की यादगार विस्मृति के अंधेरे में खो जाएगी। समय का यह एक शुभ चिन्ह है कि हिन्दू लोग अपनी संस्कृति और पूर्वजों की देन के प्रति जागरूक हो उठे हैं।

लोक सभा के चुनाव २४ और २७ दिसम्बर को

१३ नवम्बर को चुनाव आयोग के अध्यक्ष श्री राम कृष्ण त्रिवेदी ने घोषणा की कि लोक सभा के चुनाव के लिए मतदान २४ और २७ दिसम्बर को होंगे २८ दिसम्बर की शाम से चुनाव परिणाम घोषित होने लगेंगे। असम और पंजाब में स्थिती अशान्त है, इसलिय दो राज्यों में चुनाव अभी नही होंगे नामांकन पत्र भरनें की अन्तीम तारीख २७ नवम्बर है नामाकंनपत्रोंकी जाच २८ नवम्बर को होगी। ३० नवम्बर तक नाम वापस लिए जा सकते हैं

वैसे तो सभी आम चुनाव महत्वपुर्ण होते हैं, लेकिन विशेष परिस्थितिय के कारण इस चुनाव का असाधारण महत्व है।

साम्प्रदायिकता का सही अर्थ

—प्रदीप तिवारी

पिछले काफी समय से अपने देश में हिन्दू समाज व संगठन के कार्य में लगे व्यक्तियों को साम्प्रदायिक शब्द से बदनाम किया जाता रहा है। ऐसे आरोप लगाने वालों को साम्प्रदायिक शब्द की परिभाषा भी ठीक प्रकार से मालूम नहीं होगी, लेकिन हिन्दू समाज को साम्प्रदायिक कहना एक फैशन बन गया है। स्वर्गीय प्रधानमन्त्री जवाहर लाल नेहरू द्वारा हिन्दू-मुस्लिम दंगों को साम्प्रदायिक कहने से अभी तक यह शब्द प्रचलित है। साम्प्रदायिक का शाब्दिक अर्थ है "सम्यक् ज्ञान प्रदान करना।"

ऋषि-मनीषियों द्वारा शाश्वत, निरन्तर, अपरिवर्तनीय चरम सुख की अनुभूति कर जो खोज की गयी वह सम्यक् ज्ञान था। इस प्रकार से समय-समय पर अन्यान्य मनीषियों द्वारा चरम सुख की प्राप्ति हेतु जो-जो पद्धति सुझाई गयी वह उनका सम्प्रदाय बन गयी। इस प्रकार सम्प्रदाय हेतु आवश्यक तत्त्व, पहला—प्रवर्तक का होना। दूसरा—उसके अनुकरण करने वाले लोग। तीसरा—विशिष्ट पद्धति का होना। चौथा—मार्ग दर्शन हेतु विशिष्ट धर्मग्रन्थ।

जब उक्त आधार पर हम दुनिया के विभिन्न धर्मों तथा पद्धतियों का अध्ययन करेंगे तो देखेंगे कि ईसाई धर्म के प्रवर्तक ईसा मसीह, अनुकरण करने वाले लोग पाश्चात्य जगत्, विशिष्ट पद्धति गिरजाघर जाना तथा धर्मग्रन्थ बाइबिल हैं। मुस्लिम धर्म के प्रवर्तक हजरत मुहम्मद, अनुकरण करने वाले लोग मुस्लिम समाज, विशिष्ट पद्धति नमाज अदा करना, मस्जिद जाना तथा धर्मग्रन्थ कुरान शरीफ है। यहूदी धर्म के प्रवर्तक मूसा, अनुकरण करने वाले लोग यहूदी समाज, विशिष्ट पद्धति सिनेगाग पूजा स्थान तथा धर्म ग्रन्थ हैरोश तोरात है। पारसी धर्म के प्रवर्तक जरदुश्त, अनुकरण करने लोग पारसी समाज, विशिष्ट पद्धति अगियारी पूजा स्थान तथा धर्मग्रन्घ जेदावस्था है। कम्युनिस्टों के प्रवर्तक मार्क्स, अनुकरण करने वाले लोग कम्युनिस्ट, विशिष्ट पद्धति द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद तथा ग्रन्थ दास कैपिटल है।

इस आधार पर उपरोक्त सभी धर्म या वाद अपने आप में साम्प्रदायिक हैं। हिन्दू समाज "इन चारों तत्त्वों" की कसौटी पर साम्प्रदायिक नहीं है, क्योंकि उसका कोई एक निश्चित प्रवर्तक, ग्रन्थ या पूजा की विशिष्ट पद्धति

नहीं है। परन्तु अपने देश में विभिन्न सम्प्रदाय हैं जैसे जैन, सिख, बौद्ध; अद्वैत, द्वैत, वल्लभ, कबीरपंथी, मत आदि उपरोक्त सभी चारों तत्वों पर सही बैठते है।

उक्त सभी सम्प्रद्रायों में सामान्य गुण एक ही प्रकार के हैं। अब प्रश्न उठता है कि "हिन्दू या हिन्दुत्व क्या है?" मनुष्य अपूर्ण है। उसे परिपूर्णता तक पहुंचाने के लिए स्वार्थत्याग कर अर्थात् संकुचितता से विशालता अपनानी होगी जिसका रास्ता एक ही है। त्याग, प्रेम एवं सेवा जो प्रत्येक सम्प्रदाय में बताया गया है। साथ ही मानवीय गुणों से युक्त परिपूर्णता को प्राप्त करने के लिए एक ही जन्म पर्याप्त नहीं अतः पूर्वजन्म के सिद्धान्त के साथ-साथ कर्म सिद्धान्त को सभी ने स्वीकारा है।

उपरोक्त सभी गुण जो सभी सम्प्रद्रायों को एक माला की लड़ी के समान अपने आपमें संजोते हैं वह है "हिन्दुत्व" जिसमें दुनिया के सभी सम्प्रद्राय समाहित हैं। माला के विभिन्न सम्प्रदाय रुपी फूलों को एक सूत्र में बांधने का काम इस शब्द दिव्य "हिन्दुत्व" का ही हैं। अतः आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि कमजोर पड़ गये हिन्दुत्व रुपी सूत्र को मजबूत बनाया जाये। तभी कल्याण सम्भव है। □

हैदराबाद के आर्य सत्याग्रहियों को पेंशन विचाराधीन

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली ने हैदराबाद के आर्यसमाज के सत्याग्रहियों को अन्य रियासती आन्दोलनों की भांति पेंशन व सम्मान देने की मांग की है। प्रधानमन्त्री और गृहमंत्री को इस हेतु पत्र लिखे गये हैं।

सार्वदेशिक सभा की यह प्रवल कामना और प्रयत्न रहा है कि इस चुनाव वर्ष में आर्यसमाज के उन सत्याग्रहियों को भी राष्ट्रीय सम्मान मिले। इस सम्बन्ध में बराबर प्रयत्न किये जा रहे हैं और आशा है कि उसमें सफलता मिलेगी। मामला विचाराधीन तो है ही। इस आर्य सत्याग्रह में भाग लेने वालों को इस विषय में अपना पूर्ण विवरण यथा नाम, पिता का नाम, सत्याग्रह के समय और अब का निवास स्थान, गिरफ्तार होने और छूटने की तिथि तथा न्यायालय के आदेश की प्रमाणित प्रति और जेल में रहने व छूटने का प्रमाणपत्र तथा अन्य आवश्यक विवरण इस सभा में भेज देनी चाहिये, जिससे सरकारी घोषणा के बाद यथासंभव शीघ्र यह आवश्यक कार्रवाई की जा सके। यदि इस विषय में राज्य या केन्द्र की सरकार को आवेदन पहले दिया गया हो या उस पर निर्णय हुआ हो, तो उसकी प्रति भी भेजना उपयोगी होगा।

पंडिता राकेशरानी अलीगंज (एटा) में

(हमारे कार्यालय संवाददाता से)

अलीगंज (एटा)। दयानन्द संस्थान और अखिल भारतीय हिन्दू रक्षा समिति की अध्यक्षा पंडिता राकेशरानी ९ अक्तूबर को स्थानीय आर्यसमाज के वार्षिकोत्सव के अवसर पर यहां पधारी। उनकी बस उपःकाल में ४॥ बजे यहां पहुंची। इसके बावजूद ३०-४० व्यक्ति बस अड्डे पर उनके स्वागत के लिए उपस्थित थे। उसी दिन प्रातःकाल आर्यसमाज मन्दिर में उनका धार्मिक प्रवचन हुआ। उनके पूरे भाषण का स्वर यह था कि सत्य ही धर्म है।

दोपहर बाद बजे दो खुले मैदान में राष्ट्र रक्षा सम्मेलन आयोजित था। सम्मेलन में लगभग दस हजार की भीड़ को सम्बोधित करते हुए राकेशरानी जी ने कहा कि आज हिन्दू अपने ही देश में उपेक्षित हैं। देशद्रोहियों को खुली छुट्टी मिली हुई है और मुझ पर ३३ मुकदमे चलाये जा रहे हैं-केवल इसीलिए कि मैं हिन्दू हितों की आवाज बुलन्द करती हूं। हमने पंजाब और कश्मीर में प्रधानमन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी जी के पगों का समर्थन किया। हम इन्दिरा जी (अब स्वर्गीय) द्वारा देश हित उठाये गये प्रत्येक पग का समर्थन करेंगे। हमारा उनसे केवल इतना ही निवेदन है कि वे हिन्दू हितों की उपेक्षा न करें और हमारी आवाज दबाने की कोशिश न करें।

जनता — विशेष रूप से महिलाओं—की प्रबल मांग पर रात नौ बजे फिर राकेशरानी जी ने राष्ट्र की ज्वलन्त समस्याओं पर अपने ओजस्वी और सुलझे हुए विचार रखे। महिलाओं का उत्साह देखने योग्य था। भीड़ का कोई ठिकाना न था।

उनके विचारों से जनता में कुछ कर गुजरने का उत्साह पैदा हुआ। उन्होंने कहा कि वोट द्वारा जो हिन्दू हितों के लिये शासन में आकर कार्य करने को प्रमुखता दें उन्हें वोट दीजिये अन्य किसी को वोट मत दीजिये।

हिन्दू कह तो मारिय मुसलमान वी ना ।
पंज तत्त दा पुतला ते नानक मेरा नां ।।

जगत भिखारी फिरत है सबको दाता राम ।
कहु नानक मन सिमर तिह पूरन होवहि काम ।।

चिन्ता ताकी कीजिये जो अनहोनी होय ।
एहि मारग संसार को नानक थिर नहि कोय ।।

जो उपजियो सो विनस है परो काल के गाल ।
नानक हर गुन गाय ले छांड़ सकल जंजाल ।।

राम गयो रावण गयो जाको बहु परिवार ।
कहु नानक थिर कछु नहि सुपने जियु संसार ।।

झूठ बखान कहा करे जग सुपने जियु जात ।
इनमें कछ तेरो नहीं नानक कहियो बखान ।।

बिरथा कहो कोऊ सांचो निज मन की ।
लोभ ग्रसयो दसहु दिस धावत आस लगयो धन की

सग सखा सब तज गये कोऊ न निवाहियो साथ ।
कहूं नानक एहूं बिपत में टेक एक रघुनाथ ।।

—श्री गुरुनानक देव जी

'जो हमको हरमेस उचरि है ।
ते सब नरक कुंड महिं परि है ।।

—दशमेश गुरु गोविन्दसिंह जी महाराज

पंजाबी चन्दू हलवाई करांचीवाला

प्रधान कार्यालय—१८५, वालकेश्वर मार्ग, तीनवत्ती, बम्बई-४००००६

१. जावेरी बाजार २. ग्रांट रोड़ ३. कोलाबा ४. दादरा टी० टी० ५. वरल नाका ६. सर्कल ७. ठाकुर द्वार ८. सूर्योदय स्टोर, चर्च गेट ९. घाटकोपर (पश्चिम) १०. लिंकिग रोड़, बाँदरा ११. रेलवे स्टेशन के सामने सांताक्रुज (पश्चिम)

कारखाना—'चन्दू भवन' सुपर सिनेमा के पास ग्रांट रोड़

बम्बई-४००००७

पंजाब तूफान के दौर में :
पुस्तक मेरी दृष्टि में

पिछले दिनों पंजाब के सम्बन्ध में हिन्दी और अंग्रेजी में कई पुस्तकें सामने आई। पहले समझा कि अन्य पुस्तकों की तरह इसमें भी घटनाओं का या कुछ बड़े पत्रकारों के लेखों का संकलन मात्र होगा। पर उलट-पलट कर देखने पर क्षितीश जी द्वारा लिखित पुस्तक पंजाब तूफान के दौर में सदा से अनोखी लगी।

पहले तो इसके प्रतीकात्मक आवरण-पृष्ठ ने ही मोह लिया। फिर अन्तिम आवरण पर जो नजर पड़ी तो उसमें "क्या आप विश्वास करेंगे" के शीर्षक के नीचे दी गई बातें चौंकाने वाली लगी। उदाहरणार्थ, क्या आप विश्वास करेंगे कि—जलियांवाला बाग के हत्याकाण्ड के जिम्मेदार जनरल डायर को स्वर्ण मन्दिर में बुलाकर सरोपा भेंट किया गया था? २. महाराजा रणजीत सिंह के खालसाराज को समाप्त करने वाले लार्ड डलहौजी के स्वागत के लिए स्वर्ण मन्दिर में दीवाली मनाई गई थी? ३. स्वर्ण मन्दिर की चाबियां अंग्रेज सरकार को सौंप दी गई थीं? ४. सिंह सभा का सदस्य अंग्रेज बन सकता था, हिन्दुस्तानी नहीं? ५. अकाल-तख्त के ग्रन्थियों से ४ करोड़ रु० का सोना छीना गया था? इत्यादि। ये तथ्य एकदम स्तब्ध कर देने वाले थे। इसी आवरण पृष्ठ पर इतिहास के पन्नों में छिपे ऐसे ही अनेक रहस्यों के उद्घाटन का दावा किया गया है।

पुस्तक खोली तो जिल्द के फलैप पर ही यह दिखाई दिया—"पंजाब में क्या हुआ, क्यों हुआ, कैसे हुआ—इस सबके ऐतिहासिक विश्लेषण के साथ अब भविष्य में पंजाब सरकार और जनता को क्या करना चाहिए, इस सम्बन्ध में एक सही रचनात्मक दृष्टि इस पुस्तक में मिलेगी।

नतीजा, पुस्तक पढ़ने की तीव्र लालसा मन में जाग उठी। पुस्तक के प्रारम्भ में लेखक की ओर से "ओ नये सवेरे के उपासक!" शीर्षक से जो जन-गण-मन को सम्बोधन है, वह भी राष्ट्र की आत्मा में लेखक के अदम्य विश्वास का द्योतक है। इसके बाद तो पढ़नी शुरू की तो पहले अध्याय "वह काल रात्रि" नौबत क्यों आई" से लेकर अन्तिम अध्याय "नया सवेरा अभी अंधेरा "तब पढ़ता ही चला गया। बीच में कहीं पुस्तक छोड़ने को जी नहीं चाहा।

ऐतिहासिक तथ्यों का विवरण भी ऐसे क्रम से उन्मीलित होता है कि उसमें कहीं इतिहास की नीरसता नहीं रहती। कुशल पत्रकार की कलम से

इतिहास भी कितना रोचक हो सकता है। उपन्यास न होकर भी पुस्तक उपन्यास की तरह पाठक को बांधी रखती है।

गुरु नानक से लेकर अन्य गुरुओं तक पंथ किस रूप में विकसित होता गया, फिर भक्तिकाल में जन्मों एक आध्यात्मिक पन्थ को किस प्रकार दशमेश गुरु गोविन्दसिंह ने जुझारू खालसा सेना का रूप दिया, इसके बाद कैसे आस्था भटक कर फूट में बदलती गई, किस प्रकार अंग्रेजों ने छल करके सिखों को पटाया और मैकालिफ की माया ने पंथ को भरमाया, किस प्रकार गुरु सिंह सभा अलगाव का परचम लहराती रही और अकाली दल का एक वर्ग अपने जन्म काल से ही खालिस्तान की रणभेरी में फूंक मारता रहा, किस प्रकार आजादी के आन्दोलन में भी सिख-राजनीति अनेक नावों पर सवार होकर डांवाडोल होती रही—इस सबका लेखक ने अनेक अध्यायों में सरस किन्तु प्रामाणिक विवरण प्रस्तुत किया है।

मुझे विशेष प्रसन्नता यह देखकर भी हुई कि लेखक ने राष्ट्र भक्त नामधारी कूकाओं को विस्मृत नहीं किया और उसके लिए इतिहास का एक स्वर्णिम पृष्ठ' नाम से अलग अध्याय ही लिखना उचित समझा। आज की छिछली राजनीति ने उन वीर बलिदानियों की तो कथा ही आधुनिक पीढ़ी की आंखों से ओझल कर दी है। आश्चर्य है, उन राष्ट्र भक्त कूकाओं को भी 'पन्थ द्रोही' कहा गया था।

देश-विभाजन और स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सिख नेतृत्व किस प्रकार दिशा-हीनता की स्थिति में जीता रहा, किस प्रकार हरित क्रान्ति के पश्चात् नव-धनाढ्य तबके ने आर्थिक और औद्योगिक हितों की होड़ में हिन्दू विरोधी सरकार विरोधी और भारत-विरोधी रंग अपनाना प्रारम्भ किया और अपनी जमीन से उखड़े, विदेशों में बसे पेट भरे सिखों ने विदेशी शक्तियों की शह पर सिखों के लिए अलग राष्ट्र की मांग का नारा बुलन्द किया—और अन्त में आन्दोलन ने एक अन्तर्राष्ट्रीय षड्यन्त्र का रूप लेकर भिंडरावाले जैसे हिंसा के उपासक तत्वों को जन्म दिया—इसका विस्तार से वर्णन है।

अन्तिम अध्याय में लेखक ने अनेक रहस्यों का उदघाटन करते हुए कई निष्कर्ष निकाले हैं। उन निष्कर्षों से कोई पूरी तरह भले ही सहमत न हो, पर लेखक की ईमानदारी पर और उसकी राष्ट्रवादिता पर शंका करने की गुंजाइश नहीं। हिन्दी, हिन्दू, हिन्दुस्तान का समर्थक होते हुए भी लेखक ने कहीं साम्प्रदायिक कटुता नहीं आने दी है। बल्कि हिन्दी हिन्दू, हिन्दुस्तान को उसने नये राष्ट्रीय अर्थ दिये हैं। इसी अध्याय में लेखक ने अपनी ओर से ऐसे रचनात्मक सुझाव दिये हैं जिनमें से कुछ सरकार के लिए हैं और कुछ जनता के लिए जिन पर अमल करने से पंजाब में पुनः शान्ति और सौहार्द स्थापित हो सकता है।

—जयप्रकाश भारती

कार्तिक अंक से आगे

हत्यारों का इतिहास

तायर के पादरी विलियम और आका के पादरी जेम्स ने राजद्रोह के एक अवसर पर सन् ११७३ में पर्वत के वृद्ध पुरुष की ओर से यरुशलम के सम्राट् को जो पत्र भेजा जिसका सम्बन्ध हशीशिनों के उद्भव है, उसमें वैसे ही विचार प्रकट किये गये हैं, जो हमने प्राचीन स्रोतों से लिये हैं और पिछले अध्यायों में अपने पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किये हैं। उक्त पत्रों में कहा गया है कि "पहले हशीशिन मुहम्मदबाद के सिद्धान्तों के कठोरतम पालक थे। फिर एक ऐसा युग आया जब एक प्रतिभाशाली और विद्वान परमाधिकारी ने जो ईसाई मजेहब के नियमों और सिद्धान्तों से घनिष्ठ रूप से परिचित था, मुहम्मद की प्रार्थनाओं को उठा दिया, उपवासों का अन्त कर दिया और बिना किसी भेदभाव के सब को शराब पीने और सूअर का मांस खाने की अनुमति दे दी। उनके मजहब का बुनियादी नियम यह है कि अपने मठाधीश के प्रति अन्धा समर्पण भाव रखो। इसीसे शाश्वत जीवन प्राप्त होगा। इस शासक और अधिकारी को सामान्यतः वृद्ध मानव नाम से पुकारा जाता है। वह बगदाद (जबाल अथवा इराक-अजेमी) के पीछे की ओर स्थित ईरानी प्रान्त में रहता है। वहां (अलामुत में) युवकों को गुप्त नियमों और आनन्दों की शिक्षा दी जाती है, उन्हें विभिन्न भाषायें पढ़ाई जाती हैं और तब उन्हें खंजरों से ही हथियारबन्द करके दुनियाभर में भेजा जाता है, ताकि वे बेहतहशा ईसाइयों और सरासनों की हत्या करें—घृणा वश क्योंकि वे उनके संघ के शत्रु हैं अथवा अपने मित्रों को प्रसन्न करने के लिए अथवा इनाम के लिए इस कर्तव्य के पालन में जिन्होंने अपना जीवन बलिदान कर दिया, उनके बारे में यह फैसला दिया गया कि उन्हें बहिश्त में अधिक सुख मिलेगा, क्योंकि वे शहीद हैं, उनके बचे हुए सम्बन्धियों को उपहार दिये जायेंगे और यदि वे गुलाम हैं तो उन्हें रिहा कर दिया जावेगा

इस प्रकार बुरी तरह से पथभ्रष्ट इन युवकों ने दुनिया को रौंद डाला। वे हत्या के शौकीन थे। इन्हें जो खूनी आदेश दिये गये, उन्हे पूर्ण करने के लिए ये अपने बन्धुओं के मठ से निकले। ये विभिन्न रूपों और वेशों में प्रकट हुए—कई बार फकीरों के रूप में, कई बार व्यापारियों के रूप में—वस्तुतः इतने विभिन्न रूपों में और इतनी समझदारी और सावधानी के साथ कि भावी शिकारों के लिए छुरों से बचना असम्भव हो गया था। जनता की निम्नस्तरीय और ओछी भीड़ सुरक्षित रही, क्योंकि हशीशिन उन पर आक्रमण करना अपनी गरिमा से गिरी हुई बात समझते थे, लेकिन बड़े-बड़े लोगों और नरेशों के लिए कोई उपाय ही न था, सिवाय इसके कि वे एक बड़े मूल्य पर अपने प्राण गिरवी रख दें अथवा हमेशा हथियार बन्द और अपने रक्षकों द्वारा घिरे रहें और सतत चिंता की स्थिति में जिएं।"

यदि हम इन दोनों विद्वान पादरियों की रचनाओं में अंकित इन पैराग्राफों पर ध्यान देकर इनकी तुलना करें जो अर्थ में सहमत है और जिन्होंने अपना विवरण प्राच्य देशों के लेखकों से लिया है; तो हम पायेंगे कि उनमें कमियां तो हैं, लेकिन गलतियां नहीं। इनमें संक्षिप्त शब्दों में बताया गया है कि शुरू-शुरू में किस प्रकार इस्लामवाद में बताए गए कर्तव्यों को कठोरता से पालन किया जाता था, अन्तिम परमाधिकारियों हसन द्वितीय और मुहम्मद द्वितीय के आधीन दिये गए सब आदेश रद्द कर दिये गये, अन्धी आज्ञानुवर्तिता की शपथ ली गई, हशीशिनों के जत्थे बने, संघ की स्थापना हुई और उसके लिए हत्या की नीति अपनाई गई। वस्तुतः यह विचार करना कठिन है कि किस प्रकार यूरोपियन इतिहास लेखक, जो अब तक केवल बाइजांटाइन और जिहादियों के इतिहास लेखकों से सामग्री लेते रहे, किस दहराबेलाट और डेगिनिस ने हशीशिनों के नरेशों का एक सामान्य वंश मानलिया, जबकि यहां प्रत्येक बात एक संघ के अस्तित्व की ओर संकेत करती हैं—इस रूप में कि वे स्पष्टतः मठाधीश, मठ, परमाधिकारी, संघ के शासन और मजहब की बात करते हैं, जैसी हमें भी करनी चाहिए—हास्पिटलरोंके सरदारों, टयूटानिक सरदारों और लैम्पलरों के बारे में। प्रत्येक बात इस इतिहास के पिछले अध्याय की सामग्री से मेलखाती है। केवल एक परिस्थिति मेल नहीं खाती, जो उस समय सत्तारूढ़ परमाधिकारी के मजहब की व्यवस्थित योजना से सम्बन्धित है। यह है उस अधिकारी के बारे में, जो ईसाइयत का प्रेमी और धर्म परिवर्तन का इच्छुक था और जिसने इस आशय का सन्देश भेजा था। या तो जिहादियों ने अपने आपको इस धर्मपरायण गलती

से धोखा दिया कि क्योंकि परमाधिकारी ने इस्लामवाद को त्याग दिया है वह अवश्य ईसाईयत के सिद्धान्तों से सहमत हो गया होगा या फिर उसकी नीति उसे इस बात कि को प्रेरक होगी कि वह यरूशलम के सम्राट् को अपनी यह राय बनाये रखने के लिए प्रेरित करे, जिसके फलस्वरूप वह संघ का मित्र बना रहे या अन्तिम बात यह हो सकती है जो इन दोनों अनुमानों से अधिक सम्भव प्रतीत होती है कि यह अभियान अलामुत स्थिति परमाधिकारी की ओर से चालू न किया गया होगा अपितु सीरिया में संघ के परममठाधिकारियों और मसीयत के सम्राट रशीदुद्दीन सिनान की ओर से चालू किया गया होगा।

दूसरे व्यक्ति ने ही न कि पहले ने टैम्पलरों को वार्षिक खिराज अदा की होगी, जबकि दूतावास का मुख्य कार्य टैम्पलरों को हटाना था। रशीदुद्दीन के लेखों में जो बचे-खुचे इस्माईलियों द्वारा आज तक सीरिया में सुरक्षित हैं, लिखी बातों से हमारी राय को सर्वाधिक सम्भावना मिलती है। उनमें ईसाइयत के प्रत्यक्ष चिह्न आर इसकी धार्मिक पुस्तकों से परिचय मिलता है।

बसरा के सुलेमान का पुत्र रशीदुद्दीन अबुलहशु सिनान ने दम्भ किया कि वह स्वयं देवता का अवतार है। वह हमेशा बालों से बने खुरदरे वस्त्र पहने रहता था। उसे कभी किसी ने खाते, पीते, सोते, अथवा थूकते नहीं देखा। एक चट्टान के शिखर पर से वह सूर्योदय से सूर्यास्त तक जनता को उपदेश दिया करता था। चिरकाल तक उसके श्रोता उसे वरिष्ठ व्यक्ति समझते रहे। लेकिन जब उसके श्रोताओं को पता चला कि एक बड़े भूकम्प में एक पत्थर से घायल हो जाने के कारण वह लंगड़ाकर चलता है, उसके चरित्र और जीवन की पवित्रता करीब करीब नष्ट हो गई। लोग चाहने लगे कि इस जालसाज की हत्या कर दी जाये। उसने उन्हें शिक्षा दी कि वे धैर्य रखें। वह उस चट्टान से नीचे उतर आया जहां से उसने चिरकाल तक एक स्तम्भ निवासी के नाते उपदेश दिया था। उसने अपने श्रोताओं को राजभोज के लिए निमन्त्रित किया और वह अपनी वक्तृत्वशक्ति के बल पर उन्हें इस बात के लिए प्रेरित करने में सफल हो गया कि वे उसे वरिष्ठ मानकर उसकी आज्ञाकारिता और स्वामिभक्ति की शपथ लें। जब ईरान में इस्माईलियों के परमाधिकारी ने सब रहस्यों पर से पर्दा हटा दिया और ऐसा करके संघ की आधारशिलाओं को कमजोर कर दिया; तब उसने अपने आप को देवदूत के प्रभामंडल मंडित करने और सीरिया में अपने अधिराज्य को मजबूत करने के लिए अवसर का लाभ उठाया।

इस कारण प्राच्य इतिहास लेखक उसे सर्व सम्मति से सीरिया में इस्माईली सिद्धान्तों का मुखिया मानते हैं और उस देश में जो इस्माईल हैं, वे आज तक उसके लेखों को सैद्धान्तिक मानकर उनका आदर करते हैं। इन लेखों में परस्पर विरोधी विश्वास के लेख हैं, जिन्हें सम्भवतः लाक्षणिक तौर पर ही समझा जा सकता है। इनमें कुरान और ईसाई मजहब से तोड़े-मरोड़े गये वाक्य समूह हैं, भजन, स्तुतियां, उपदेश प्रार्थनाएं और रस्मोरिवाज सम्बन्धी आदेश हैं। यह कठिन था कि इन्हें इनके प्रारम्भिक पवित्र रूप में सुरक्षित रखा जाता। यह निश्चित है कि हम तक पहुंचते-पहुंचते इनमें बाद की शताब्दियों के अन्धविश्वास और अज्ञान मिल गये होंगे—ड्रूसेस की पुस्तकों की तरह जो अब उतनी ही कम अवगत हैं जितने इस्माईली अपने प्रवर्त्तक की भावना से। अपने मूल सिद्धान्तों के बारे में उनका ज्ञान अत्यन्त अपूर्ण है और उनमें लाक्षणिक सिद्धान्तों की परम्परा नहीं रही। इससे सिद्ध होता है कि यह समीयत का परममठाधिकारी रशीदुद्दीन सिनान ही था न कि अलामुत का समकालीन परमाधिकारी, जिसने येरुशलम के सम्राट अमौरी के शासन के बाद के वर्षों में एक दल कुशल और वाग्मी व्यक्ति बहाउद्दौलत को इस गुप्त प्रस्ताव के साथ राजदूत बनाकर भेजा कि यदि टैम्पलर जो पहाड़ों पर उनके निकटसमवर्त्ती पड़ौसी थे, इसाई बन जायें, तो वह उन्हें दो हजार अशर्फियां प्रति वर्ष की राशि से मुक्त कर देगा और उसके साथ शान्ति और क्षांतृभाव से रहेगा। सम्राट् अमौरी ने राजदूत का प्रसन्नता पूर्वक स्वागत किया, अपनी जेब से टैम्पलरों को दो हजार अशरफियों की राशि का वह धन देने का वचन दिया, जिससे छुटकारे के लिए टैम्पलरों ने प्रार्थना की थी। कुछ समय तक अपने साथ रखने के बाद उसने उसे पथ प्रदर्शकों और रक्षकों के साथ इस्माईली सीमा तक भिजवा दिया हूँ वे त्रिपोली का क्षेत्र पार कर चुके थे और इस प्रकार अपने प्रथम दुर्गों के समीप पहुच चुके थे, जो तारतोसा अथवा अन्तोरादास के समीपवर्त्ती पहाड़ों पर स्थित हैं, जब अचानक टैम्पलरों का एक जत्था अपने गुप्त स्थान से निकला और उसने एक राजदूत की हत्या कर दी।

इस प्रकार इन सरदारों ने, जिन पर यह सन्देह था कि वे गुप्त रूप से इस्लाईमियों से मिले हुए हैं और उनके सिद्धान्तों के अनुयायी हैं, इसी प्रकार अपने आपको हशीशिन घोषित कर दिया। दोनों के मजहब में जानबूझकर की गई हत्या की समानता का बन्धन था। इस शोकान्त नाटक का अभिनेता वाल्टर द डुमेसनिल था। वह दुष्ट और एकाक्षी व्यक्ति था, लेकिन

वह अत्याचारपूर्ण यह कार्य व्यक्तिगत द्वेष के उद्देश्य से नहीं करता था, अपितु अपनी बिरादरी के लोगों की जानकारी में और परमाधिकारी ओडो सेंट अमांद के आदेश पर करता था और संघ का बदला लेने के लिए करता था। इसका प्रेरक कारण केवल एक हो सकता था (कोई अन्य नहीं था) कि हशीशिनों ने अपने आप को टैम्पलरों को दी जा रही दो हजार अशरफियों की वार्षिक खिराज की अदायगी से मुक्ति प्राप्त करने का प्रयत्न किया था—या तो पड़ोसियों से शान्ति बनाये रखने के लिए या की गई सेवाओं के मुआवजे के तौर पर— उदाहरणर्थ जैसा इस प्रसंग में बताया जाता है—उन्होंने अपने सहज रक्षक मिस्री सुलतान के विरुद्ध अभियान में में भाग लेने से इनकार कर दिया था।

सम्राट् इस अत्याचार पर अत्यधिक रुष्ट हुआ, जिससे उसके ईसाई नाम के सम्मान और उसकी अपनी गरिमा को गहरा धक्का लगा। उसने अपने शासन के नरेशों को जमा किया, ताकि अपनाये जाने वाले उचित उपायों के बारे में उनसे उचित परामर्श किया जा सके। उनका सर्वसम्मत फैसला यह था कि मजहब और शाही सत्ता को समान रूप से चोट पहुंची है और दंड दिये बिना इस हत्या को यों ही नहीं जाने दिया जा सकता। परिषद् ने मामदून के सीहर और तुरहोल के गाट्सचाक को सम्राट् और शासन की ओर से भेजा कि वह ऐसे जघन्य कृत्य के लिए ओदोद सेंट अमांद से स्पष्टीकरण मांगे। ओदो घमंडी और बदमाश था। वह न भगवान् से डरता था और न इन्सान से। उसने घमंड और क्रोध से उबलते हुए उत्तर दिया कि वह पहले ही भाई डुमेसनिल पर प्रायश्चित्त डाल चुका है। वह उसे पवित्र पादरी के साथ भेज देगा, जिसने उसे कह रखा है कि वह उससे हिंसात्मक बरताव न करे। इसी प्रकार उसने आवेश में अनेक अन्य ऐसी ही बातें कहीं। लेकिन सम्राट् ने बाद में सिडोन में परमाधिकारी और अनेक टैम्पलरों से भेंट की, परिषद् आयोजित की, हत्यारे पर घोर विश्वासघात का आरोप लगाया, उसे अस्पताल से घसीट कर लाया गया और बेड़ियां डालकर टायर की अंधेरी कोठरी में डाल दिया गया। कुछ ही समय बाद सम्राट् की मृत्यु हो गई और इस प्रकार वह दंड उसे बच गया, जिसका वह उचित रूप से अधिकारी था।

दूसरी ओर परमाधिकारी भी मौत के मुंह में पहुंच गया। सलाहुद्दीन ने सिडोन के युद्ध में उसे बन्दी बना लिया था, जिसमें कोठरी हार के लिए उसे दोषी ठहराया गया था। वह उसी वर्ष अपनी अंधेरी में मर गया। किसी ने उस पर दया न की। वस्तुतः ऐसा प्रतीत होता है कि सम्राट् को हशीशिनों की

दृष्टि में दोषमुक्त घोषित कर दिया गया था। लेकिन उसे ईसाई मजहब में लाने की आशा न रही और अब फिर जिहादियों के नरेशों के विरुद्ध उनकी तलवारें म्यान से बाहर निकल आईं, जैसे वे चिरकाल से मुस्लिम सरदारों के विरुद्ध निकली हुई थीं। बयालीस वर्ष पूर्व उन्होंने त्रिपोली के सरदार रेमांड की हत्या की थी, जब उसने नमाज में अपना सिर झुका रखा था। इस प्रकार बलिवेदी को रक्त रंजित किया गया था। ईसाई सरदारों से तलवारों की यह लम्बी विराम सन्धि टायर के सम्राट् कोनरड और मांटफरेंट के मार्किव की अत्याचारपूर्ण हत्या के साथ समाप्त हो गई। यूरोप और एशिया दोनों के इतिहासों में इंग्लैंड के रिचार्ड पर आरोप लगाया जाता है। कि वह हशीशिनों की तलवारों द्वारा इस कार्रवाई में सहभागी अथवा इसे उकसाने वाला था।

हम संकोच के साथ इस अपराध की परिस्थितियों और उद्देश्यों की ओर संकेत कर रहे हैं, जो जिहादियों के प्रथम नायकों में से एक की शानदार ख्याति से जुड़े हुए हैं। इस धब्बे को न तो उसकी सैनिक शान और नहीं जाली दस्तावेज किसी निष्पक्ष लेखक की दृष्टि से मिटा सकते हैं। पर्वत के वृद्ध व्यक्ति का तथाकथित पत्र, जिसे रिचार्ड के पक्षधरों ने तैयार किया था, ताकि उसे हत्या के अपराध से दोषमुक्त किया जा सके, उल्टे उसके विरुद्ध प्रमाण बनकर खड़ा है। कारण यह कि यह सिद्ध हो चुका है कि यह स्पष्टतः मनगढ़न्त और जाली है। यह पत्र कानून के नाम पर शपथ से प्रारा-म्भ होता है और सैल्युसिदे के युग के अनुसार डाली गई तारीख से समाप्त होता है। ये दोनों बातें विचित्र हैं और इस्माईलियों ने कभी नहीं सुनीं, क्यों-कि उस समय वे खुल्लमखुल्ला कानून को रौंदते थे और हिज्री कालानुक्रम के स्थान पर हसन द्वितीय की तख्तनशीनी से काल गणना करते थे। (इस्लाम-वादी देशों में एकमात्र अन्य वैकल्पिक कालगणना हिज्री ही थी।)

उन्होंने इस समय को कानून के उन्मूलन का युग बना दिया था। लेखक का पर्वत के वृद्ध व्यक्ति मसीयत के काल का बताने से वस्तुतः कुछ भी सिद्ध नहीं होता—न तो रिचार्ड के पक्ष में और न उसके विरुद्ध, बल्कि इससे उस सम्पत्ति के सही होने की सम्भावना कुछ-कुछ बढ़ जाती है, जो हमने प्रकट की है कि जिहादियों को सुदूर वर्त्ती अलामुत के परमाधिकारी की जानकारी न थी, बल्कि वे मसीयत के परमाधिकारी को निश्चित रूप से पर्वत का वृद्ध व्यक्ति समझते थे। नायक के प्रति पक्षपात के इस अप्रामाणिक लेख के सारांश के अनुसार यह हत्या जिसे इतना उछाला गया, संघ के प्रतिशोध का केवल एक

उदाहरण था। मार्क्विस ने अपने एक भाई को लूटा और उसकी हत्या कर दी, जिसका जहाज टायर में नष्ट कर दिया गया और राजदूत संघ की ओर से वांछित तसल्ली देने की वजाय धमकी दी गयी थी कि उसे समुद्र में फेंक दिया जायेगा। उस समय से मार्क्विस की हत्या का फैसला कर लिया गया और दो भाइयों ने उसे टायर में विशाल जनसमूह की उपस्थिति में फांसी पर चढ़ा दिया।

ट्रैविथ के निकोलस की इस लातीनी रचना में, जो उसने स्वयं लिखी अथवा जिसे रिचार्ड के दल ने विश्वसनीय माना, केवल वही अंश सच है, जो हत्या की परिस्थितियों के वारे में है। दो हशीशिनों ने भिक्षुओं का वेष धारण करके मार्क्विस पर आक्रमण किया। वे छिपकर टायर के बाजार में उसके पास गये थे। न केवल पश्चिमी अपितु पूर्वी लेखकों ने भी लिखा है कि इन हत्याओं के लिए भड़काने वाला इंग्लैंड का सम्राट् रिचार्ड क्रूर दलायन था। अलवरिक देस ट्राइसफांटेनस स्पष्टतः इसकी पुष्टि करता है, लेकिन जिन लोगों को इसमें सन्देह है, उनके लिए ट्रैविथ के निकोलस का प्रतिवाद पूर्वी इतिहास लेखकों की निष्पक्ष साक्षी के भार से उसके आरोपों का समभार माना जा सकता है। यदि पलड़ा रिचार्ड के विरुद्ध न झुके तो भी। यरूशलम और हेब्रान के इतिहास का, जो जिहादियों के इतिहास के लिए प्रामाणिक रचना है, मार्क्विस की हत्या शीर्षक के अन्तर्गत स्पष्टतः और निश्चिततः लिखा है कि "मार्क्विस रवीनलेवल महीने की तेरह तारीख को टायर के पादरी से मिलने गया था। वापसी पर दो हत्यारों ने उस पर आक्रमण किया—अपने खंजर उसे घोंप दिये। जब वे पकड़ लिये गये और उन्हें यातनायें दी गई, तब उन्होंने कबूल किया कि इंग्लैंड के सम्राट ने उन्हें इस काम पर लगाया था। उन्हें यन्त्रणाएं देकर मौत के घाट उतार दिया गया।

उसी पुस्तक में रिचार्ड की धूर्तता और विश्वासघात के और भी उदाहरण दिये गये हैं, जिससे उसके चरित्र पर बहुत गहरे धब्बे लगते हैं और इस सन्देह को पुरी तरह पुष्ट करते हैं कि वह इस हत्या में सहायक था। इस प्रकार प्रतीत होता है कि टायर के मार्क्विस के एक निकट सम्बन्धी आस्ट्रिया के लियोपोल्ड ने उसे जेल में डाल कर उससे अपने सम्बन्धी की हत्या का बदला लिया।

जबकि अंग्रेजों ने अपने सम्राट् को हत्या के सन्देह से मुक्त करने के लिए और उसे उसकी कैद से शीघ्र रिहा कराने के लिए पर्वत के वृद्ध व्यक्ति का आस्ट्रिया के लियोपोल्ड के नाम उपरिलिखित पत्र जबरदस्ती लिखवाया,

उसी समय और उसी विचार से उन्होंने एक अन्य जाली पत्र तैयार करवाया, जिसके बारे में न्यूबरी के विलियम ने लिखा है कि वह परमाधिकारी द्वारा फ्रांस के सम्राट् फिलिप आगस्टस को भेजा गया। पहले पत्र की ही तरह इस पत्र के अग्रभाग पर जाली निशान थे। इसमें हशीशिनों के परमाधिकारी को स्वयं को लिखने को विवश किया गया है। हम इतने भोले नहीं कि इस कथन पर विश्वास करने की गलती करें। इस स्पष्टतः अप्रामाणिक लेखन में पर्वत का वृद्ध व्यक्ति फ्रांस के सम्राट् को आश्वस्त करता है कि उसके दिमाग में यह बात कभी नहीं आई कि रिचार्ड की इच्छा पर हशीशिनों को राजा की हत्या के इरादे से फ्रांस भेजे।

यह पत्र, जिसका झूठ प्रथम पत्र के झूठ से भी अधिक स्पष्ट है, रिचार्ड को दोषमुक्त करने की बजाय सिद्ध करता है कि मांटफॅरट के मार्क्विस की हत्या के कारण उस पर फ्रांस के सम्राट् की हत्या के प्रयत्न का भी सन्देह होने लगा है। फिलिप आगस्टस का इतिहासकार रिगार्ड लिखता है कि जब सन् ११९२ में सम्राट् पांटायस में था और जब उसे फिलस्तीन से आये पत्रों से इस बात से अवगत कराया गया कि रिचार्ड ने उसकी हत्या की योजना बनाई, उसने अपनी सुरक्षा के लिए एक अंग रक्षक नियुक्त किया, जिसके हाथ में लोहे का मुद्‌गर दिया गया और विलियम ब्वायर्ट, जिसने एक शताब्दी बाद पद्य में इतिहास लिखा, हशीशिनों की सारी हत्या प्रणाली को इंग्लैंड के सम्राट् के सिर थोपता है, जिसने युवकों को इस बात के लिए प्रशिक्षित किया कि वे उसके क्रूर आदेशों के अन्धानुकरण का नियम पालें, ताकि फ्रांस के सम्राट् को कुरबान किया जा सके, जिसपर फ्रांस के सम्राट् ने अपने रक्षक नियुक्त किये। यदि ये सावधानियां अकारण और आवश्यकता से अधिक भी थीं, इसकी आवश्यकता इसीलिए पड़ी कि रिचार्ड के कार्यों और चरित्र का पता चल गया। इस प्रकार मांटफरट के कोनराड की हत्या के फलस्वरूप इंग्लैंड के सम्राट् को आस्ट्रिया में कैद करना पड़ा और इसी कारण से सम्राट् के लिए पहली बार अंग रक्षक नियुक्त करना पड़ा।

सम्भवतः यह अनुपादेय और निरर्थक कार्य लगे कि हशीशिनों के संघ द्वारा १००१ वीं हत्या को तर्क संगत करने का प्रयत्न किया जाये, जबकि उन पर एक हजार हत्याएं खुल्लमखुल्ला करने का अभियोग हो, लेकिन निष्पक्षता का कर्त्तव्य सत्य के प्रति निष्ठावान् इतिहास लेखक पर यह उत्तरदायित्व डाल देता है—चाहे वह अभियुक्त को न तो दोष मुक्त

घोषित करे और न उसकी निन्दा करे। क्या संघ ने फिलिप आगस्टस के रूप में एक अधिक सम्राट के प्राण लेने का प्रयत्न किया या एक कस के— क्या परमाधिकारी ने हत्यारों के खंजरों के लिए दिशा निर्देश किया, इस बात का महत्व बहुत कम रह जाता है कि निजी प्रतिशोध की भावना से प्रेरित होकर अथवा रिचार्ड की इच्छा पर मांटफैरट के मार्क्विस की हत्या किसने की। हत्या में किसी अन्य की भागीदारी अपराध के दोष को कम नहीं कर देती।

इस लिए हम यह जांच करने के लिए नहीं रुकेंगे कि आया अरब हशोशिन, जो सन् ११५८ में मिलान के घेरे के दौरान फ्रेडरिक बार्बारोसा के शिविर में मिला और जिस के बारे में शाह को समय पर चेतावनी मिली, स्पेन से आया या सीरिया से, उसे पोप से धन मिलता था याइस माईलियों से या फ्रेडरिक की नियति पर्वत के वृद्ध व्यक्ति का शिकार बनने की थी अथवा सात पहाड़ियों के वृद्ध व्यक्ति का। फिलस्तीन और इटली में अपने अभियानों के कारण, काफिरों और पोप की सत्ता के विरुद्ध उस के आन्दोलनों के कारण बगदाद और रोम दोनों के मुख्य पादरी उससे समान रूप से डरते थे और उसके देहान्त पर तिगरीस का खलीफा उतना ही खुश था, जितना टाइबर का खलीफा।

लेकिन जो किसी अत्याचार के कारण लाभान्वित होता है, अनिवार्यत उसपर उस अत्याचार की योजना बनाने का आरोप नहीं लगाया जा सकता:। लायन्स की धर्मसभा में निष्पाप पोप चतुर्थ ने बार्बारोसा के पौत्र फ्रेडरिक द्वितीय पर अभियोग लगाया था कि उसने बवेरिया के ड्यूक की हत्या के लिए हशीशिनों की नियुक्ति की। उसे जाति बहिष्पत कर दिया गया, जब कि फ्रेडरिक से बोहेमियां के सम्राट को लिखे एक पत्र में आस्ट्रिया के ड्यूक पर अभियोग लगाया कि उसने भी उसके (फ्रेडरिक के) विरुद्ध ऐसे इरादे बनाये थे। तथापि ये अभियोग अभियुक्तों के दोष को सिद्ध नहीं करते अपितु हशीशिनों के अपराध को ही सिद्ध करते हैं। कोनराड, मांटफैरेट और टायर के मार्क्विस एवं रशीदुद्दीन सिनान के देहान्त के दो वर्ष बाद शैम्पन के काउंट हेनरी अपनी आर्मीनिया यात्रा के लिए जाते समय हशीशिनों के क्षेत्र के समीर से होकर गुजरे। रशीदुद्दीन सिनान के उत्तराधिकारी पर मठाधिकारी ने उनके स्वागत के लिए प्रतिनिधि भेजे और वापसी पर उन्हें अपना किला देखने का निमन्त्रण दिया। काउंट ने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया और वे आये भी। परममठाधिकारी तुरन्त उनसे

मिले और उन्होंने उनका सम्मानपूर्वक स्वागत किया। हर चौकी पर दो श्वेतवस्त्रधारी रक्षक खड़े थे, जिन्हें बाद में गुप्त सिद्धान्तों में दीक्षित कर लिया गया। परममठाधिकारी ने काउंट से कहा कि ईसाई अपने सम्राटों के जितने आज्ञाकारी हैं, ये लोग उसकी अपेक्षा मेरे अधिक आज्ञाकारी हैं। संकेत मिलाते ही उनमें से दो तुरन्त किले के शिखर पर से कूद पड़े और नीचे गिरकर टुकड़े-टुकड़े हो गये। आश्चर्य चकित काउंट को सम्बोधित करते हुए परममठाधिकारी ने कहा कि "यदि आप चाहें तो मेरे सब श्वेत वस्त्रधारी रक्षक इसी प्रकार प्राचीर से कूद सकते हैं। काउंट ने मना कर दिया और मान लिया कि वह अपने सेवकों से ऐसी आज्ञाकारिता पर निर्भर नहीं कर सकता।

कुछ देर किले में ठहरने के बाद प्रस्थान के समय उसे उपहारों से लाद दिया गया और विदाई के समय परममठाधिकारी ने उसे कहा कि इन वफादार नौकरों के जरिये वह संघ के शत्रुओं को हटा देता है। अन्ध समर्पण के इस भयानक उदाहरण से परममठाधिकारी ने दिखा दिया कि वह हूबहू संघ के संस्थापक के चरणचिह्नों पर चल रहा है, जिसने मलिकशाह के राजदूत को अपने वफादार अनुयायियों की वफादारी का ऐसा ही सबूत दिया था। सेलाजुकियों के सुलतान जलालुद्दीन मलिकशाह ने उसकी आज्ञाकारिता और स्वामिभक्ति की मांग करने के लिए उसके पास एक राजदूत भेजा था। साना के पुत्र ने अपने अनेक दीक्षितों को अपने हजूर मेतलब किया। उनमें से एक को सम्बोधित करते हुए उसने कहा कि "अपनी हत्या कर डालो! "उसने तुरन्त अपने आपको छुरा घोंप लिया। दूसरे को सम्बोधित करते हुए उसने कहा कि "प्राचीर पर से छलांग लगा दो!" अगले ही क्षण उसका शव क्षतविक्षत दशा में खाई में पड़ा था। इस पर परमाधिकारी ने राजदूत की ओर, जो आतंक से हतोत्साह न हुआ, मुड़ते हुए कहा कि "इस प्रकार सत्तर हजार वफादार प्रजाजन मेरी आज्ञा का पालन करते हैं। तुम्हारे मालिक को मेरा यही जवाब है।

क्योंकि पूर्वी देशों और जिहादियों के इतिहास लेखक अपने वृत्तान्त में सहमत हैं, हम इस एक बात को छोड़कर कि सत्तर हजार हशीशिनों की संख्या अत्यधिक है, (तायर के पादरी विलियम ने यह संख्या साठ हजार बताई है और आका के पादरी जेम्स ने चालीस हजार)। इस संख्या में न केवल दीक्षित सम्मिलित किये गये होंगे, अपितु संघ के धर्मनिरपेक्ष प्रजाजन

भी।) हम इस घटना के सम्बन्ध में कोई युक्ति युक्त सन्देह नहीं कर सकते—वैसे ही जैसे हत्या के दीक्षार्थियों के शिष्यत्व और अनुशासन के सम्बन्ध में, जिनके बारे में विवरण देने वाला प्रथम व्यक्ति वेनिस का यात्री मार्को पोलो था, जो अपने समय में बदनाम था और बाद में भी प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने जिसपर सन्देह किया लेकिन। क्योंकि यह वृत्तान्त प्रत्येक स्थल में पूर्वी देशों के स्रोतों से मिलता है, इसलिए मार्को पोलो के वृत्तान्त को नई प्रामाणिकता मिल जाती है और हेरोडोटस की तरह, उसकी भी प्रामणिकता शताब्दियों तक सन्दिग्ध मानी जाने के बाद प्राचीन इतिहास के जनक और आधुनिक यात्राओं के जनक की सचाई दिन प्रतिदिन पूर्वी देशों के लेखकों के सर्वसम्मत साक्षी के फलस्वरूप अधिकाधिक उज्जवल चमक के साथ चमकती है। हशीशिनों के ईरानी और असीरियाई क्षेत्र के केन्द्रों में अर्थात् अलामुत और मसीयत में दीवारों और शानदार बागीचों से घिरे एक स्थान में सही अर्थों में पूर्वी देशों के स्वर्ग थे। फूलों की क्यारियां थीं, फलदार वृक्षों के झुरमुट थे, जिनके बीच-बीच में नहरें थीं, छायादार सड़कें थीं और हरे भरे वन पथ थे, जहां पग-पग पर झिलमिल करती नदी में बुलबुले उठते थे, गुलाब के फूलों के कुंज थे, अंगूर के बाग थे, शानदार हॉल कमरे थे, चीनी मिट्टी की छतरिया थीं, जो ईरानी कालीनों और बढ़िया साज-सामान से सजी हुई थीं, जहां उपधिलिखित कीमती सामान से बनी तश्तरियों पर सोने, चाँदी और बिल्लौर के शराब पीने के जाम थे, सुन्दर लौंडियां और मनोहर लौंडे थे, जिनकी आंखें काली थीं और जो मुहम्मद के बहिश्त की हूं हूरों की तरह सम्मोहक थे, जो इतने ही मुलायम थे, जितने वे गद्दे, जिन पर वे विश्राम करते थे और जो उतने ही नशीले थे, जितनी वह शराब, जो वे पेश करते थे। वीणा का संगीत पक्षियों के गीतों से मिल जाता था। और गायिका के मधुर स्वर सरिताओं की कलकल ध्वनि से समस्वर होती थी। हर चीज से खुशी, मस्ती और कामुकता के श्वास निकलते थे।

जो युवक अपनी शक्ति और दृढ़ संकल्प के कारण हशीशिनों की सेवा के लिए दीक्षित किये जाने योग्य समझा जाता था, उसे परमाधिकारी अथवा परममठाधिकारी से बातचीत के लिए मेज के पास बुला लिया जाता था। इसके बाद उसे हशीश खिलाकर नशे में धुत कर दिया जाता था और बाग में ले जाया जाता था। जागने पर वह पाता था कि वह बहिश्त के इतने मजे ले चुका होता था, जितने मजों का वादा पैगम्बर ने सौभाग्य-

शालियों के लिए किया है और जितने मजे लेने की उसमें सामर्थ्य होती थी; हूरों की आंखों से निस्तेज करने वाली खुशियों के घूंट पीने और चमकीले प्यालों से नशीली शराब पीने के बाद वह दुर्बलता और अफीम खाने से पैदा तन्द्रा में डूब जाता था। कुछ घंटे बाद उस तन्द्रा से जागने पर वह अपने आपको पुनः अपने अधिकारियों के समीप पाता था। वे अधिकारी उसे यह समझाने का प्रयत्न करते थे कि शारीरिक दृष्टि से वह अपने पुराने शरीर में है, लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से वह बहिश्त के प्रति समर्पित हैं। उसने उस आनन्द का पूर्व स्वाद ले लिया है, जो उन दीनदारों की प्रतीक्षा कर रहा है, जिन्होंने अपना जीवन अपने दीन की सेवा और अपने अधिकारियों के आज्ञापालन के लिए समर्पित कर दिया है।

इस प्रकार ये उन्मत्त युवक आंखें मूंदकर अपने आप को हत्या का हस्तक बना देते थे और शाश्वत जीवन भोगने के लिए अपने भौतिक जीवन की बलि चढ़ाने के लिए अवसर की तलाश में रहते थे। कुरान में मुहम्मद ने मुसलमानों से जो वादा किया है—जो अनेक लोगों को सुन्दर स्वप्न और कोरा वादा प्रतीत होता है—उन्होंने यथार्थ में उसका मजा ले लिया है और बहिश्त की खुशियों ने उन्हें दोजख लायक काम करने को प्रेरित किया है। यह जालसाजी छिपी न रह सकी और चौथे परमाधिकारी ने अपवित्रता के सब रहस्य जनता के समक्ष प्रकट करने के बाद उन्हें सम्भवतः यह भी बताया कि बहिश्त में क्या-क्या खुशियां मिलती हैं। इस संसार जिन लोगों को पहले ही सब तरह के भोग भोगने की इजाजत है, उनके लिए बहिश्त की इन खुशियों का आकर्षण बहुत कम है। अब तक जो बात खुशियां हासिल करने का साधन थीं, यह अब स्वयं साध्य बन गई अफीम के नशे ने आसमानी खुशियों के बसाने का रूप ले लिया, जिन आसमानी खुशियों के उपयोग के लिए वे शक्ति चाहते थे।

आज तक कुस्तुन्तुनिया और काहिरा बताते हैं कि हशीश के साथ अफीम का सेवन करने से कैसी अविश्वसनीय खुशी हासिल होती है, जिससे तुर्क तन्द्रा में पड़कर ढीठ हो जाता है और अरब की कल्पना शक्ति की अग्नि प्रज्वलित हो जाती है। वहां यह भी पता चलता है कि किस आवेग के साथ उन युवकों ने इन भड़कीली टिकियों (हशीश) की खुशियां हासिल करने की कोशिश की और इनसे उनमें कितना विश्वास जागा कि वे कोई-सी भी और कुछ भी चीज ले सकते हैं। इन टिकियों के इस्तेमाल के कारण हशीशिन कहलाये, जो यूनानियों और जिहादियों द्वारा उच्चारित किये जाने पर असैसिन हो गया। [अंग्रेज भाषा में] हत्या का पर्यायवाची होने के कारण वे इस शब्द ने यूरोप की सब भाषाओं में संघ के इतिहास को अमर कर दिया है।

संपादक मुद्रक व प्रकाशक पंडिता राकेश रानी द्वारा
जन-ज्ञान मुद्रणालय दिल्ली-३६ में छपा।

सन् १९८५ का कलेंडर पांच रंगों में

मूल्य डेढ़ रुपया : एक सौ रु. सैकड़ा

एक प्रति मंगाये या दस डाक प्रेषण व्यय ६) रु० लगेगा। ३१ दिस० तक १) रु० प्रति ही मिलेगा।

नये वर्ष की वैदिक डायरी

मूल्य आठ रुपया : ५०० रु. सैकड़ा

३१ दिसम्बर तक मंगाने पर पांच रु. में ही

प्रेषण व्यय पृथक्

आदेश के साथ कम से कम चौथाई अग्रिम धन भेजने की कृपा करें। रेलवे स्टेशन लिखें।

प्रत्येक हिन्दू परिवार में होना ही चाहिए

पवित्र धर्म-ग्रन्थ : परमात्मा की अमरवाणी

चारों वेदों का हिन्दी भाष्य

मंत्र-शब्दार्थ-भावार्थ-छन्द-स्वर-देवता आदि सहित

लागत मूल्य : ५०० रु०

किन्तु प्रचार के लिए

पुस्तकालय संस्करण : २७५ रु०

उपहार संस्करण : लागत मूल्य : १,००० रु०

अभी केवल ७०० रुपये में लीजिये।

आदेश के साथ ५० रु० अग्रिम भेजें। रेलवे स्टेशन लिखें।

अध्यक्ष, दयानन्द संस्थान

१५६७, हरध्यानसिंह मार्ग, करौलबाग, नई दिल्ली-५

दूरभाष : ५६२६३९-५६४७४१-८०१२११

जन-ज्ञान (मासिक) D—C—201/Regd. No. 107119/65
वेद मन्दिर, पो० बा० बलीपुर, दिल्ली-३६ नवम्बर १९८४

23 आयुर्वेदिक जड़ी बूटियों से बनाया हुआ
दाँतों के लिए

आपके घर का डाक्टर

एम डी एच

दंत मंजन
(लौंग युक्त)

प्रतिदिन प्रयोग करने से जीवनभर दांतों की प्रत्येक बीमारी से छुटकारा। दांत दर्द, मसूड़े फूलना, गरम ठंडा पानी लगना, मुख-दुर्गन्ध और पायरिया जैसी बीमारियों का एक मात्र इलाज।

सोल डिस्ट्रीब्यूटर्स

महाशियां दी हट्टी (प्रा.) लि.

9/44 इण्ड. एरिया, कीर्ति नगर, नई दिल्ली-15 फोन : 539609, 534093

हर केमिस्ट व प्रोविज़न स्टोर्स से खरीदें।